पथ के दावेदार

शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

पथ के दावेदार

भारतीय ग्रंथ निकेतन द्वारा प्रकाशित

प्रसाद का साहित्य

कविता

कामायनी
आँसू
झरना
लहर
महाराणा का महत्व
प्रेम पथिक

नाटक

चन्द्रगुप्त
स्कंदगुप्त
अजातशत्रु
ध्रुवस्वामिनी
जनमेजय का नागयज्ञ
राज्यश्री
विशाख
कामना
एक घूंट

उपन्यास

कंकाल
तितली
इरावती

कहानी-संग्रह

छाया
इंद्रजाल
आकाशदीप
प्रतिध्वनि
आंधी

निबंध

काव्य और कला तथा अन्य निबंध

प्रसाद ग्रंथावली चार भाग

मुंशी प्रेमचन्द का साहित्य

उपन्यास

कर्मभूमि
कायाकल्प
ग़बन
गोदान
निर्मला
प्रतिज्ञा
प्रेमाश्रम
मनोरमा
रंगभूमि
रूठी रानी और प्रेमा (दो उपन्यास)
वरदान
सेवा सदन

कहानी-संग्रह

मानसरोवर—आठ भाग

नाटक

कर्बला
संग्राम

1576

पथ के दावेदार

शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय

भारतीय ग्रन्थ निकेतन
2713, कूचा चेलान, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

८९१.४४३
श ३३१ प

डा. डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय
९९५२

प्रकाशक : भारतीय ग्रंथ निकेतन,
2713 कूचा चेलान, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002
प्रकाशन वर्ष : 1988
मूल्य : 50.00
मुद्रक : रूबी प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-110032

PATH KE DAVEDAR : SHARAT CHANDRA CHATOPADAYAYA

एक

अपूर्व के मित्र मज़ाक करते, "तुमने एम० एस-सी० पास कर लिया, लेकिन तुम्हारे सिर पर इतनी लम्बी चोटी है। क्या चोटी के द्वारा दिमाग में बिजली की तरंगें आती जाती रहती हैं ?"

अपूर्व उत्तर देता, "एम० एस-सी० की किताबों में चोटी के विरुद्ध तो कुछ लिखा नहीं मिलता। फिर बिजली की तरंगों के संचार के इतिहास का तो अभी आरम्भ ही नहीं हुआ है। विश्वास न हो तो एम० एस-सी० पढ़ने वालों से पूछ कर देख लो।"

मित्र कहते, "तुम्हारे साथ तर्क करना बेकार है।"

अपूर्व हंसकर कहता, "यह बात सच है, फिर भी तुम्हें अकल नहीं आती।"

अपूर्व सिर पर चोटी रखे, कालेज में छात्रवृत्ति और मेडल प्राप्त करके परीक्षाएं भी पास करता रहा और घर में एकादशी आदि व्रत और सन्ध्या-पूजा आदि नित्य कर्म भी करता रहा। खेल के मैदानों में फुटबाल, क्रिकेट, हाकी आदि खेलने में उसका कितना उत्साह था, प्रातःकाल मां के साथ गंगा स्नान करने में भी उससे कुछ कम नहीं था। उसकी सन्ध्या-पूजा देख कर भौजाइयां मज़ाक करतीं, बबुआजी पढ़ाई-लिखाई तो समाप्त हुई अब चिमटा-कमंडल लेकर संन्यासी हो जाओ। तुम तो विधवा ब्राह्मणी से भी आगे बढ़े जा रहे हो।"

अपूर्व हंसकर कहता, "आगे बढ़ जाना आसान नहीं है भाभी। माताजी के कोई बेटी नहीं है। उनकी उम्र भी काफी हो चुकी है। अगर बीमार पड़ जायेंगी तो पवित्र भोजन बनाकर तो खिला सकूंगा। रही चिमटा-कमंडल की बात, सो वह तो कहीं गया नहीं ?"

अपूर्व मां के पास जाकर कहता, "मां, यह तुम्हारा अन्याय है। भाई जो चाहें करें लेकिन भाभियां तो मुर्गा नहीं खातीं। क्या तुम हमेशा अपने हाथ से ही भोजन बनाकर खाओगी ?"

मां कहती, "एक जून एक मुठ्ठी चावल उबाल लेने में मुझे कोई तकलीफ नहीं होती। और जब हाथ-पांव काम नहीं करेंगे तब तक मेरी बहू घर में आ जाएगी।"

अपूर्व कहता, "तो फिर एक ब्राह्मण पंडित के घर से बहू-मंगवा क्यों

नहीं देतीं ? उसे खिलाने की सामर्थ्य मुझ में नहीं है—लेकिन तुम्हारा कष्ट देखकर सोचता हूं कि चलो भाइयों के सिर पर भार बन कर रह लूंगा।"

मां कहती, "ऐसी बात मत कह रे अपूर्व, एक बहू क्या, तू चाहे तो घर भर को बैठाकर खिला सकता है।"

"कहती क्या हो मां ? तुम सोचती हो कि भारतवर्ष में तुम्हारे पुत्र जैसा और कोई है ही नहीं ?"

और यह कह कर वह तेज़ी से चला जाता।

अपूर्व के विवाह के लिए लोग बड़े भाई विनोद का आकर परेशान करते। विनोद जाकर मां से कहता, "मां, कौन-सी निष्ठावान जप-तपवाली लड़की है, उसके साथ अपने बेटे का ब्याह करके किस्सा खत्म करो। नहीं तो मुझे घर छोड़कर भाग जाना पड़ेगा। बड़ा होने के कारण लोग समझते हैं कि घर का बड़ा-बूढ़ा मैं ही हूं।"

पुत्र के इन वाक्यों से करुणामयी अधीर हो उठी। लेकिन बिना विचलित हुए मधुर स्वर में बोली, "लोग ठीक ही समझते हैं बेटा। उनके बाद तुम ही तो घर के मालिक हो। लेकिन अपूर्व के सम्बन्ध में किसी को वचन मत देना। मुझे रूप और धन की आवश्यकता नहीं है। मैं स्वयं देख-सुन कर तय करूंगी।"

"अच्छी बात है मां। लेकिन जो कुछ करो, दया कर के जल्दी कर डालो," कह कर विनोद रूठकर चला गया।

स्नान घाट पर एक अत्यन्त सुलक्षणा कन्या पर कई दिन से करुणामयी ही नजर पड़ रही थी। वह अपनी मां के साथ गंगा स्नान करने आती थी। उन्हीं की जाति की है, गुप्त रूप से वह पता लगा चुकी थीं। उनकी इच्छा थी कि अगर तय हो जाए तो आगामी बैसाख में ही विवाह कर डालें।

तभी अपूर्व ने आकर एक अच्छी नौकरी की सूचना दी।

मां प्रसन्न होकर बोली, 'अभी उस दिन तो पास हुआ है। इसी बीच तुझे नौकरी किसने दे डाली ?"

अपूर्व हंसकर बोला, "जिसे ज़रूरत थी।" यह कह कर उसने सारी घटना विस्तार से बताई कि उसके प्रिंसिपल साहब ने ही उसके लिए यह नौकरी ठीक की है। वोथा कम्पनी ने बर्मा के रंगून शहर में एक नया कार्यालय खोला है। वह किसी सुशिक्षित और ईमानदार बंगाली युवक को उस कार्यालय को सारा उत्तरदायित्व देकर भेजना चाहती है। रहने के लिए मकान और चार-सौ रुपए माहवार वेतन मिलेगा। और छै महीने के

बाद वेतन में दो सौ रुपए की वृद्धि कर दी जायेगी।"

बर्मा का नाम सुनते ही मां का मुंह सूख गया : "बोली, पागल तो नहीं हो गया ? तुझे वहां भेजूंगी ? मुझे ऐसे रुपए की ज़रूरत नहीं है।"

अपूर्व भयभीत होकर बोला, "तुम्हें न सही, मुझे तो है। तुम्हारी आज्ञा से भी भीख मांग कर जिन्दगी बिता सकता हूं लेकिन जीवन भर ऐसा सुयोग फिर नहीं मिलेगा। तुम्हारे बेटे के न जाने से बोथा कम्पनी का काम रुकेगा नहीं। लेकिन प्रिंसिपल साहब मेरी ओर से वचन दे चुके हैं। उनकी लज्जा की सीमा न रहेगी। फिर घर की हालत तो तुमसे छिपी नहीं है मां।"

"लेकिन सुनती हूं वह म्लेच्छों का देश है।"

अपूर्व ने कहा, "किसीने झूठ मूठ कह दिया है। तुम्हारा देश तो म्लेच्छों का देश नहीं है। फिर भी जो मनमाना करना चाहते हैं उन्हें कोई रोक नहीं सकता।"

"मैंने तो इसी बैसाख में तेरा विवाह करने का निश्चय किया है।"

अपूर्व बोला, "एकदम निश्चय ? अच्छी बात है। एक दो महीने बाद जब तुम बुलाओगी, मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन करने आ जाऊंगा।"

करुणामयी बाहर से देखने में पुराने विचारों की अवश्य थी लेकिन बहुत ही बुद्धिमती थी। कुछ देर मौन रहकर बोली, "जब जाना ही है तो अपने भाइयों की सहमति भी ले लेना।"

यह कुल गोकुल दीघी के सुप्रसिद्ध बंद्योपाध्याय घराने में से है। वंश परम्परा से ही वे लोग अत्यन्त आचार परायण कहलाते हैं। बचपन से जो संस्कार उनके मन में जम गए थे—पति, पुत्रों ने जहां तक लांछित और अपमानित करना था किया। लेकिन अपूर्व के कारण वे सब कुछ सहन करती हुई इस घर में रह रही थीं। आज वह भी उनकी आंखों से दूर अनजाने देश जा रहा है। इस बात को सोच-सोचकर उनके भय की सीमा नहीं रही। बोली, "अपूर्व मैं जितने दिन जीवित रहूं, मुझे दुख मत देना बेटे," कहते कहते उनकी आंखों से दो बूंद आंसू टपक पड़े।

अपूर्व की आंखें भी गीली हो उठीं। बोला, "मां, आज तुम इस लोक में हो लेकिन एक दिन जब स्वर्गवास की पुकार आयेगी, उस दिन तुम्हें अपने अपूर्व को छोड़कर वहां जाना होगा। मेरे जाने के बाद तुम यहां बैठ-कर मेरे लिए आंसू मत बहाती रहना," इतना कह कर वह दूसरी ओर चला गया।

उस दिन सांझ के समय, करुणामयी अपनी नियमित सन्ध्या-पूजा आदि कार्यों में मन नहीं लगा सकीं। अपने बड़े बेटे के कमरे के दरवाज़े पर

चली गईं। विनोद कचहरी से लौटकर जलपान करने के वाद क्लब जाने की तैयारी कर रहा था। मां को देखकर एक दम चौंक पड़ा।

करुणामयी ने कहा, "एक बात पूछने आई हूं, विनू!"

"कौन सी बात मां?"

यहां आने से पहले मां अपनी आंखों के आंसू अच्छी तरह पौंछ कर आई थी। लेकिन उनका रुंधा गला छिपा न रह सका। सारी घटना और अपूर्व के मासिक वेतन के बारे में बताने के बाद उन्होंने चिन्तित स्वर में पूछा, "यही सोच रही हूं बेटा कि इन कुछ रुपयों के लोभ में उसे भेजूं या नहीं।"

विनोद धीरज खो बैठा। शुष्क स्वर में बोला, "मां, तुम्हारे अपूर्व जैसा लड़का भारतवर्ष में और दूसरा नहीं है। इस बात को हम सभी मानते हैं। लेकिन इस धरती पर रह कर इस बात को माने बिना भी नहीं रह सकते कि पहले चार सौ, फिर छै महीने में दो सौ रुपए और—वह इस लड़के से बहुत बड़ा है।"

मां दुखी होकर बोली, "लेकिन सुनती हूं कि वह तो एकदम मलेच्छों का देश है।"

विनोद ने कहा, "मां, तुम्हारा जानना-सुनना ही तो संसार का अन्तिम सत्य नहीं हो सकता।"

पुत्र के अन्तिम वाक्य से मां अत्यन्त दुखी होकर बोली, "बेटा, जब से समझदार हुए, इसी एक ही बात को सुन-सुनकर भी जव मुझे चेत नहीं हुआ तो इस उम्र में और शिक्षा मत दो। मैं यह जानने नहीं आई कि अपूर्व का मूल्य कितने रुपए है। मैं केवल यह जानने आई थी कि उसे इतनी दूर भेजना उचित होगा या नहीं?"

विनोद ने दाएं हाथ से मां के चरण स्पर्श कर के कहा, "मां, मैंने तुम्हें दुखी करने के लिए यह नहीं कहा। यह सच है कि पिताजी के साथ ही हम लोगों का मेल बैठता था और उनसे हम लोगों ने सीखा है कि घर-गृहस्थी के लिए रुपया होना कितना आवश्यक है। इस हैट कोट को पहन कर विनू इतना बड़ा साहब नहीं बन गया कि छोटे भाई को खिलाने के डर से उचित-अनुचित का विचार न कर सके। लेकिन फिर भी कहता हूं कि उसे जाने दो। देश में जैसी हवा वह रही है इससे वह कुछ दिनों के लिए देश छोड़कर, कहीं दूसरी जगह जाकर काम में लग जाए तो इसमें उसका भी हित होगा और परिवार की रक्षा भी हो जायगी। तुम तो जानती हो मां, उस स्वदेशी आन्दोलन के समय वह कितना छोटा था। फिर भी उसीके प्रताप से पिताजी की नौकरी जाने की नौबत आ गई थी।"

करुणामयी बोली, "नहीं, नहीं—अब अपूर्व वह सब नहीं कर सकता।"

विनोद बोला, " मां, सभी देशों में कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनकी जाति ही अलग होती है। अपूर्व उसी जाति का है। देश की मिट्टी ही इसके शरीर का मांस है, देश का जल ही इनकी धमनियों का रक्त है। देश के विषय में इनका विश्वास कभी मत करना मां, नहीं तो धोखा खाओगी। बल्कि अपने इस मलेच्छ विनू को, अपने उस चौटीधारी गीता पढ़े एम० एस-सी० पास अपूर्व से अधिक ही अपना समझना।"

पुत्र की इन बातों पर मां ने विश्वास तो नहीं किया लेकिन मन ही मन शंकित हो उठी। देश के पश्चिमी क्षितिज-पर जो भयानक मेघ के लक्षण प्रकट हुए हैं, उसे वे जानती थी। याद आया कि उस समय तो अपूर्व के पिता जीवित थे, लेकिन अब नहीं हैं।

विनोद ने मां के मन की बात जान ली। लेकिन क्लब जाने की जल्दी में बोला, "अच्छा मां, वह कल ही तो जा नहीं रहा। सब लोग बैठ कर जो निश्चय करेंगे, कर लेगे," कह कर तेजी से बाहर निकल गया।

दो

अपने ब्राह्मणत्व की बड़ी सतर्कता से रक्षा करते हुए अपूर्व एक जलयान द्वारा रंगून के घाट पर पहुंच गया। वो था कम्पनी के एक दरबान और एक मदरासी कर्मचारी ने अपने इस नए मैनेजर का स्वागत किया तीस रुपए महीने का एक कमरा आफिस के खर्चे से यथासम्भव सजा हुआ तैयार है, यह समाचार देने में उन लोगों ने देर नहीं की।

समुद्र यात्रा की झंझटों के बाद वह खूब हाथ-पैर फैलाकर सोना चाहता था। ब्राह्मण साथ था। घर में अत्यन्त असुविधा होते हुए भी इस भरोसे के आदमी को साथ भेजकर मां को बहुत कुछ तसल्ली मिल गई थी। केवल ब्राह्मण रसोइया ही नहीं बल्कि भोजन बनाने के लिए कुछ चावल दाल, घी, तेल, पिसा हुआ मसाला यहां तक कि आलू-परवल तक वे साथ देना नहीं भूली थीं।

गाड़ी आ जाने पर मदरासी कर्मचारी तो चले गए लेकिन रास्ता

दिखाने के लिए दरबान साथ चल दिया। दस मिनट में ही गाड़ी जब मकान के सामने पहुंचकर रुकी तो तीस रुपए किराए के मकान को देख कर अपूर्व हतबुद्धि सा खड़ा रह गया।

मकान बहुत ही भद्दा है। छत नहीं हैं। सदर दरवाजा नहीं है। आंगन समझो या जो कुछ, इस आने जाने के रास्ते के अलावा और कहीं तनिक भी स्थान नहीं है। एक संकरी काठ की सीढ़ी, रास्ते के छोर से आरम्भ होकर सीधी तीसरी मंजिल पर चली गई है। इस पर चढ़ने उतरने में कहीं अचानक पैर फिसल जाए तो पहले पत्थर के बने राजपथ पर फिर अस्पताल में और फिर तीसरी स्थिति का न सोचना अच्छा है। नया आदमी है इसलिए हर कदम बड़ी सावधानी से रखते हुए दरबान के पीछे-पीछे चलने लगा। दरबान ने ऊपर चढ़ने के बाद दांयी ओर में दो मंजिले के एक दरवाज़े को खोलकर बताया।

"साहब, यही आपके रहने का कमरा है।"

दायीं ओर इशारा करके अपूर्व ने पूछा "इसमें कौन रहता है?"

दरबान बोला, 'एक चीनी साहब है।"

अपूर्व ने पूछा, 'ऊपर तिमंजले पर कौन रहता है?"

दरबान ने कहा, "एक काले काले साहब हैं।"

कमरे में कदम रखते ही अपूर्व का मन बहुत ही खिन्न हो उठा। लकड़ी के तख्ते लगाकर एक दूसरे की बगल में छोटी-बड़ी तीन कोठरियां बनी हुई हैं। इस मकान की सारी चीजें लकड़ी की हैं। दीवारें-फर्श छत और सीढ़ी—सभी लकड़ी की हैं। आग की याद आते ही सन्देह होता है कि इतना बड़ा और सर्वांग सुन्दर लाक्षागृह तो सम्भव है दुर्योधन भी अपने पांडव भाइयों के लिए न बनवा सका होगा। इसी मकान में इष्ट-मित्र, आत्मीय-स्वजनों, मां और भाभियों आदि को छोड़कर रहना पड़ेगा। अपने को संभालकर, थोड़ी देर इधर-उधर घूमकर हर चीज को देखकर तसल्ली हुई कि नल में अभी तक पानी है। स्नान और भोजन दोनों ही हो सकते हैं। अपूर्व ने रसोइए से कहा, "महाराज, मां ने तो सभी चीजें साथ भेजी हैं। नहाकर कुछ बना लो। तब तक मैं दरबान के साथ सामान ठीक कर लूं।"

रसोई में कोयला मौजूदा था। लेकिन चूल्हे में कालिख लगी थी। पता नहीं इसमें पहले कौन रहता था और क्या पकाया था। यह सोच कर उसे बड़ी घृणा हुई। महाराज से बोला, "एक उठाने वाल दम चूल्हा होता तो बाहर वाले कमरे में बैठकर कुछ दाल-चावल बना लिया जाता लेकिन कौन जाने, इस देश में मिलेगा या नहीं।"

दरवान बोला, "पैसे दीजिए, अभी दस मिनट में ले आता हूं।"

वह रुपया लेकर चला गया।

तिवारी रसोई बनाने की व्यवस्था करने लगा और अपूर्व कमरा सजाने में लग गया। काठ के आले पर कपड़े सजाकर रख दिए। बिस्तर खोलकर चारपाई पर बिछा दिया। एक नया टेबल क्लाथ मेज पर बिछाकर उस पर लिखने का सामान और कुछ पुस्तकें रख दीं। उत्तर की ओर खुली खिड़की के दोनों पल्लों को अच्छी तरह खोलकर उसके दोनों कोनों में कागज ठूंस कर सोने वाले कमरे को सुन्दर बनाकर विस्तर पर लेटकर सुख की सांस ली।

दरवान ने लोहे का चूल्हा ला दिया। तभी याद आया मां ने सिर की सौगन्ध देकर पहुंचते ही तार करने को कहा था। इसलिए दरबान को साथ लेकर चटपट बाहर निकल गया। महाराज से कहता गया कि एक घंटे से पहले ही लौट आऊंगा।

आज किसी ईसाई त्यौहार के उपलक्ष में छुट्टी थी। अपूर्व ने देखा यह गली देशी-विदेशी साहब मेमों का मुहल्ला है। यहां के प्रत्येक घर में विलायती उत्सव का कुछ न कुछ चिन्ह अवश्य दिखाई दे रहा है अपूर्व ने पूछा, "दरवानजी, सुना है यहां बंगाली भी तो बहुत हैं। वे किस मुहल्ले में रहते हैं?"

उसने वताया कि यहां मुहल्ले जैसी कोई व्यवस्था नहीं है। जिसकी जहां इच्छा होती है, वहीं रहता है। लेकिन अफसर लोग इसी गली को पसन्द करते हैं। अपूर्व भी अफसर था। कट्टर हिन्दू होते हुए भी किसी धर्म के विरुद्ध भावना नहीं थी। फिर भी स्वयं को ऊपर-नीचे, दांए-बांए, भीतर-बाहर, चारों ओर से ईसाई पड़ोसियों के करीब देख अत्यन्त घृणा अनुभव करते हुए उसने पूछा, "क्या किसी दूसरे स्थान पर घर नहीं मिल सकेगा?"

दरवान बोला, "खोजने से मिल सकता है। लेकिन इतने किराए में ऐसा मकान मिलना कठिन है।"

अपूर्व जब तारघर पहुंचा तो तारबाबू खाना खाने चले गए थे। एक घंटे प्रतीक्षा करने के बाद जब आए तो घड़ी देखकर बोले, "आज छुट्टी है। दो बजे आफिस बन्द हो गया।"

अपूर्व ऊंची आवाज में बोला, "यह अपराध आपका है। मैं एक घंटे से बैठा हूं।"

बाबू बोला, "लेकिन मैं तो सिर्फ दस मिनट हुए यहां से गया हूं।"

अपूर्व ने उसके साथ झगड़ा किया। झूठा कहा, रिपोर्ट करने की

धमकी दी। लेकिन फिर बेकार समझकर चुप हो गया। भूख-प्यास और क्रोध से जलता हुआ बड़े तारघर पहुंचा। वहां से अपने निर्विघ्न पहुंचने का समाचार जब मां को भेज दिया तब उसे सन्तोष हुआ।

दरवान ने विनय भरे स्वर में कहा, "साहब, हमको भी बहुत दूर जाना है।

अपूर्व ने उसे छुट्टी देने में कोई आपत्ति नहीं की। दरवान के चले जाने के बाद घूमते-घूमते, गलियों का हिसाब करते-करते, अन्त में मकान के सामने पहुंच गया।

उसने देखा तिवारी महाराज एक मोटी लाठी पटक रहे हैं और न जाने क्या अंट-शंट बकते-झकते ज़ा रहे है।

साथ ही एक दूसरे व्यक्ति तिमंज़िले से हिन्दी और अंग्रेजी में इसका उत्तर भी दे रहे हैं और घोड़े के चाबुक से बीच-बीच में सट-सट का शब्द भी कर रहे हैं। तिवारी उसे नीचे उतरने को कह रहे हैं और वह उनको ऊपर बुला रहा है। और शिष्टाचार के इस आदान-प्रदान में जिस भाषा का प्रयोग हो रहा है उसे न कहना ही उचित है।

अपूर्व ने सीढ़ी पर से तेजी से ऊपर चढ़कर तिवारी का लाठी वाला हाथ ज़ोर से पकड़कर कहा, "क्या पागल हो गया है ?" इतना कहकर उसे ठेलता हुआ घर के अन्दर ले गया। अन्दर आकर वह क्रोध, क्षोभ और दुख से रोते हुए बोला, "यह देखिए, उस हरामजादे ने क्या किया है।

उस कांड को देखते ही अपूर्व की थकान, नींद, भूख और प्यास एकदम हवा हो गई। खिचड़ी के हांडी से अभी तक भाप तथा मसाले की भीनी-भीनी गन्ध निकल रही है। लेकिन उसके ऊपर, नीचे, आस-पास, चारों ओर पानी फैला हुआ है। दूसरे कमरे में जाकर देखा, उसका साफ-सुथरा बिछौना मैले काले पानी से सन गया है। कुर्सी पर पानी, टेबल पर पानी, यहां तक कि पुस्तकें भी पानी में भीग गई हैं।

अपूर्व ने पूछा, "यह सब क्या हुआ ?"

तिवारी ने दुर्घटना का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए बताया —

अपूर्व के जाने के कुछ देर बाद ही साहब घर में आए। आज ईसाइयों का कोई त्यौहार है। पहले गाना-बजाना और फिर नृत्य आरम्भ हुआ और जल्दी ही दोनों के संयोग से यह शास्त्रीय संगीत इतना असह्य हो उठा कि तिवारी को आशंका होने लगी कि लकड़ी की छत साहब का इतना आनंद शायद सहन न कर पायेगी। तभी रसोई के पास ऊपर से पानी गिरने लगा ? भोजन नष्ट हो जाने के भय से तिवारी ने बाहर जाकर इसका विरोध किया। लेकिन साहब चाहे काला हो या गोरा—देशी आदमी की

ऐसी अभद्रता नहीं सह सकता। वह उत्तेजित हो उठा और देखते-ही-देखते अन्दर जाकर बाल्टी पर बाल्टी पाना ढरकाना आरम्भ कर दिया। इसके बाद जो कुछ हुआ वह अपूर्व ने अपनी आंखों से देख लिया।

कुछ देर मौन रहकर अपूर्व बोला, "साहब के कमरे में क्या कोई और नहीं है।

"शायद कोई हो। कोई उस पियक्कड़ साले के साथ दांत किट-किट कर तो रहा था।" अपूर्व समझ गया कि किसी ने उसे रोकने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। लेकिन हम लोगों के दुर्भाग्य को तिल भर भी कम नहीं कर सका।

अपूर्व चुप रहा। जो होना था हो चुका था। लेकिन अब शान्ति थी।

अपूर्व ने हंसने की कोशिश करके कहा, "तिवारी, ईश्वर की इच्छा न होने पर इसी तरह मुंह का ग्रास निकल जाता है। आओ, समझ लें कि हम लोग आज भी जहाज में ही हैं। चिउड़ा-मिठाई अब भी कुछ बची है। रात बीत ही जायगी।"

तिवारी ने सिर हिलाकर हुंकारी भरी और उस हांडी की ओर फिर एक बार हसरत भरी नज़रों से देखकर चिउड़ा-मिठाई लेने के लिए उठ खड़ा हुआ। सौभाग्य से खाने-पीने के सामान का सन्दूक रसोईघर के कोने में रखा था इसलिए ईसाई का पानी इसे अपवित्र नहीं कर पाया था।

फलाहार जुटाते हुए तिवारी ने रसोईघर से कहा, "बाबू यहां तो रहना हो नहीं सकेगा।"

अपूर्व अन्यमनस्क भाव से बोला, "हां, लगता तो ऐसा ही है।"

तिवारी उसके परिवार का पुराना नौकर है। आते समय उसका हाथ पकड़कर मां ने जो बातें समझाकर बताई थीं, उन्हीं को याद कर उद्विग्न स्वर में बोला, "नहीं बाबू, इस घर में अब एक दिन भी नहीं। क्रोध में आकर काम अच्छा नहीं हुआ। मैंने साहब को गालियां दी हैं।"

अपूर्व ने कहा, "उसे गालियां न देकर मारना ठीक था।"

तिवारी में अब क्रोध के स्थान पर सदबुद्धि पैदा हो रही थी। प्रतिवाद करके बोला, "वे लोग जो भी हों, लेकिन साहब ठहरे। हम लोग बंगाली हैं।"

अपूर्व मौन ही रहा। साहस पाकर तिवारी ने पूछा, "आफिस के दरवान जी से कहकर कल सवेरे ही क्या इस घर को छोड़ा नहीं जा सकता? मेरा तो विचार है कि छोड़ देना ठीक होगा।"

अपूर्व ने कहा, "अच्छी बात है, देखा जाएगा।" दुर्जनों के प्रति उसे कोई शिकायत नहीं है। समय नष्ट न करके चुपचाप जगह छोड़ देना ही

उसने उचित समझ लिया है। बोला, "अच्छी बात है, ऐसा ही होगा। तुम भोजन आदि का प्रबन्ध करो।"

"अभी करता हूं बाबू।" कहकर कुछ निश्चिन्त होकर अपने काम में लग गया।

लेकिन उसी की बातों का सूत्र पकड़कर, ऊपर वाले फिरंगी का दुर्व्यवहार याद कर अचानक अपूर्व का समूचा बदन क्रोध से जलने लगा। मन में विचार आया कि हम लोगों ने चुपचाप, बिना कुछ सोचे-समझे इसे सहन कर लेना ही अपना कर्तव्य समझ लिया है। इसीलिए दूसरों को चोट पहुंचाने का अधिकार स्वयं ही दृढ़ तथा उग्र हो उठा है। इसीलिए तो आज मेरा नौकर भी मुझको तुरन्त भागकर आत्महत्या करने का उपदेश देने का साहस कर रहा है। तिवारी बेचारा रसोईघर में फलाहार ठीक कर रहा था। वह जान भी न सका। उसकी लाठी लेकर अपूर्व बिना आहट किए धीरे-धीरे बाहर निकला और सीढ़ियों से ऊपर चढ़ गया।

दूसरी मंजिल पर साहब के बन्द द्वार को खटखटाना आरम्भ किया। कुछ देर बाद एक भयभीत नारी कंठ ने अंग्रेजी में कहा, "कौन है?"

"मैं नीचे रहता हूं और उस आदमी को देखना चाहता हूं।"

"क्यों?"

"उसे दिखाना है कि उसने मेरा कितना नुकसान किया है।"

"वे सो रहे हैं।"

अपूर्व ने कठोर स्वर में कहा, "जगा दीजिए। यह सोने का समय नहीं है। रात को सोते समय मैं तंग करने नहीं आऊंगा। लेकिन इस समय उसके मुंह से उत्तर सुने बिना नहीं जाऊंगा।"

लेकिन न तो द्वार ही खुला और न कोई उत्तर ही आया। दो एक मिनट प्रतीक्षा करने के बाद अपूर्व ने फिर चिल्लाकर कहा, "मुझे जाना है, उसे बाहर भेजिए।"

इस बार वह विनम्र और मधुर नारी स्वर द्वार के समीप सुनाई दिया, "मैं उनकी लड़की हूं। पिताजी की ओर से क्षमा मांगती हूं। उन्होंने जो कुछ किया है, सचेत अवस्था में नहीं किया। आप विश्वास रखिए, आपकी जो हानि हुई है कल हम उसे यथाशक्ति पूरी कर देंगे।"

लड़की के स्वर से अपूर्व कुछ नर्म पड़ गया। लेकिन उसका क्रोध कम नहीं हुआ। बोला, "उन्होंने बर्बर की तरह मेरा बहुत नुकसान किया। उससे भी अधिक उत्पात किया है। मैं विदेशी आदमी हूं। लेकिन आशा करता हूं कि कल सुबह मुझसे स्वयं मिलकर इस झगड़े को समाप्त कर लेने की कोशिश करेंगे।"

लड़की ने कहा, "अच्छी बात है।" फिर कुछ देर चुप रहकर बोली, "आपकी तरह हम लोग भी यहां बिल्कुल नए हैं। कल शाम को ही मोलपीन से आये हैं।"

और कुछ न कहकर अपूर्व धीरे-धीरे उतर आया। देखा, तिवारी भोजन की व्यस्था में ही लगा था।

थोड़ा-सा खा-पीकर अपूर्व सोने के कमरे में आकर भीगे तकिए को ही लगाकर सो गया। प्रवास के लिए घर से बाहर पांव रखने के समय से लेकर अब तक विपत्तियों की सीमा नहीं रही थी। सुख-शान्ति हीन चिंता ग्रस्त मन में एक ही बात बार-बार उठ रही थी—उस ईसाई लड़की की बात वह नहीं जानता कि देखने में वह कैसी है। क्या उम्र है, कैसा स्वभाव है। लेकिन इतना ज़रूर जान गया कि उसका उच्चारण अंग्रेजों जैसा नहीं है और जो भी हो ईसाई के नाते स्वयं को राजा की जाति की समझ कर पिता की भांति घमंडी नहीं है। अपने पिता के अन्याय तथा उत्पात के लिए उसने लज्जा अनुभव की है। उसकी भयभीत, विनम्र स्वर में क्षमा याचना, उसे अपने कर्कश तथा तीव्र अभियोग की तुलना में असंगत सी लगी। उसका स्वभाव उग्र नहीं है। कड़ी बात कहने में उसे हिचक होती है।

तभी बिहारी का मोटा कंठ स्वर उसके कानों तक पहुंचा। वह कह रहा था, "नहीं मेम साहब, यह आप ले जाइए। बाबू भोजन कर चुके। हम लोग ये सब छूते तक नहीं।"

अपूर्व उठ बैठा और उस ईसाई लड़की के शब्दों को कान लगाकर सुनने की कोशिश करने लगा। तिवारी बोला, "कौन कहता है कि हमने भोजन नहीं किया? यह आप ले जाइए। बाबू सुनेंगे तो नाराज होंगे।"

अपूर्व ने धीरे-धीरे बाहर आकर पूछा, "क्या बात है तिवारी?"

लड़की जल्दी से पीछे हट गई। शाम हो चली थी। लेकिन कहीं भी रोशनी नहीं जली थी। लड़की का रंग अंग्रेजों जैसा सफेद नहीं है लेकिन खूब साफ है। उम्र उन्नीस-बीस या कुछ अधिक होगी। कुछ लंबी होने से दुबली जान पड़ती है। ऊपरी होंठ के नीचे सामने के दोनों दांतों को कुछ ऊंचा न समझा जाए तो चेहरे की बनावट अच्छी है। पैरों में चप्पल—शरीर पर भडकीली सी साड़ी – चाल-ढाल कुछ बंगाली और कुछ पारसी जान पड़ती है। एक डाली में कुछ नारंगी, नाशपाती, दो-चार अनार और अंगूर का एक गुच्छा सामने धरती पर रखे हैं।

अपूर्व ने पूछा, "यह सब क्या है?"

लड़की ने अंग्रेजी में धीरे से उत्तर दिया है "आज हमारा त्योहार है। मां ने भेजा है। आज तो आपका खाना भी नहीं हुआ।"

अपूर्व ने कहा, "अपनी मां को हमलोगों की ओर से धन्यवाद देना और कहना कि हमारा खाना हो गया है।"

लड़की चुप थी। अपूर्व ने पूछा, "हमारा खाना नहीं हुआ, आपको यह कैसे पता लगा ?"

लड़की ने लज्जित स्वर में कहा, "इसीलिए तो झगड़ा हुआ था।"

अपूर्व बोला, "नहीं। वास्तव में हमारा खाना हो चुका है।"

लड़की बोली, "हो सकता है। लेकिन ये तो बाज़ार के फल हैं इनमें कोई दोष नहीं है।

अपूर्व समझ गया कि उसे किसी प्रकार शान्त करने के लिए दोनों अपरिचित स्त्रियों के उद्वेग की सीमा नहीं है। कुछ देर पहले वह अपने स्वभाव का जो परिचय दे आया है, उससे न जाने क्या होगा ? यह सोचकर उसे प्रसन्न करने के लिए ही तो यह भेंट लेकर आई है इसलिए मीठे स्वर में बोला, "नहीं, कोई दोष नहीं है :" फिर तिवारी से बोला, "ले लो, इनमें कोई दोष नहीं है महाराज।"

तिवारी इससे प्रसन्न नहीं हुआ। बोला, "रात में हम लोगों को ज़रूरत नहीं है। और मां ने मुझे यह सब करने के लिए बार-बार मना किया है। मेम साहब, आप इन्हें ले जाइए। हमें ज़रूरत नहीं हैं।"

मां ने मना किया है या कर सकती है, इसमें असम्भव कुछ भी नहीं था। और वर्षों के विश्वसनीय तिवारी को इन सब झंझटों को सौंपकर उसका अभिभावक भी वे नियुक्त कर सकती हैं, यह भी सम्भव है। अभी उस दिन मां को क्या वचन दे आया है उसे याद कर मन-ही-मन कहने लगा, केवल मां का आदेश ही नहीं है, मैं भी वचन दे आया हूं। फिर भी संकुचित लज्जित और अपरिचित लड़की, जो उसे प्रसन्न करने उसके द्वार पर आई है, उसके उपहार की सामान्य वस्तुओं को अस्पृश्य कहकर अपमानित करने को भी वह उचित न मान सका। तिवारी ने कहा, "यह हम सब नहीं छुयेंगे मेमसाहब। इन्हें उठा ले जाइए। मैं इस स्थान को धो डालूं।"

लड़की कुछ देर चुपचाप खड़ी रही। फिर डाली उठाकर धीमे-धीमे चली गई।

अपूर्व ने धीमे और रूखे स्वर में कहा, "न खाते, लेकिन लेकर चुपके से फेंक तो सकते थे !"

तिवारी बोला, "नष्ट करने क्या लाभ होता बाबू ?"

"मूर्ख, गंवार कहीं का," इतना कहकर अपूर्व सोने चला गया। बिस्तर पर लेटकर पहले तिवारी के प्रति क्रोध से उसका सम्पूर्ण शरीर

जलने लगा। लेकिन इस विषय में वह जितना ही सोचता था, लगता था कि शायद यह ठीक ही हुआ कि उसने स्पष्ट कहकर लौटा दिया। उसे अपने बड़े मामा की याद आ गई। उस निष्ठावान ब्राह्मण ने एक दिन भोजन करने से मना कर दिया था। करुणामयी ने पति से भाई का मन-मुटाव दूर करने के लिए एक चतुराई का सहारा लेना चाहा, लेकिन दरिद्र ब्राह्मण ने हंस कर कहा। "नहीं बहिन, यह सब नहीं हो सकता। जीजाजी क्रोधी व्यक्ति हैं। इस अपमान को वह सह न पायेंगे। हो सकता है तुम्हें भी इसमें भागीदार बनना पड़े मेरे स्वर्गीय गुरुदेव कहा करते थे, 'मुरारी, सत्य पालन में दुख है। वंचना और प्रतारणा के मीठे पथ से वह कभी नहीं आता।' मैं बिना भोजन किए चला जाऊंगा। यही उचित है बहन।"

इस घटना के कारण करुणामयी ने अनेक दुख सहे। लेकिन भाई को कभी दोष नहीं दिया। इसी बात को याद कर अपूर्व के मन में बार-बार यह बात उठने लगी, "उचित ही हुआ। तिवारी ने ठीक ही किया।"

तीन

अपूर्व की इच्छा थी कि सुबह बाज़ार घूम आए। लेकिन न जा सका। क्योंकि ऊपर वाला साहब कब क्षमा याचना करने आयेगा; इसका कुछ ठीक नहीं था। वह आयेगा अवश्य। इसमें कोई सन्देह नहीं था। आज जब उसका नशा टूटेगा तब उसकी पत्नी और बेटी; उसे किसी भी दशा में छोड़ेंगी नहीं। क्योंकि उनके द्वारा ऐसा संकेत वह कल ही पा चुका था। नींद टूटने के बाद से वह लड़की कई बार याद आई। नींद में भी उसकी भद्रता, सौजन्यता और उसका विनम्र कंठ स्वर कानों में एक परिचित सुर की भांति आते-जाते रहे हैं। अपने शराबी पिता के दुराचार के कारण उस लड़की की लज्जा की सीमा नहीं थी। मूर्ख तिवारी के रूखे व्यवहार से अपूर्व भी लज्जा का अनुभव कर रहा था।

अचानक सिर के ऊपर पड़ोसियों के जाग उठने की आहट आई और प्रत्येक आहट से वह आशा करने लगा कि साहब उसके द्वार पर आकर

खड़ा है। क्षमा तो वह करेगा ही। यह निश्चित है। लेकिन विगत दिन की वीभत्सता, क्या करने से सरल और सामान्य होकर विषाद का चिह्न मिटा देगी यही उसकी चिन्ता का विषय था। आशा और उद्वेग के साथ प्रतीक्षा करते-करते जब नौ बज गए तो सुना साहब नीचे उतर रहे हैं। उनके पीछे और भी दो पैरों का शब्द सुनाई दिया। थोड़ी देर बाद ही उनके द्वार का लोटे का कड़ा ज़ोर से बज उठा। तिवारी ने आकर कहा, "बाबू, ऊपर वाला साहब कड़ा हिला रहा है।"

अपूर्व ने कहा, "दरवाज़ा खोलकर उनको आने दो।"

तिवारी के दरवाज़ा खोलते ही अपूर्व ने अत्यन्त गम्भीर आवाज़ सुनी, "तुम्हारा साहब कहां है ?"

उत्त र में तिवारी ने क्या कहा, ठीक-ठीक सुनाई नहीं पड़ा।

स्वर से अपूर्व चौंक पड़ा, बापरे, कह क्या सामान्य कंठ स्वर है ?

सोचा, शायद साहब ने सवेरे उठते ही शराब पी ली है। इसलिए इस समय जाना उचित है या नहीं। सोचने से पहले ही फिर उधर से आदेश हुआ, "बुलाओ जल्दी।"

अपूर्व धीरे-धीरे पास जाकर खड़ा हो गया। साहब ने एक पल उसे ऊपर से नीचे तक देखकर अंग्रेजी में पूछा, "अंग्रेजी जानते हो ?"

"जानता हूं।"

"मेरे सो जाने के बाद कल तुम ऊपर गए थे ?"

"जी हां।"

"लाठी ठोकी थी ? अनधिकार प्रवेश करने के लिए दरवाजा तोड़ने की कोशिश की थी ?"

अपूर्व विस्मय के मारे स्तब्ध हो गया। साहब ने कहा—"संयोग से दरवाजा खुला होता तो तुम कमरे में घुसकर मेरी पत्नी या मेरी बेटी पर आक्रमण कर बैठते। इसीलिए मेरे जागते रहने पर नहीं गए ?"

अपूर्व ने धीरे से कहा, "आप तो सो रहे थे, कैसे पता चला ?"

साहब ने कहा, "मेरी लड़की ने मुझे बताया है। उसे तुमने गाली भी दी।"

इतना कहकर उसने बगल में खड़ी लड़की की ओर उंगली से इशारा किया, यह वही लड़की है। कल भी इसे अपूर्व अच्छी तरह नहीं देख पाया था। आज भी साहब के विशाल शरीर की आड़ में उसकी साड़ी की किनारी को छोड़ और कुछ भी नहीं देख पाया। सिर हिलाकर उसने पिता की हां में हां मिलाई या नहीं, यह भी समझ में नहीं आया। लेकिन इतना अवश्य समझ गया कि ये लोग भले आदमी नहीं हैं। सारे मामले को जान-

बूझकर विकृत और उलटा करके सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं। इस लिए वहुत सतर्क रहने की जरूरत है।

साहब ने कहा, "मैं जाग रहा होता तो तुम्हें लात मारकर धकेल देता। तुम्हारे मुंह में एक भी दांत सावुत न रहने देता। लेकिन यह अवसर अब खो चुका हूं। इसलिए पुलिस के हाथ से जो कुछ न्याय मिलेगा उतना ही लेकर सन्तुष्ट होना पड़ेगा। हम लोग जा रहे हैं। तुम इसके लिए तैयार रहना।"

अपूर्व ने सिर हिलाकर कहा, "अच्छी बात है।"—लेकिन उसका मुंह उतर-सा गया।

साहब ने लड़की का हाथ पकड़कर कहा, "चलो।" और सीढ़ी से उतरते-उतरते वोला, "कावर्ड, अरक्षित स्त्रियों के ऊपर हाथ उठाने की चेष्टा। मैं तुम्हें ऐसा सवक सिखाऊंगा कि जिन्दगी भर नहीं भूलोगे।"

तिवारी वगल में खड़ा सब सुन रहा था। रोने की मुद्रा में वोला, "अव क्या होगा छोटे वावू ?"

अपूर्व ने उपेक्षा से कहा, "होगा क्या।"

तिवारी बोला, "मैंने तो पहले ही कहा था बाबू, कि जो होना था हो गया। अव उन्हें और छेड़ने की जरूरत नहीं है। वे साहब और मेम ठहरे।"

अपूर्व ने कहा, "साहब—मेम ठहरे तो इससे क्या होता है ?"

तिवारी ने कहा, "ये लोग पुलिस में जो गए हैं।"

अपूर्व ने कहा, "जाने से क्या होता है ?"

तिवारी ने व्याकुल होकर कहा, "बड़े बाबू को तार कर दूं ?" छोटे बावू, उन्हें बुला ही लिया जाए।

"क्या पागल हो गया है तिवारी ? जा उधर देख। खाना सारा जल गया होगा। साढ़े दस बजे मुझे आफिस जाना है," इतना कहकर वह अपने कमरे में चला गया। तिवारी रसोई घर में चला गया। लेकिन रसोई वनाने से लेकर बाबू के आफिस जाने तक का सभी कुछ उसके लिए अत्यन्त अर्थ-हीन हो गया।

वह करुणामयी के हाथ का बना हुआ आदमी है। इसलिए मन कितना ही दुश्चिन्ता ग्रस्त क्यों न हो, हाथ के काम में कहीं भूल-चूक नहीं होती। यथा समय भोजन करने बैठकर अपूर्व ने उसे उत्साहित करने के अभिप्राय से भोजन की कुछ बढ़ा-चढ़ाकर प्रशंसा की : दो-एक ग्रास मुंह में डालकर बोला, "तिवारी, आज का भोजन तो मानो अमृत ही बनाया है। कई दिनों से अच्छी तरह भोजन नहीं किया था। कैसा डरपोक आदमी है तू ? मां ने

भी अच्छे आदमी को साथ भेजा है।"

तिवारी ने कहा, "हूं।"

अपूर्व ने उसकी ओर देखकर हंसते हुए कहा, "मुंह एकदम हांडी जैसा क्यों बना रखा है? उस हरामजादे फिरंगी की धमकी देखी? पुलिस में जा रहा है। अरे जाता क्यों नहीं? जाकर क्या करेगा, सुनें तो? तेरा कोई गवाह है?"

तिवारी ने कहा, "मेम साहब को भी क्या गवाही की जरूरत है?"

अपूर्व ने कहा, "उनके लिए क्या कोई दूसरे नियम-कानून हैं! फिर वे मेम-साहब कैसे? रंग तो मेरे पालिश किए हुए जूते की ही तरह है?"

तिवारी मौन रहा।

कुछ देर चुपचाप भोजने करने के बाद अपूर्व ने मुंह ऊपर उठाया। कहा, "और वह लड़की भी कितनी दुष्ट है। कल इस तरह आई जैसे भीगी बिल्ली हो। और ऊपर जाते ही इतनी झूठमूठ बातें जोड़ दीं।"

तिवारी बोला, "ईसाई है न?"

"जानते हो तिवारी, जो असली साहब हैं वे इनसे घृणा करते हैं। एक मेज़ पर बैठकर कभी नहीं खिलाते। चाहे कितना ही हैट-कोट पहनें और ग़िरजे में जायें।"

तिवारी ने ऐसा कभी नहीं सोचा था। छोटे बाबू का आफिस जाने का समय हो रहा है। अब घर में अकेले उसका समय कैसे कटेगा? साहब थाने गया है। हो सकता है लौटकर दरवाजा तोड़ डाले। हो सकता है पुलिस साथ लेकर आए। हो सकता है उसे बांधकर ले जाए। क्या होगा, कौन जाने।

अपूर्व भोजन करने के बाद कपड़े पहन रहा था। तिवारी ने कमरे का पर्दा हटाकर कहा, "देखकर जाते तो अच्छा होता।"

"क्या देखकर जाता?"

"उनके लौटने की राह—!"

अपूर्व ने कहा, "यह कैसे हो सकता है? आज मेरी नौकरी का पहला दिन है। लोग क्या सोचेंगे?"

तिवारी चुप रह गया।

अपूर्व ने कहा, "तू दरवाज़ा बन्द करके निश्चिन्त बैठा रह। मैं जल्दी ही लौटूंगा। कोई दरवाज़ा नहीं तोड़ सकता।"

तिवारी ने कहा, "अच्छा।" लेकिन उसने एक लम्बी सांस दबा रखने की जो कोशिश की उसे अपूर्व ने देख लिया। बाहर जाते समय तिवारी ने भारी गले से कहा, "पैदल मत जाना छोटे बाबू। किराए की गाड़ी ले लेना।"

"अच्छा, "कहकर अपूर्व नीचे उतर गया। उसके चलने का ढंग ऐसा था जैसे नई नौकरी के प्रति उसके मन में कोई हर्ष न हो।

वोथा कम्पनी के भागीदार पूर्वीय क्षेत्र के मैनेजर रोजेन साहब उस समय बर्मा में ही थे। रंगून कार्यालय उन्होंने ही स्थापित किया था। उन्होंने अपूर्व का बड़े आदर से स्वागत किया। उसके स्वरूप, बातचीत तथा यूनिवर्सिटी की डिग्री देखकर बहुत ही प्रसन्न हुए। सभी कर्मचारियों को बुलाकर परिचय कराया और दो-तीन महीने में व्यवसाय का सम्पूर्ण रहस्य सिखा देने का आश्वासन दिया। बातचीत, परिचय तथा नए उत्साह से उसकी मानसिक ग्लानि कुछ समय के लिए मिट गई। एक व्यक्ति ने उसे विशेष रूप से आकर्षित किया। वह था आफिस का एकाउन्टेन्ट। ब्राह्मण है। नाम है रामदास तलवलकर। आयु लगभग उसके जितनी ही या कुछ अधिक हो सकती है। दीर्घ आकृति, बलिष्ठ, गौरवर्ण है। पहनावे में पाजामा, लम्बा कोट, सिर पर पगड़ी, माथे पर लाल चन्दन का टीका। बड़ी अच्छी अंग्रेजी में बातचीत करते हैं लेकिक अपूर्व के साथ उन्होंने पहले से ही हिन्दी में बोलना आरम्भ कर दिया। अपूर्व हिन्दी अच्छी तरह नहीं जानता। लेकिन जब देखा कि वह हिन्दी छोड़कर और किसी में उत्तर नहीं देता तो उसने भी हिन्दी बोलना आरम्भ कर दिया। अपूर्व ने कहा, "यह भाषा मैं नहीं जानता। बोलने में बहुत गलतियां होती हैं।"

रामदास बोला, "गलतियां तो मुझसे भी होती हैं। क्योंकि यह मेरी भी मातृ भाशा नहीं है।

अपूर्व बोला, "अगर पराधी भाषा में ही बातचीत करनी है तो अंग्रेजी में क्या दोष है?"

रामदास बोला, "अंग्रेजी में तो हम लोग और अधिक गलतियां करते हैं। आप अंग्रेजी में बोला करें। लेकिन अगर मैं हिन्दी में उत्तर दूंगा, क्षमा कर दीजिएगा।

अपूर्व बोला, "मैं भी हिन्दी में ही बोलने की चेष्टा करूंगा। लेकिन गलती होने पर आप भी मुझे क्षमा करोगे।"

इस बातचीत के बीच रोजेन साहब स्वयं मैनेजर के कमरे में आ गए। उम्र पचास के लगभग होगी। हालैंड के निवासी हैं। साधारण ढंग के कपड़े। चेहरे पर घनी दाढ़ी-मूंछें। टूटी-फूटी अंग्रेजी बोलते हैं। पक्के व्यवसायी हैं। अब तक बर्मा के अनेक स्थानों में घूमकर तरह-तरह के लोगों से मिलकर, तथ्य संग्रह करके, काम-काज के कार्यक्रम का उन्होंने खाका तैयार कर लिया है। उस कार्यक्रम के कागज़ अपूर्व की टेबल पर रखते हुए बोले, "इसके विषय में आपकी क्या राय है?" फिर तलवलकर से बोले,

"इसकी एक प्रति आपके कमरे में भी भेज दी है। लेकिन इसे अभी रहने दिया जाए। क्योंकि आज नए मैनेजर के सम्मान में आफिस बन्द हो जाएगा मैं जल्दी ही चला जाऊंगा। तब आप दोनों पर ही सारा कार्यक्रम रहेगा। मैं अंग्रेज नहीं हूं। यद्यपि यह राज्य हम लोगों का हो सकता था। फिर भी उन लोगों की तरह हम भारतीयों को नीच नहीं समझते। अपने समान ही समझते हैं। केवल फर्म की ही नहीं, आप लोगों की उन्नति भी आप लोगों के कर्तव्यज्ञान पर निर्भर है। अच्छा, गुड्ड। आफिस दो बजे के बाद बन्द हो जाना चाहिए।" कहते हुए जिस तरह आए थे उसी तरह चले गए।

ठीक दो बजे दोनों साथ-साथ आफिस से निकले। तलवलकर शहर में नहीं रहता। लगभग दस मील पश्चिम में इनसिन नामक स्थान में डेरा है। डेरे में उसकी पत्नी तथा एक छोटी-सी बेटी रहती है वहां शहर का हो हल्ला नहीं है। ट्रेनों में आने-जाने से कोई असुविधा नहीं होती।

"हाल्दर बाबू, कल आफिस के बाद मेरे यहां चाय का निमन्त्रण रहा, तलवलकर ने कहा।

अपूर्व बोला, "मैं चाय नहीं पीता बाबूजी।"

"नहीं पीते? पहले मैं भी नहीं पीता था। लेकिन मेरी पत्नी नाराज होती है। अच्छा, न हो तो फल-फूल, शर्बत—हम लोग भी ब्राह्मण हैं।"

अपूर्व ने हंसते हुए कहा, "ब्राह्मण तो अवश्य हैं, लेकिन अगर आप लोग मेरे हाथ का खाएं तो मैं भी आपकी पत्नी के हाथ का खा सकता हूं।"

रामदास ने कहा, "मैं तो खा सकता हूं। लेकिन मेरी पत्नी की बात-- अच्छा, आपका डेरा तो पास ही है। चलिए न, आपको पहुंचा आऊं। मेरी ट्रेन तो पांच बजे छूटेगी।"

अपूर्व घबरा गया। इस बीच वह सब कुछ भूल गया था। डेरे का नाम लेते ही क्षण भर में उसका सारा उपद्रव, सारा झगड़ा बिजली की रेखा की भांति चमक पर उसके चेहरे को श्रीहीन कर गया। अब तक वहां क्या हुआ होगा, वह कुछ नहीं जानता। हो सकता है बहुत कुछ हुआ तो। अकेले उसी को बीच मे जाकर खड़ा होना पड़ेगा। एक परिचित व्यक्ति के साथ रहने से कितनी सुविधा और साहस रहता है। लेकिन परिचय के आरम्भ में ही—यह क्या सोचेगा?—यह सोचकर अपूर्व को बड़ा संकोच हो उठा। बोला, "देखिए—?"

अभी बात पूरी नहीं कर सका था कि उसके संकोच और लज्जा को अनुभव करके रामदास ने हंसते हुए कहा, "एक ही रात में पूरी सुव्यवस्था

की मैं आशा नहीं करता बाबूजी। मुझे भी एक दिन नया डेरा ठीक करना पड़ा था। फिर मेरी तो पत्नी भी थी। आपके साथ तो वह भी नहीं है। आप आज लज्जा का अनुभव कर रहे हैं। लेकिन उन्हें न लाने पर एक वर्ष बाद भी आपकी यह लज्जा दूर नहीं होगी। यह मैं कहे देता हूं। चलिए, देखूं क्या कर सकता हूं। अव्यवस्था के बाच ही तो मित्र की आवश्यकता होती है।"

इस मित्रहीन देश में आज उसे मित्र की अत्यन्त आवश्यकता है। दोनों टहलते-टहलते डेरे के सामने पहुंचे तो तलवलकर को घर में आमन्त्रित किए बिना न रह सका। ऊपर चढ़ते समय देखा कि वही ईसाई लड़की नीचे उतर रही है। उसका पिता उसके साथ नहीं था। वह अकेली ही थी। दोनों एक ओर हटकर खड़े हो गए। लड़की धीरे-धीरे उतरकर सड़क पर चली गई।

रामदास ने पूछा, "ये लोग तीसरी मंजिल पर रहते हैं क्या ? रामदास ने पूछा।"

"हां।"

"ये लोग भी बंगाली हैं ?"

अपूर्व ने सिर हिलाकर कहा, "नहीं, देसी ईसाई हैं। सम्भव है मद-रासी, गोआनीज या और कुछ होंगे, लेकिन बंगाली नहीं हैं।"

रामदास ने कहा, "लेकिन साड़ी पहनने का ढंग तो ठीक आप लोगों जैसा ही है।"

अपूर्व ने हैरानी से पूछा, "हम लोगों का ढंग आपको कैसे मालूम?"

रामदास ने कहा, "मैंने बम्बई, पूना, शिमला में बहुत-सी बंगाली महिलाओं को देखा है। इतना सुन्दर साड़ी पहनने का ढंग भारत की किसी जाति में नहीं है।"

"हो सकता है," कहकर अपूर्व डेरे के बन्द दरवाजे को खटखटाने लगा।

थोड़ी देर बाद अन्दर से सतर्क कंठ का उत्तर आया, "कौन ?"

"मैं हूं मैं। दरवाजा खोलो। भय की कोई बात नहीं है," कहकर अपूर्व हंसने लगा। यह देखकर कि इस बीच कोई भयानक घटना नहीं हुई। तिवारी कमरे में सुरक्षित है। और यह अनुभव करके उसके ऊपर से जैसे एक बहुत बड़ा बोझ उतर गया।

कमरा देखकर रामदास बोला, "आपका नौकर अच्छा है। सभी कुछ अच्छी तरह सजाकर रखा है। यह सारा सामान मैंने ही खरीदा था।

आपको और जिस चीज की जरूरत हो वताइए, भेज दूंगा। रोजेन साहव की आज्ञा है।"

तिवारी ने मधुर स्वर में कहा, "और समान की जरूरत नहीं है वाबू जी, यहां से सकुशल हट जायें तो प्राण बच जायेंगे।"

उसकी बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। लेकिन अपूर्व ने सुन लिया। उसने आड़ में ले जाकर पूछा, "और कुछ हुआ था क्या ?"

"नहीं।"

"तब फिर ऐसी बातें क्यों कहता है ?"

तिवारी ने कहा, "शौक से थोड़े ही कहता हूं। दोपहर भर साहब जैसी घुड़दौड़ करता रहा है, वैसी क्या कोई मनुष्य कर सकता है ?"

अपूर्व मुस्कराकर बोला, "तो तू चाहता है कि वह अपने कमरे में चलने-फिरने भी न पाए ? लकड़ी की छत है ! अधिक आवाज होती है।"

तिवारी ने रुष्ट होकर कहा, "एक स्थान पर खड़े होकर घोड़े की तरह पैर पटकने को चलना कहा जाता है ?"

अपूर्व बोला, "इससे पता चलता है कि वह शराबी है। उसने जरूर शराव पी रखी होगी।"

तिवारी बोला, "हो सकता है। मैं उसका मुंह सूंघकर देखने नहीं गया था।" फिर अप्रसन्न भाव से रसोई घर में जाते हुए बोला, "चाहे जो भी हो, इस घर में रहना नहीं होगा।"

ट्रेन का समय हो जाने पर रामदास ने विदा मांगी। पता नहीं तिवारी के अभियोग या उसके स्वामी के चेहरे से उसने कुछ अनुमान लगाया या नहीं, लेकिन जाते समय अचानक पूछ वैठा, "बावूजी, क्या आपको इस डेरे में असुविधा है ?"

अपूर्व ने तनिक हंसकर कहा, "नहीं।" फिर रामदास को जिज्ञासुभाव से निहारते देखकर बोला, "ऊपर जो साहव रहते हैं वे मेरे साथ अच्छा व्यवहार नहीं कर रहे।"

रामदास ने विस्मित होकर पूछा, "वही लड़की तो नहीं ?"

"जी हां, उसी के पिता," इतना कहकर अपूर्व ने कल सांझ और आज सवेरे की घटनाएं सुना दीं। रामदास कुछ देर मौन रहने के बाद बोला, "मैं होता तो इतिहास दूसरा ही होता। विना क्षमा मांगे वह इस दरवाजे से एक कदम भी नीचे न उतर पाता।"

अपूर्व ने कहा, "अगर वह क्षमा न मांगता तो आप क्या करते।"

रामदास ने कहा, "तो उतरने न देता।"

अपूर्व ने भले ही उसकी बातों पर विश्वास न किया हो, लेकिन साहस

भरी बातों से उसे कुछ साहस अवश्य मिला। हंसते हुए बोला, "चलिए अब नीचे चलें। आपकी ट्रेन का समय हो आया है।" इतना कहकर मित्र का हाथ पकड़कर नीचे उतरने लगा। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जिस तरह आते समय उस लड़की से भेंट हुई थी उसी तरह जाते समय भी हो गई। उसके हाथ में कागज का एक मुड़ा हुआ बंडल था। वह शायद कुछ खरीदकर लौट रही थी। उसे रास्ता देने के लिए अपूर्व एक ओर हटकर खड़ा हो गया। लेकिन सहसा घबराकर देखा रामदास रास्ता न देकर उसे रोके खड़ा है। वह अंग्रेजी में बोला, "क्षमा करना, मैं बाबूजी का मित्र हूं। इनके साथ अकारण किए गए दुर्व्यवहार के लिए आप लोगों को लज्जित होना चाहिए।"

लड़की ने आंख उठा कर क्रुद्ध स्वर में कहा, "इच्छा हो तो ये बातें आप मेरे पिताजी से कह सकते हैं।"

"आपके पिताजी घर पर हैं?"

"नहीं।"

"मेरे पास प्रतीक्षा करने के लिए समय नहीं है। मेरी ओर से उनसे कह दीजिएगा कि उनके उपद्रव से इनका रहना दूभर हो गया है।"

लड़की ने पूर्ववत् कड़वे स्वर में कहा, "उनकी ओर से मैं ही उत्तर दिए देती हूं कि आप अगर चाहें तो किसी दूसरी जगह जा सकते हैं।"

रामदास थोड़ा हंसकर बोला, "भारतीय ईसाइयों को मैं पहचानता हूं। उनके मुंह से इससे बड़े उत्तर की आशा मैं नहीं करता। लेकिन इससे उनको सुविधा नहीं होगी। क्योंकि इनके स्थान पर मैं आऊंगा। मेरा नाम रामदास तलवलकर है। मैं जात का ब्राह्मण हूं। तलवार शब्द का क्या अर्थ होता है अपने पिता को जान लेने के लिए कहिएगा। गुड ईवनिंग। चलिए बाबूजी," इतना कहकर वह अपूर्व का हाथ पकड़कर एकदम रास्ते में आ गया।

लड़की के चेहरे को अपूर्व ने छिपी नजरों से देख लिया था। घटना के अन्त में वह किस प्रकार कठोर हो उठी थी। यह सोचकर वह कुछ क्षण तक कोई बात ही नहीं कर सका। इसके बाद धीरे से बोला, "यह क्या हुआ तलवलकर?"

तलवलकर ने उत्तर दिया, "यही हुआ कि आपके जाते ही मुझे यहां आना पड़ेगा। केवल खबर मिल जानी चाहिए।"

अपूर्व ने कहा, "अर्थात दोपहर को आपकी पत्नी अकेली रहेगी?"

रामदास ने कहा, "अकेली नहीं। मेरी दो वर्ष की लड़की भी है।

"यानी आप मजाक कर रहे हैं।"

"नहीं, मैं सच कह रह रहा हूं। हंसी-मजाक की मेरी आदत ही नहीं है।"

अपूर्व ने एक बार अपने साथी की ओर देखा। फिर धीरे से कहा, "तो फिर मैं यह डेरा नहीं छोड़ सकूंगा···।"

उसकी बात पूरी नहीं हो पाई थी कि रामदास ने सहसा उसके दोनों हाथों को अपने शक्तिशाली हाथों से पकड़कर जोर से झकझोरते हुए कहा, "मैं यही चाहता हूं बाबूजी। उत्पात के भय से हम लोग बहुत भाग चुके हैं, लेकिन अब नहीं।"

सांझ होने में अभी देर थी। एक घंटे तक किसी ट्रेन का समय भी नहीं था। इसलिए स्टेशन के दूसरी ओर वाले प्लेटफार्म पर यात्रियों की भीड़ अधिक नहीं थी। अपूर्व टहलते हुए घूमने लगा। अचानक उसके मन में विचार आया कि कल से आज तक इस एक ही दिन में जीवन न जाने कैसे सहसा कई वर्ष पुराना हो गया है। यहां पर मां नहीं है, भाई नहीं है। भाभियां नहीं हैं। स्नेह की छाया भी कहीं नहीं है। कर्मशाला के असंख्य चक्र दांए-बांए। सिर के ऊपर, पैरों के नीचे, चारों ओर वेग से घूमते हुए चल रहे हैं। तनिक भी असमर्थ होने पर रक्षा पाने का कहीं कोई उपाय नहीं है।

उसकी आंखों की कोरें गीली हो उठीं। कुछ दूरी पर काठ की एक बेंच थी। उस पर बैठकर आंखें पोंछ रहा था कि सहसा पीछे से एक जोर का धक्का खाकर पेट के बल जमीन पर जा गिरा। किसी तरह उठकर खड़ा होते ही देखा, पांच-छै फिरंगी बदमाश लड़के हैं। किसी के मुंह में सिगरेट है तो किसी के मुंह में पाइप है और वे दांत निकालकर हंस रहे थे।" शायद वही लड़का जिसने धक्का मारा था, बेंच के ऊपर लिखे अक्षरों को दिखाकर बोला, "साले, यह साहब लोगों के वास्ते है, तुम्हारे लिए नहीं।"

लज्जा, क्रोध तथा अपमान से अपूर्व की गीली आंखें लाल हो उठीं होठ कांपने लगे।

"साला, दूधवाला, आंखें दिखाता है?" सब एक साथ ऊंचे स्वर से हंस पड़े। एक ने उसके मुंह के सामने आकर अत्यन्त अश्लील ढंग से सीटी बजाई।

अपूर्व पल भर बाद ही शायद इन सबके ऊपर झपट पड़ता लेकिन कुछ हिन्दुस्तानी कर्मचारियों ने, जो कुछ दूर बैठे चिमनी साफ कर रहे थे, बीच में पड़कर उसे प्लेटफार्म से बाहर कर दिया। एक फिरंगी लड़का भागता हुआ आया और भीड़ में पैर बढ़ाकर अपूर्व के सफेद सिल्क के कुर्ते

पर जूते का दाग लगा गया। हिन्दुस्तानियों के इस दल से वह अपने को मुक्त करने के लिए खींचातानी कर रहा था। एक ने उसे झकझोरते हुए कहा, "अरे बंगाली बाबू, अगर साहब लोगों का शरीर छुएगा तो एक साल की जेल हो जायगी। जाओ भागो।" एक ने कहा, "अरे बाबू है, धक्का मत दो।" जो लोग कुछ नहीं जानते थे वे कारण पूछने लगे। जो लोग जानते थे तरह-तरह की सलाह देने लगे। अपूर्व आफिस का पहनावा छोड़कर सामान्य बंगाली की पोशाक में स्टेशन गया था। इसलिए फिरंगियों ने उसे दूधवाला समझकर मारा था।

अपूर्व सीधा स्टेशन मास्टर के कमरे में गया। स्टेशन मास्टर अंग्रेज थे। मुंह उठाकर उन्होंने देखा। अपूर्व ने जूते का दाग दिखाकर घटना सुनाई, वे अवज्ञापूर्वक बोले, "योरोपियन की बैंच पर बैठे क्यों ?"

अपूर्व ने कहा, "मुझे मालूम नहीं था।"

"मालूम कर लेना चाहिए था।"

"क्या इसीलिए उन्होंने एक भले आदमी पर हाथ उठाया ?"

साहब ने दरवाजे की हाथ बढ़ाकर कहा, "गो-गो-गो, चपरासी इसको बाहर कर दो।" कहकर वे अपने काम में लग गये।

अपूर्व न जाने किस तरह घर लौटा। दो घंटे पहले रामदास के साथ इस रास्ते से जाते समय उसके हृदय में जो दुर्भावना सबसे अधिक खटक रही थी अकारण मध्यस्थता था। उत्पात और अशान्ति की मात्रा उससे घटेगी नहीं, बल्कि बढ़ेगी ही। इसके अतिरिक्त उस ईसाई लड़की का कितना ही अपराध क्यों न हो, वह नारी है। इसलिए पुरुष के मुंह से ऐसे कठोर वचन निकालना उचित नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त उस समय एकदम अकेली थी। जब उस लड़की की बात याद आई तो वह साहब की लड़की मालूम हुई, साधारण नारी जाति की नहीं। जिन फिरंगी लड़कों ने कुछ पल पहले अकारण ही उसका अपमान किया, जिनकी कुशिक्षा, नीचता और बर्बरता की सीमा नहीं थी, उनकी ही बहिन जान पड़ी। जिस साहब ने अत्यन्त अविचार के साथ उसे कमरे से बाहर निकाल दिया था, मनुष्य का सामान्य अधिकार भी नहीं दिया था उसकी परम आत्मीय ज्ञात हुई।

तिवारी ने आकर कहा, "छोटे बाबू, भोजन तैयार है।"

"चलो आता हूं," अपूर्व ने कहा।

दस-पन्द्रह मिनट बाद उसने फिर कहा, "भोजन ठंडा हो रहा है।"

अपूर्व ने क्रोधित होकर कहा, "क्यों बेकार तंग करता है तिवारी ? मैं नहीं खाऊंगा। मुझे भूख नहीं है।"

उसकी आंखों में नींद नहीं आई। रात जितनी ही बढ़ने लगी, सारा

बिछौना मानो कांटे की सेज हो उठा। एक मर्मान्तक वेदना उसके सम्पूर्ण अंग में चुभने लगी और उसी के बीच-बीच स्टेशन के उन हिन्दुस्तानियों की याद आने लगी जिन्होंने संख्या में अधिक होते हुए भी उसकी लांछना को कम करने में बिल्कुल ही भाग नहीं लिया। बल्कि उसके अपमान की मात्रा बढ़ाने में ही सहायता की। देशवासियों के विरुद्ध देशवासियों की इतनी लज्जा, इतनी ग्लानि संसार के और किसी देश में है? ऐसा क्यों हुआ? कैसे हुआ? इन्हीं बातों पर विचार करता रहा।

चार

दो-तीन दिन शान्तिपूर्वक बीत गए। ऊपर की मंजिल से साहब का अत्याचार जब किसी नए रूप में प्रगट नहीं हुआ तो अपूर्व ने समझ लिया कि उस ईसाई लड़की ने उस दिन की बातें अपने पिता को नहीं बताईं। लड़की से भी सीढ़ियों में दो-एक बार भेंट हुई। वह मुंह मोड़ कर उतर जाती है। उस दिन सवेरे छोटे बाबू को भात परोसकर तिवारी ने प्रसन्नता भरे स्वर में कहा, "लगता है साहब ने कोई नालिश-वालिश नहीं की।"

अपूर्व ने कहा, "जो गरजता है बरसता नहीं है।"

तिवारी बोला, "हम लोगों का डेरे में अधिक दिन रहना नहीं हो सकेगा। साले, सब कुछ खाते पीते हैं। याद आते ही···।"

"चुप रह तिवारी," वह उस समय भोजन कर रहा था। बोला, "इसी महीने के बाद छोड़ देंगे। लेकिन अच्छा मकान तो मिले।"

उसी दिन शाम को आफिस से लौटकर तिवारी की ओर देखकर अपूर्व स्तब्ध रह गया। इतनी ही देर में वह जैसे सूखकर आधा हो गया था। पूछा, "क्या हुआ तिवारी?"

प्रत्युत्तर में उसने बादामी रंग के कुछ कागज अपूर्व को पकड़ा दिए। फौजदारी अदालत का सम्मन था। वादी जे० डी० जोसेफ थे और प्रतिवादी तीन नम्बर कमरे का अपूर्व नामक बंगाली और उसका नौकर था। दोपहर को कचहरी का चपरासी दे गया था।

चपरासी के साथ वही साहब आया था। परसों हाजिर होने की तारीख है। अपूर्व ने कागज पढ़कर कहा, "कोर्ट में देखा जायगा।"

यह कहकर वह कपड़े बदलने कमरे में चला गया।

तारीख वाले दिन तिवारी को साथ लेकर अपूर्व अदालत में हाजिर हुआ। इस विषय में रामदास से सहायता लेने में उसे लज्जा अनुभव हुई। केवल ज़रूरी काम का बहाना करके उसने एक दिन की छुट्टी ले ली थी।

डिप्टी कमिश्नर की अदालत में मुकदमा था। वादी जोसेफ—सच झूठ जो मन में आया, कह गया। अपूर्व ने न तो कोई बात छिपाई और न कोई बात बढ़ाकर ही कही। बाकी की गवाह उसकी लड़की थी। अदालत के सामने उस लड़की का नाम और बयान सुनकर अपूर्व खिन्न रह गया। आप किसी स्वर्गीय राजकुमार भट्टाचार्य महाशय की सुपुत्री है। पहले ये लोग पारीसाल में थे। लेकिन अब बंगलौर में है। आपका नाम मेरी भारती है। इनकी मां किसी मिशनरी के साथ बंगलौर चली आई थी। वहीं जोसेफ साहब के रूप पर मोहित होकर उसने विवाह कर लिया। भारती ने पैतृक भट्टाचार्य नाम को निरर्थक समझकर उसे त्याग दिया और जोसेफ नाम को ग्रहण कर लिया। तभी से वह मिस मेरी जोसेफ के नाम से प्रसिद्ध हैं। न्यायाधीश के प्रश्न करने पर वह फल-फूल उपहार देने की बात से इनकार कर गई। लेकिन उसके कंठ स्वर में असत्य बोलने की घबराहट इतनी स्पष्ट हो गई कि केवल न्यायाधीश ही नहीं उसके चपरासी तक को धोखा नहीं दे सकी। फैसला उसी दिन हो गया। तिवारी छूट गया लेकिन अपूर्व पर बीस रुपया जुर्माना हो गया। निरपराध होते हुए दंडित होने पर उसका मुंह सूख गया। रुपए देकर घर आकर देखा दरवाजे के सामने रामदास खड़ा है। अपूर्व के मुंह से निकल पड़ा "बीस रुपए जुर्माना हुआ रामदास। अपील की जाए?"

उत्तेजना से उसकी आवाज कांप उठी। रामदास ने उसके दांए हाथ को थामकर हंसते हुए कहा, 'बीस रुपए जुर्माने के बदले दो हजार की हानि उठाना चाहते हैं?"

"होने दो। लेकिन यह तो जुर्माना है। दंड है। राजदंड है।"

रामदास हंसते हुए बोला, "किसका दंड? जिसने झूठी गवाही दिलाई। लेकिन इसके ऊपर भी एक अदालत है। उसका न्यायाधीश अन्याय नहीं करना। वहां आप निर्दोष हैं।"

अपूर्व बोला, "लेकिन लोग तो ऐसा नहीं समझेंगे रामदास। उनके सामने तो वह बदनामी हमेशा के लिए बनी रहेगी।"

रामदास ने कहा, "नदी किनारे टहल आयें।" चलते हुए रास्ते में वह बोला, "अपूर्व बाबू, विद्या में आपसे छोटा होते हुए भी उम्र में आपसे बड़ा हूं मैं। अगर कुछ कहूं तो खयाल न करना।"

अपूर्व मौन रहा ।

रामदास ने कहा, वह इस मामले को जानता था। लोग जानते हैं कि 'हालदार' के साथ जोसेफ का मुकदमा चलने पर अंग्रेजी न्यायालय में क्या होता है। वीस रुपए जुर्माने की बदनामी···!

"लेकिन यह तो बिना अपराध का दंड हुआ रामदास ?"

"हां, बिना अपराध मैं भी दो वर्ष जेल में रह आया हूं।"

"दो वर्ष जेल में ?"

"हां, दो वर्ष," फिर हंसकर बोला, "अगर अपने कुर्ते को उतार दूं तो देखोगे कि बेंतों के दागों से कोई स्थान बचा नहीं है।"

"बेंत भी लग चुके हैं रामदास ?"

रामदास हंसकर बोला, "हां, ऐसा ही। बिना अपराध के भी मैं इतना निर्लज्ज हूं कि लोगों को मुंह दिखाता हूं और आप बीस रुपए जुर्माने की बदनामी नहीं सह सकते।"

अपूर्व उसका मुंह देखकर चुप हो गया। रामदास बोला, "अच्छा चलिए आपको पहुंचाकर घर जाऊं।"

"अभी ही चले जाओगे ? अभी तो बहुत सी बातें जाननी हैं।"

रामदास ने हंसकर कहा, "सब आज ही जान लोगे ? यह नहीं होगा। मुझे सम्भवतः बहुत दिनों तक बताना पड़ेगा।"

बहुत दिनों पर उसने इस तरह जोर दिया कि अपूर्व आश्चर्य से उसे देखता रह गया। लेकिन कुछ समझ नहीं पाया। रामदास गली के अन्दर नहीं गया। बाहर से ही बिदा लेकर स्टेशन चला गया।

अपूर्व ने द्वार पर धक्का दिया। तिवारी ने आकर दरवाज़ा खोल दिया। वह घर के कामों में लगा हुआ था, उसका चेहरा उतर गया था। वह बोला, "उस समय जल्दबाजी में दो नोट फेंक गए थे आप ?"

अपूर्व ने आश्चर्य पूछा, "कहां फेंक गया था जी ?"

"यहीं तो···" कहते हुए उसने दरवाजे के पास रखी मेज की ओर इशारा किया, "आपके तकिए के नीचे रख दिए हैं। बाहर कहीं नहीं गिरे यही सौभाग्य है।

वे नोट कैसे गिर पड़े ? यही सोचते हुए अपूर्व अपने कमरे में चला गया।

पांच

तिवारी ने रात को रोते हुए हाथ जोड़कर कहा, "इस बूढ़े की बात मानिए बाबू। चलिए कल सवेरे ही हम लोग जहां भी हो भाग चलें।"

अपूर्व ने कहा, "कल ही ? सुनूं तो ? क्या धर्मशाला में चले चलें ?"

तिवारी बोला, "इससे तो वही अच्छा है। साहब मुकदमे में जीत गया है। अब किसी दिन हम दोनों को पीटा भी जायगा।"

अपूर्व सहन न कर सका। क्रोधित होकर बोला, "मां ने क्या तुझे मेरे घाव पर नमक छिड़कने के लिए भेजा था ? मुझे तेरी जरूरत नहीं, तू कल ही घर चला जा। मेरे भाग्य में जो बदा है वही होगा।"

तिवारी फिर कुछ नहीं बोला। चुपचाप सोने चला गया। उसकी बात अपूर्व को अपमानजनक जान पड़ी। इसलिए उसने ऐसा उत्तर दिया था। अगले दिन नए मकान की खोज होने लगी। तलवलकर को छोड़कर आफिस के लगभग सभी लोगों से उसने कह दिया था। इसके बाद तिवारी ने फिर कोई शिकायत नहीं की।

स्वाभाविक बात थी कि मुकदमा जीत जाने के बाद जोसेफ परिवार के विचित्र उपद्रव नए-नए रूप में प्रगट होंगे। लेकिन उपद्रव की बात कौन कहे, ऊपर कोई रहता है या नहीं, कभी-कभी यह सन्देह होने लगा था।

उपद्रव रहित एक सप्ताह के बाद एक दिन आफिस से उसके लौटने पर तिवारी ने प्रसन्न होकर कहा, "आपने सुना छोटे बाबू ?"

"क्या ?"

"साहब का पैर टूट गया। अस्पताल में है। देखें, बचता है या नहीं।"

"तुझे कैसे पता लगा ?"

"तिवारी बोला, "मकान मालिक का मुनीम हमारे जिले का है। वह आया था किराया लेने, उसी ने बताया है।"

"हो सकता है," कहकर अपूर्व कपड़े बदलने अपने कमरे में चला गया।

तिवारी को पूर्ण विश्वास था कि म्लेच्छ होकर ब्राह्मण के सिर पर जिसने घोड़े की तरह पैर पटका है, उसका पैर न टूटेगा तो क्या होगा ? अगले दिन अपूर्व ने तिवारी को बुलाकर कहा, "एक मकान मिला है जाकर देख आओ।"

तिवारी ने हंसकर कहा, "अब दूसरे मकान जरूरत नहीं पड़ेगी बाबू

मैंने सब ठीक कर लिया है। अगली पहली तारीख को जाने वाले चले जायेंगे।"

मकान बदलने में कम झंझट नहीं है, अपूर्व अच्छी तरह जानता था। लेकिन साहब की अनुपस्थिति में जो उपद्रव बंद हो गया है वह उनके लौट आने पर भी बन्द ही रहेगा उसे ऐसी आशा नहीं थी। आफिस जाने से पहले तिवारी ने छुट्टी मांगते हुए बताया कि आज दोपहर को वह बर्मियों के मन्दिर में तमाशा देखने जायेगा। अपूर्व ने हंसकर पूछा, "तुझे तमाशा देखने का कब से शौक हुआ है। तिवारी ?"

"विदेश का सब कुछ देख लेना चाहिए बाबू।"

अपूर्व बोला, "अवश्य, अवश्य। लंगड़ा साहब अस्पताल में है। इस समय बाहर जाने में कोई डर नहीं है। चले जाना, लेकिन जल्दी ही लौट आना।"

साहब की दुर्घटना के समाचार से वह इतना प्रसन्न था कि अपने यहां के जिस व्यक्ति से कल उसका परिचय हुआ था आज उसके प्रस्ताव को अस्वीकार नहीं कर सका।

उसे जाने की अनुमति देकर अपूर्व आफिस चला गया। उसके एक घंटे बाद ही तिवारी को उसके गांव का वही व्यक्ति आकर बर्मियों का तमाशा दिखाने ले गया।

तीसरे पहर घर लौटकर अपूर्व ने देखा, दरवाजे में ताला लगा है। तिवारी ने वह पुराना ताला बदलकर यह नया ताला क्यों लगाया, वह दो मिनट तक बाहर खड़ा सोचता रहा। तभी ऊपर से वही ईसाई लड़की बोली, "मैं खोलती हूं।" कहकर वह नीचे आई और बोली, "मां कह रही थीं कि अपना ताला लगाकर मैंने अच्छा नहीं किया। ऐसा न हो कि मैं विपत्ति में पड़ जाऊं।" फिर द्वार खोलते हुए बोली, "मां बहुत डरपोक हैं। बिगड़ रही थी कि अगर आप विश्वास न करेंगे तो मुझको ही चोरी के अपराध में जेल जाना पड़ेगा। लेकिन मुझे तनिक भी डर नहीं लगा।"

अपूर्व बोला, "लेकिन हुआ क्या ?"

"कमरे में जाकर देखिए, क्या हुआ है।"

अपूर्व ने कमरे में घुसकर देखा। दोनों ट्रन्कों के ताले टूटे पड़े हैं। पुस्तकें, कागज, बिस्तर, कपड़े आदि फर्श पर पड़े हैं। उसके मुंह से निकला, "यह सब कैसे हुआ ? किसने किया ?"

भारती बोली, "भले ही किसी ने भी किया हो। लेकिन मैंने नहीं किया।" फिर उसने पूरी घटना सुनाई…।" दोपहर को तिवारी जब तमाशा देखने जा रहा था तो भारती की मां ने उसे देखा था। थोड़ी देर

बाद नीचे के कमरे में खटखट सुनकर भारती को देखने के लिए कहा। उनकी छत के एक किनारे एक छेद है। उसी छेद से देखते ही भारती चिल्ला उठी। जो लोग बक्स तोड़ रहे थे वे जल्दी से भाग गए। तब वह नीचे आकर दरवाजे में ताला लगाकर पहरा देने लगी कि कहीं वे लोग फिर न लौट आयें।

अपूर्व पलंग पर बैठ गया। भारती ने कहा, "इस कमरे में आपका भोजन का तो कोई सामान नहीं है? क्या मैं कमरे में आ सकती हूं?"

"आइए," अपूर्व ने कहा। फिर विमूढ़ की तरह उससे पूछा, "अब मुझे क्या करना चाहिए?

भारती ने कहा, "सबसे पहले यह देखना चाहिए कि क्या-क्या चीजें चोरी गई हैं।"

अपूर्व ने कहा, "अच्छा, देखिए न क्या-क्या चोरी गया है?"

भारती ने हंसकर कहा, "न तो मैंने आपके ट्रंक की चीज़ों को पहले कभी देखा था और न चोरी ही की है। इसलिए क्या था और क्या नहीं है, मैं कैसे जान सकती हूं।"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "आप ठीक कहती हैं। अच्छा तो फिर तिवारी को आ जाने दीजिए। वही सब कुछ जानता है," कहकर इधर-उधर बिखरी चीजों को करुणा भरी नज़रों से देखने लगा।

उसका निरुपाय चेहरा देखकर भारती हंसती हुई बोली, "वह जानता है और आप नहीं जानते। अच्छा मैं आपको सिखा देती हूं कि किस तरह जाना जाता है।" इतना कहकर फर्श पर बैठ गई और ट्रंक को पास खींचती हुई बोली, "अच्छा, पहले कपड़े-लत्ते संभाल लूं। यह क्या है? शायद मुर्शिदावादी सिल्क का सूट है? ऐसे कितने सूट हैं?

"दो सूट।"

"मिल गए। यह एक और जोड़ा है। अच्छा, धोती एक, दो, तीन—चादर एक, दो, तीन—ठीक मिल गया। शायद तीन ही जोड़ी थी?"

अपूर्व बोला, "हां, तीन ही जोड़ी थीं।"

"यह फ्लालेन का सूट है। आप वहां शायद टेनिस खेलते थे। हां तो एक, दो, तीन—उस अलमारी में एक, और एक आप पहने हैं—तो फिर सूट पांच ही जोड़े हैं?"

अपूर्व प्रसन्न होकर बोला, "हां ठीक है। पांच ही जोड़े हैं।"

इतने में एक चमकीली वस्तु दिखाई पड़ी। उसे बाहर निकालकर बोली, "यह चेन सोने की है। घड़ी कहां गई?"

अपूर्व प्रसन्न होकर बोला, "खैर है कि बच गई। चेन शायद वे लोग

देख नहीं सके। यह मेरे पिताजी की निशानी है।"

"लेकिन घड़ी ?"

"यहां है," कहकर अपूर्व ने घड़ी दिखा दी।

भारती बोली, "चेन और घड़ी मिल गई। अब अंगूठियां बताइए।"

अपूर्व बोला, "मेरे पास एक भी नहीं है।"

"चलो, यह भी अच्छा हुआ। लेकिन सोने के बटन ?"

अपूर्व बोला, "टसर के पंजाबी कुर्ते में लगे थे।"

भारती ने अलमारी की ओर देखा। फिर हंसकर बोली, "लगता है कुर्ते के साथ वे बटन भी चले गए।"

फिर पूछा, "ट्रंक में रुपया था न ?"

अपूर्व के कहने पर भारती बोली, "तो फिर वह भी चला गया।"

"कितना था, यह मालूम नहीं।"

"यह तो मैं पहले ही समझ गई हूं। आपके पास मनी बैग है न ? लाइए, मुझे दीजिए। देखूं।"

अपूर्व ने मनी बैग भारती को दे दिया। वह हिसाब लगाकर बोली, "दो सौ पचास रुपए आठ आने हैं। घर से कितने लेकर चले थे ?"

अपूर्व बोला, "छै सौ रुपए।"

भारती लिखने लगी,—जहाज का किराया, तांगे का भाड़ा, कुली की मजदूरी—पहुंचकर घर के लिए तार भेजा था न ? अच्छा, उसका भी रुपया और उसके बाद इधर दस दिनों का खर्च।"

अपूर्व बोला, "वह तिवारी से बिना पूछे कैसे बता सकता हूं ?"

भारती बोली, "सब मालूम हो जाएगा। दो-एक रुपए का अन्तर पड़ सकता है। अधिक नहीं।" कागज़ पर अपने आप हिसाब लिखकर बोली, "इसके अतिरिक्त और कोई खर्च तो नहीं है न ?"

"नहीं।"

"तो फिर दो सौ अस्सी रुपए चोरी गए हैं।"

अपूर्व चकित होकर बोला, "इतने रुपए ?—रुकिए, बीस रुपए और कम कीजिए। जुर्माने का रुपया नहीं लिखा ?

"नहीं, वह अन्याय था, झूठमूठ का जुर्माना। वह मैं कम नहीं करूंगी।

अपूर्व चकित होकर बोला, "जुर्माना तो झूठमूठ हो सकता है लेकिन जुर्माना देना तो सच है।"

भारती बोली, "आपने दिया क्यों ? उस रुपए को मैं कम नहीं करूंगी। पूरे दो सौ अस्सी रुपए चोरी गए हैं।"

"नहीं—दो सौ साठ।"

"नहीं, दो सौ अस्सी रुपए।"

अपूर्व ने विवाद नहीं किया। इस लड़की की प्रखर बुद्धि तथा अ ्भुत तीक्ष्ण बुद्धि देखकर वह चकित रह गया।

अपूर्व ने पूछा, "पुलिस में खबर देना क्या ठीक होगा?"

भारती बोली, "क्यों नहीं? ठीक केवल इसलिए होगा कि उससे मेरी काफी खींचातानी होगी। वे आकर आपके रुपए दे जायेंगे—ऐसी तो आशा है नहीं।"

अपूर्व मौन रहा।

भारती बोली; चोरी तो हो गई। अब अगर वे लोग आयेंगे तो अपमान भी आरम्भ हो जायगा।"

"लेकिन कानून तो है?"

"कानून तो है। लेकिन मैं किसी भी दशा में यह नहीं करने दूंगी। कानून उस दिन भी था जिस दिन आप अकारण जुर्माना दे आए थे।"

अपूर्व बोला, "लोग अगर झूठ बोलें और झूठे मामले को सिद्ध करें तो इसमें कानून का क्या दोष?"

भारती लज्जित सी हो गई। बोली, "लोग झूठ न बोलेंगे। झूठे मामले न चलायेंगे तभी जाकर कानून निर्दोष होगा—क्या आपका मत यही है? अगर ऐसा हो तो ठीक ही है। लेकिन संसार में ऐसा होता नहीं।" इतना कह कर वह हंस पड़ी। लेकिन अपूर्व मौन रहा। भारती का यह चोरी छिपाने का आग्रह, इस समय उसे अच्छा नहीं लगा। किसी गुप्त षडयन्त्र की आशंका से उसका अन्त:करण देखते ही देखते कलुषित हो उठा। उस दिन का उससे डरते हुए संकोच सहित फल-फूल देने के लिए आना। उसके बाद घटनाओं को विकृत तथा मिथ्या बनाकर कहना। न्यायालय में गवाही देना—पल में सारा इतिहास, बिजली की भांति चमक उठा। चेहरा गम्भीर और कण्ठ स्वर भारी हो उठा। यह अभिनय है, छलना है।

उसके चेहरे के इस आकस्मिक परिवर्तन को भारती ने लक्ष्य किया लेकिन कारण न समझ सकी। बोली, "मेरी बातों का आपने उत्तर नहीं दिया?"

अपूर्व ने कहा, "और क्या उत्तर दूं? चोर को बढ़ावा नहीं देना चाहिए। पुलिस को खबर देना ही ठीक होगा।"

भारती भयभीत होकर बोली, "यह कैसी बात? न तो चोर ही पकड़ा जायगा और न रुपए ही मिलेंगे। बीच में मुझे लेकर खींचातानी होगी।

मैंने देखा है, ताला बन्द किया है। सभी सजाकर रखा है । मैं विपत्ति में पड़ जाऊंगी ।"

अपूर्व ने कहा, "जो कुछ हुआ है आप वही कह दीजिएगा ।"

भारती ने व्याकुल होकर कहा, "कहने से क्या होगा ? अभी उस दिन आपके साथ इतना बड़ा अन्याय हो गया । एक दूसरे से परिचय नहीं । बातचीत नहीं । इसी बीच अचानक आपके लिए दिल में इतना दर्द क्यों है ? पुलिस कैसे विश्वास करेगी ?"

अपूर्व का मन और भी सन्देह से भर उठा । बोला आपकी आरम्भ से अन्त तक की झूठी बातों पर तो पुलिस ने विश्वास कर लिया और सच्ची बातों का विश्वास नहीं करेगी ? रुपया तो थोड़ा ही गया है, लेकिन चोर को विना दंड दिलाए न छोड़ूंगा।"

भारती बुद्धिहीन की तरह उसे देखती रही। फिर बोली, "आप क्या कहते हैं अपूर्व बाबू ? पिताजी अच्छे व्यक्ति नहीं हैं। उन्होंने आप के प्रति बहुत बड़ा अन्याय किया है । मैंने इसमें जो कुछ सहायता करी है, उसे भी मैं जानती हूं । लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं आपके कमरे में घुस कर, ताला तोड़ कर रुपए चुराऊंगी । ऐसी बात आप सोच सकते हैं, लेकिन मैं नहीं सोच सकती । ऐसी बदनामी होने पर मैं बचूंगी कैसे ?"

कहते-कहते उसके होंठ फूल कर कांपने लगे। उन्हें ज़ोर से दबाते-दबाते तूफान की तरह कमरे से निकल कर चली गई ।

छः

अगली सुबह, न जाने क्या सोच कर अपूर्व थाने की ओर चल दिया। पुलिस में रिपोर्ट करना व्यर्थ है, यह वह जानता था । रुपए नहीं मिलेंगे— यही नहीं, हो सकता है कि चोर पकड़ा भी न जाए। लेकिन उस ईसाई लड़की पर उसके क्रोध और विद्वेष की सीमा नहीं थी। भारती ने स्वयं चोरी की है या चोरी करने में सहायता की है—इस विषय में तिवारी की तरह वह अभी तक निश्चिन्त नहीं हो सका था । लेकिन उसकी दुष्टता तथा छल ने उसे बुरी तरह विचलित कर दिया था । इस लड़की की गति-

विधि का रहस्य खोजने पर भी उसे नहीं मिला। उसने जो कुछ हानि की है उसके लिए उतना नहीं लेकिन आरम्भ से उसका विचित्र आचरण जैसे निरन्तर अपूर्व की बुद्धि का उपहास करता रहा है।

उसने अभी थाने में कदम भी नहीं रखा था कि पीछे से पुकार आई, "अरे अपूर्व तुम यहां कहां ?"

अपूर्व ने घूम कर देखा। निमाई बाबू खड़े हैं। आप बंगाल पुलिस के बहुत बड़े अफसर हैं। अपूर्व के पिता ने इनकी नौकरी लगाई थी। निमाई बाबू उनको दादा कहकर पुकारते थे और इसी सम्बन्ध के कारण अपूर्व के घर के सभी लोग उन्हें निमाई चाचा कहते थे। स्वदेशी आंदोलन के समय गिरफ्तार होने के बाद अपूर्व को जो किसी प्रकार का कष्ट नहीं सहना पड़ा था उसका बहुत कुछ श्रेय इन्हीं को था। अपूर्व ने प्रणाम करके, अपनी नौकरी के बाद बताकर पूछा, "लेकिन आप इस देश में कैसे ?"

निमाई बाबू ने अशीर्वाद देते हुए कहा, "बेटा, तुम तो अभी कल के हो। जब तुम्हें घरद्वार छोड़कर इतनी दूर आना पड़ा है तो क्या मैं नहीं आ सकता ? लेकिन मेरे पास समय नहीं है। तुम्हें तो आफिस जाने में अभी देर है। आओ, चलते-चलते ही दो बातें कर लूंगा। मां अच्छी है न ? और भाई भी ?"

"सब ठीक हैं" कह कर अपूर्व ने पूछा, "आप कहां जायेंगे ?"

"जहाज घाट पर। चलो न मेरे साथ।"

"चलिए—आपको क्या कहीं और भी जाना है ?"

निमाई बाबू हंस कर बोले, "जाना हो भी सकता है। जिस महापुरुष को ले जाने के लिए घर छोड़कर इतनी दूर आना पड़ा है, उनकी इच्छा पर सब निर्भर है। उनका फोटोग्राफ है, लिखित विवरण है, लेकिन यहां की पुलिस में इतनी सामर्थ्य नहीं कि उन पर हाथ डाल सके। क्या मैं पकड़ पाऊंगा ? यही सोच रहा हूं।"

अपूर्व ने उत्सुक होकर पूछा, "यह महापुरुष कौन है चाचाजी ? जब आप आए है तब तो अवश्य ही कोई खूनी आसामी है ?"

निमाई बाबू बोले, "यह तो नहीं बताऊंगा बेटा। क्या हैं और क्या नहीं हैं ? यह बात ठीक-ठीक कोई भी नहीं जानता। इनके विरुद्ध कोई निश्चित अभियोग भी नहीं है। फिर भी इनकी निरन्तर निगरानी करते रहने में इतनी बड़ी सरकार मानों निष्प्राण हो गई है।"

अपूर्व ने पूछा, "कोई आसासी है ?"

निमाई बाबू बोले "भैया पोलिटिकल तो किसी समय तुम लोगों को भी कहते थे। लेकिन वह हैं राजद्रोही। राजा के शत्रु। हां, शत्रु कहलाने

योग्य तो अवश्य है। बलिहारी है उनकी प्रतिभा की जिन्होंने इस लड़के का नाम सव्यसाची रखा था। बन्दूक-पिस्तौल चलाने में निशाना अचूक होता है। तैर कर पद्मा नदी को पार कर जाते हैं, कोई बाधा नहीं पड़ती। इस समय यह अनुमान किया गया है कि चटगांव के रास्ते से पहाड़ पार करके इन्होंने बर्मा में पदार्पण किया है। अब मांडले से नौका द्वारा या जहाज से रंगून आने वाले हैं। या रेल द्वारा उनका शुभागमन हो चुका हैं। कोई पक्की खबर नहीं है। लेकिन वह रवाना हो चुके हैं, यह बात निश्चित है, उनके उद्देश्य के संबंध में कोई सन्देह या तर्क नहीं है। शत्रु मित्र सभी के मन में उनका सम्मान स्थिर सिद्धान्त बना हुआ है। देश में आकर किस मार्ग से वे अपना कदम बढ़ायेंगे। हम नहीं जानते। लेकिन देखो बेटा ये सब बातें किसी को बताना मत। नहीं तो इस बुढ़ापे में सत्ताईस साल की पेन्शन रह जायगी।"

अपूर्व उत्साहित होकर बोला, "इतने दिनों ये कहां क्या कर रहे थे। सव्यसाची नाम मैंने तो कभी पहले सुना नहीं।"

निमाई बाबू ने हंसते हुए कहा, "अरे भैया, इतने बड़े आदमियों का काम क्या केवल एक नाम से चलता है? सम्भवतः अर्जुन की तरह इनके भी अनेक नाम प्रचलित हैं। उन दिनों शायद सुना भी होगा अब पहचान नहीं रहे हो। इस बीच में क्या कर रहे थे, इसकी भी पूरी जानकारी नहीं है। राजशत्रु अपने काम ढोल पीट-पीट कर करना पसन्द नहीं करते। फिर भी मैं इतना जानता हूं कि वे पूना में तीन महीने की और दूसरी बार सिंगापुर में तीन वर्ष की सजा भुगत चुके हैं। यह लड़का दस-बारह भाषाओं में इस प्रकार बोल सकता है कि किसी विदेशी के लिए यह जान लेना कठिन है कि वे कहां के रहने वाले हैं? सुना है जर्मनी के किसी नगर में डॉक्टरी पढ़ी है। फ्रांस में इंजीनियरिंग पास किया है। इंग्लैंड की नहीं जानता। लेकिन जब वहां रह चुका है वह अवश्य ही कुछ-न-कुछ पास किया ही होगा। इन लोगों को न तो दयामाया है, न धर्म-कर्म है। न कहीं घर-द्वार है। बाप रे बाप, हम लोग भी उसी देश के वासी हैं। लेकिन इस लड़के ने कहां से आकर बंगभूमि में जन्म ले लिया यह तो सोचने पर भी नहीं जान पड़ता।"

अपूर्व कुछ न बोला। कुछ देर मौन रह कर उसने पूछा, "इनको क्या आप आज ही गिरफ्तार करेंगे?"

निमाई बाबू हंसकर बोले, "पहले पाऊं तो।"

अपूर्व ने कहा, "मान लीजिए पा गए तो?"

"नहीं बेटा, इतना आसान काम नहीं है। मुझे पूरा विश्वास है कि

अन्तिम पल में वह किसी और रास्ते से खिसक गया होगा।"

"और अगर वह आ जाएं तो?"

निमाई बाबू ने कुछ सोच कर कहा, " उस पर बराबर नज़र रखने का आदेश मिला है। दो दिन देखता हूं। पकड़ने की अपेक्षा जांच करना जरूरी है। सरकार का यही विचार है।"

अपूर्व इस बात पर विश्वास न कर सका। क्योंकि वे उसके लिए जो कुछ भी हों फिर भी हैं तो पुलिस के आदमी। उसने पूछा, "उनकी उम्र क्या है?"

"लगभग तीस-बत्तीस की होगी।"

"देखने में कैसे हैं?"

"यही तो आश्चर्य है बेटा। अत्यन्त साधारण मनुष्य है। इसीलिए तो पहचानना कठिन है। पकड़ना भी कठिन है। हम लोगों की रिपोर्ट में यही बात विशेष रूप से लिखी हुई है।"

अपूर्व बोला, "लेकिन पकड़े जाने के भय से ही तो यह पैदल-वन लांघ कर आए हैं।"

निमाई बाबू बोले, "हो सकता है कोई विशेष उद्देश्य हो। हो सकता है इस रास्ते को भी जान लेना चाहता हो। कुछ भी नहीं कहा जा सकता अपूर्व। ये लोग जिस पथ के पथिक है उसमें साधारण मनुष्य के विचार के साथ इनके विचार मेल नहीं खाते। आज इसकी भूल है या हम लोगों की भूल है इसकी परीक्षा होने वाली है। ऐसा भी सम्भव है कि हम लोगों की सारी दौड़-धूप व्यर्थ हो जाए।"

अपूर्व बोला, "ऐसा ही हो तो अच्छा है। मैं अन्तः करण से यही प्रार्थना करता हूं चाचाजी।"

निमाई बाबू हंस पड़े। बोले, "मूर्ख लड़के, कहीं पुलिस से ऐसी बात कही जाती है? तुमने अपने घर का-क्या नम्बर बताया? तीस? हो सका तो कल आऊंगा। सामने की जेटी पर ही शायद यहां का स्टीमर खड़ा होता है। अच्छा, तुम्हारे आफिस का समय हो चुका है। नई नौकरी है। देर करना ठीक नहीं।" यह कह कर वे दूसरी ओर घूम आए।

अपूर्व ने कहा, "देर ही क्यों आफिस में गैर हाजिरी हो जाने पर मैं आपको छोड़ूंगा नहीं। मैं नहीं चाहता कि वे अब आपके हाथ पड़ जायें। लेकिन यदि दुर्घटना हो भी जाए तो मैं एक बार उन्हें देख तो लूंगा। चलिए।"

इच्छा न होने पर भी निमाई बाबू ने विशेष आपत्ति नहीं थी। केवल थोड़ा सा सावधान करते हुए कहा, "देखने का लोभ होता है, मैं इसे

अस्वीकार नहीं करता। लेकिन ऐसे लोगों से किसी प्रकार परिचय बढ़ाना भी भयानक है। यह जान लो अपूर्व ? अब तुम लड़के नहीं हो। पिता जीवित नहीं है। भविष्य को भी सोचना चाहिए।"

अपूर्व हंसकर बोला, "परिचय का अवसर आप लोग किसी को देते कहां है चाचाजी। कोई अपराध नहीं। कोई अभियोग नहीं। फिर भी उनको जाल में फंसाने आप इतना दूर चले आए हैं।"

निमाई बाबू तनिक-सा मुस्करा पड़े। बोले, "यह तो कर्त्तव्य है।"

जिस समय दोनों जेटी पर पहुंचे, इस बड़ी नदी का विशाल स्टीमर किनारे लगने ही वाला था। पांच-सात पुलिस अधिकारी, सादी पोशाक में पहले से ही खड़े थे। निमाई बाबू के प्रति उन लोगों की आंखों का एक प्रकार का संकेत देखकर अपूर्व उन्हें पहचान गया। वे सभी भारतीय थे। भारत के कल्याण के लिए सुदूर बर्मा में एक विद्रोही का शिकार करने आए हैं। शिकार की वस्तु लगभग हाथ आ चुकी है। सफलता का आनन्द तथा उत्तेजना की प्रच्छन्न दीप्ति उनके चेहरे पर प्राप्त हो रही है।

जहाज के खलासी उस समय जेटी पर रस्सी फेंक रहे थे। कितने ही लोग रेलिंग पकड़े देख रहे थे। डेक पर शोर-शराबे और दौड़-धूप की सीमा नहीं थी। सम्भव है इन्हीं लोगों के बीच खड़ा एक व्यक्ति उत्सुक दृष्टि से किनारे की प्रतीक्षा कर रहा हो। लेकिन अपूर्व की दृष्टि में सम्पूर्ण दृश्य आंखों के आंसुओं से एकदम धुंधला और अस्पष्ट हो उठा। ऊपर-नीचे जल में, स्थल में इतने नर-नारी खड़े हैं किसी को कोई शंका नहीं। किसी का कोई अपराध नहीं। केवल जिस व्यक्ति ने अपने युवा हृदय के समस्त सुख, समस्त स्वार्थ तथा सभी आशाओं का स्वेच्छा से विसर्जन कर दिया है। कारागार तथा मृत्यु की राह केवल उसी के लिए मुंह वाए खड़ी है।

जहाज जेटी पर आकर लग गया। काठ की सीढ़ी नीचे लगा दी गई। लेकिन अपूर्व नहीं हटा। वहीं निश्चल पाषाण मूर्ति के समान खड़ा आप ही आप कहने लगा कि क्षण भर बाद तुम्हारे हाथ में हथकड़ी पड़ जाएगी। उत्सुक नर-नारी तुम्हारी लांछना तथा अपमान आंख फाड़-फाड़कर देखेंगे। वे जान भी न पायेंगे कि उन्हीं लोगों के लिए तुमने सर्वस्व त्याग कर दिया है। इसलिए इन लोगों के बीच तुम्हारा रहना न हो सकेगा !—उसकी आंखों से आंसू झर-झर गिरने लगे। और जिसे उसने कभी देखा नहीं उसी को सम्बोधित करके मन ही मन कहने लगा—"तुम तो हम लोगों की भांति सीधे-सादे मनुष्य नहीं हो। तुमने देश के लिए अपना सर्वस्व त्याग दिया है। इसीलिए देश की नौकाएं तुम्हें पार नहीं कर सकतीं। तुम्हें तैर कर पद्मा नदी को पार करना पड़ता है। इसीलिए देश का राजपथ तुम्हारे

लिए अवरुद्ध है। तुम्हें दुर्गम वन-पर्वत लांघने पड़ते हैं। हे मुक्ति पथ के अग्रदूत ! हे पराधीन देश के राज विद्रोही ! तुमको शत कोटि नमस्कार।"—इतने मनुष्यों की भीड़, इतने लोगों का आना-जाना, इतने लोगों की नजरें, किसी पर भी उसका ध्यान नहीं था। कितना समय बीत गया, इसकी उसे खबर ही नहीं थी। अचानक निमाई बाबू की आवाज से चौंककर झटपट आंख पोंछ हंसने की चेष्टा करने लगा। उसका करुण-विह्वल भाव देखकर वे आश्चर्य में पड़ गए। बोले, "जिस बात का भय था, वही हुआ। निकल गया।"

"कैसे निकल गया ?"

निमाई बाबू बोले, "अगर यही जानता तो वह कैसे निकल जाता ? सुबह तीन सौ यात्री—बीस-पच्चीस फिरंगी साहब, उड़िया, मदरासी, पंजाबी सौ-डेढ़ सौ के लगभग रहे होंगे। शेष बर्मी थे। पूछा नहीं किसकी पोशाक पहने और किसकी भाषा बोलते-बोलते बाहर निकल गया। समझ गए न भैया, हम तो पुलिस वाले हैं। पहचानने का उपाय नहीं है कि वे योरोपियन हैं या बंगाली। जगदीश बाबू सन्देह में लगभग छै बंगालियों को पकड़कर थाने में ले गए हैं। एक आदमी का चेहरा उनके चेहरे से मेल भी खा रहा है। ऐसा जान पड़ता है। लेकिन जान पड़ने से ही क्या होता है। वह नहीं है। क्या तुम चलोगे भैया ? एकबार उस आदमी को देखोगे ?"

अपूर्व की छाती धड़क उठी। बोला, "अगर आप उसे मारना-पीटना चाहते हैं तो मैं नहीं जाना चाहता।"

निमाई बाबू ने हंसकर कहा, "इतने आदमियों को तो हमने चुपचाप छोड़ दिया। और ये बेचारे बंगाली हैं। स्वयं बंगाली होते हुए क्या मैं इन पर अत्याचार करूंगा ? अरे भैया, पुलिस में सभी बुरे ही नहीं होते। मुंह बन्द करके जितना दुख हमें सहना पड़ता है, अगर तुम जानते, तो अपने इस दरोगा चाचा से इतनी घृणा न कर पाते अपूर्व।"

अपूर्व बोला, "आप अपना कर्तव्य पालन करने आए हैं। फिर आपसे घृणा क्यों करूंगा चाचा ?" कहकर उसने उनके चरण छू लिए।

निमाई बाबू ने प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिया और बोले, "चलो जरा जल्दी चलें। वे लोग भूख-प्यास से दुखी हो रहे होंगे। थोड़ी बहुत जांच करके छोड़ दिया जाए।"

थाने के सामने वाले बड़े कमरे में छै बंगाली बैठे थे। जगदीश बाबू ने इसी बीच उनके टीन के बक्स और गठरियां आदि खोलकर जांच आरम्भ कर दी थी। जिस व्यक्ति पर उन्हें विशेष रूप से सन्देह था उसे एक अ...

डा० डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी ... स्मारक
6932

कमरे में बन्द कर रखा था। ये लोग नौकरी की खोज में रंगून आए थे। इनके काम-धाम और विवरण आदि लिखकर और उनके सामान की जांच हो चुकने के बाद पॉलिटिकल सस्पेक्ट सव्यसाची को निमाई बाबू के सामने उपस्थित किया गया। वह खांसते-खांसते सामने आया। उम्र तीस-बत्तीस से अधिक न रही होगी। लेकिन जैसा दुबला-पतला था वैसा ही कमजोर भी था। जरा सी खांसी से हांफने लगता था। अन्दर के न जाने किस असाध्य रोग से उसका सम्पूर्ण शरीर भी तेजी से क्षय रोग की ओर दौड़ रहा था। आश्चर्यजनक थी तो केवल उसके उस रुग्ण चेहरे में दो अद्भुत आंखों की दृष्टि। ये आंखें छोटी हैं या बड़ी। लम्बी हैं या गोल। दीप्त हैं या प्रभाव-हीन इनका विवरण देने की चेष्टा ही व्यर्थ है। अत्यधिक गहरे जला-शय की भांति उनमें न जाने क्या है? भय लगता है। अपूर्व तो मुग्ध होकर उस ओर देख रहा था। अचानक निमाई बाबू ने उसकी वेशभूषा की बहार और ठाठबाट पर अपूर्व की दृष्टि आकर्षित करके हंसते हुए कहा, "बाबूजी को स्वास्थ्य तो चला गया है लेकिन शौक में अभी कोई कमी नहीं आई है। यह तो मानना ही पड़ेगा। क्या कहते हो अपूर्व?"

इतनी देर बाद उसके पहनावे पर नजर डालकर, मुंह फेरकर अपूर्व ने हंसी छिपा ली। उसके सिर पर बड़े-बड़े बाल हैं। लेकिन गर्दन और कानों के पास बिलकुल नहीं हैं। सिर में मांग कढ़ी हुई है। बालों में पड़े नींबू के तेल की गन्ध से कमरा भर उठा है। शरीर पर सिल्क का कुर्ता है। छाती की जेब में से रुमाल का थोड़ा-सा हिस्सा दिखाई दे रहा है। चादर नहीं है। बदन पर विलायती मिल की काली मखमली किनारी की बारीक धोती है। पैरों में हरे रंग के पूरे मोजे हैं। जो घुटनों पर लाल फीते से बंधे हैं। पालिश किया हुआ पम्प शू है पैरों में जिनके तलों को मजबूत और टिकाऊ बनाने के लिए लोहे के नाल जड़े हुए हैं। हाथ में हिरण के सींग की मूठ वाली बेंत की छड़ी है। इन कई दिनों तक जहाज की भीड़भाड़ में सभी कपड़े गन्दे हो गए हैं।

उनका सिर से पैर तक बार-बार निरीक्षण करके अपूर्व ने कहा, "चाचाजी, इस आदमी को आप कोई भी बात पूछे बिना छोड़ दीजिए। जिसे आप खोज रहे हैं, वह आदमी यह नहीं है। इसकी जमानत मैं देने को तैयार हूं।"

निमाई बाबू हंसकर पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है जी?"

"मेरा नाम गिरीश महापात्र है।"

"एकदम महापात्र—तुम तो तेल की खान में काम करते थे? अब रंगून में ही रहोगे? तुम्हारे बक्स और बिस्तर की तलाशी तो हो चुकी

है। देखूं तुम्हारे पर्स और जेब में क्या है ?

उसके पर्स से एक रुपया और छँ आने निकले। जेब से लोहे का कंपास नापने के लिए लकड़ी का फुटरूल, कुछ बीड़ियां, एक दियासलाई और गांजे की चिलम निकाली।

निमाई बाबू ने पूछा, "तुम गांजा पीते हैं ?"

उसने संकोच से उत्तर दिया, "जी नहीं।"

"तब यह चीज जेब क्यों है ?"

"रास्ते में पड़ी थी। उठाली। किसी के काम आ जायगी।"

तभी जगदीश बाबू कमरे में आ गए। निमाई बाबू ने हंसकर कहा, "देखो जगदीश यह कितने परोपकारी व्यक्ति हैं। किसी के काम आ जाए यह सोचकर इन्होंने गांजे की चिलम रास्ते से उठाकर रख ली है।" यह कहकर उन्होंने उसके दांए हाथ के अंगूठे को देखकर हंसते हुए कहा, "गांजा पीने का चिह्न यहां है भैया 'पीता हूं', कह देने से ही काम चल जाय। कितने दिन और जीना है। यही तो है तुम्हारा शरीर। बूढ़े की बात मानो, अब मत पीना।"

"जी नहीं, मैं तो पीता ही नहीं। मगर लोग बनाने को कहते हैं तो बना देता हूं।"

जगदीश चिढ़कर बोला, "दया के सागर हैं न। दूसरों को बना देते हैं, स्वयं नहीं पीते। झूठा कहीं का।"

अपूर्व ने कहा, "समय हो गया। अब जा रहा हूं चाचा जी।"

निमाई बाबू ने उठकर कहा, "अच्छा, तुम जा सकते हो महापात्र। क्यों जगदीश, जा सकता है न ?"

सम्मति देते हुए जगदीश बोला, "लेकिन मेरा विचार है, इस नगर में और कुछ दिनों तक निगरानी की आवश्यकता है। रात की मेल ट्रेन पर नजर रखना। वह बर्मा में आ गया है, यह खबर सच है।"

अपूर्व थाने से बाहर आ गया। उसके साथ ही महापात्र भी अपने टूटे हुए टीन के बक्स को, और चटाई में लिपटे गन्दे बिछौने के बंडल को बगल में दबाकर उत्तर का रास्ता पकड़कर धीरे-धीरे चला गया।

सात

कैसी आश्चर्यजनक बात है कि सव्यसाची नहीं पकड़ा गया। डेरे पर

लौटकर शेव बनाने से लेकर सन्ध्या पूजा, स्नान, भोजन, कपड़े पहनने, आफिस जाने आदि के नित्य के कामों में कोई बाधा नहीं हुई। लेकिन उनका मन किस सम्बन्ध में सोचने लगा था उसका कोई पता नहीं। उसकी आंखें, कान और बुद्धि—अपने सभी सांसारिक कार्यों से दूर होकर किसी अनजान, अदेखे राजद्रोही की चिन्ता में ही निमग्न हो गए।

अपूर्व को अनमना देखकर तलवलकर ने पूछा, "आज घर से कोई चिट्ठी आई है क्या?"

अपूर्व ने कहा, "नहीं तो।"

"घर में कुशल तो हैं न?"

"जितना जानता हूं—कुशल ही हैं।"

रामदास ने फिर कोई प्रश्न नहीं किया। टिफिन के समय दोनों एक साथ ही जलपान करते थे। रामदास की पत्नी ने एक दिन अपूर्व से अत्यन्त आग्रह से अनुरोध किया था कि जितने दिनों तक आपकी मां या घर की कोई और आत्मीय स्त्री इस देश में आकर डेरे की उपयुक्त व्यवस्था नहीं करती— उतने दिनों तक इस छोटी बहिन के हाथ की बनाई हुई थोड़ी-सी मिठाई आपको रोजाना लेनी ही पड़ेगी। अपूर्व सहमत हो गया था। आफिस का एक ब्राह्मण चपरासी वह सब ला देता था। आज भी जब वह पास के एकान्त कमरे में भोजन सामग्री सजाकर रख गया। तब भोजन कर के के लिए बैठते ही अपूर्व ने प्रसंग छेड़ दिया, "कल मेरे डेरे पर चोरी हो गई। सब कुछ जा सकता था। लेकिन ऊपर वाली मंजिल पर रहने वाली क्रिश्चियन लड़की की कृपा से रुपये-पैसे के अतिरिक्त और सब कुछ बच गया।" फिर सब कुछ विस्तार से सुनाने के बाद कहा, "वास्तव में वह ऐसी कुशल लड़की है ऐसा लगता नहीं था।"

रामदास ने पूछा, "इसके बाद?"

अपूर्व ने कहा, "तिवारी घर में था नहीं। बर्मीनाच देखने चला गया था। इसी बीच यह घटना हो गई। उसका विश्वास है कि यह काम उस लड़की के अतिरिक्त किसी और ने नहीं किया है। मेरा भी कुछ-कुछ ऐसा ही अनुमान है। चोरी भले ही न करे लेकिन उसने सहायता अवश्य की है।"

"इसके बाद?"

"फिर सवेरे पुलिस में खबर देने गया। लेकिन वहां जाकर ऐसा तमाशा देखा कि इस बात की याद ही नहीं रही। आज सोच रहा हूं कि पुलिस से चोर डाकुओं को पकड़वाना बेकार है। यही अच्छा है कि वे लोग विद्रोहियों को ही गिरफ्तार करते रहें," यह कहते ही उसे गिरीश महापात्र

की याद आ गई। हंसी रुकने पर उसने विज्ञान और चिकित्सा शास्त्र के असाधारण ज्ञाता, विलायत के डाक्टर उपाधि धारी, राज शत्रु महापात्र के स्वास्थ्य, शिक्षा, रुचि उनका बल वीर्य, इन्द्र धनुषी रंग का कुर्ता, हरे रंग के मोजे, लोहे के नाल लगे पम्प शू, नींबू के तेल से सुवासित केश और सर्वोपरि परोपकार्य गांजे की चिलम का आविष्कार करने की कथा विस्तार पूर्वक सुनाते-सुनाते अपनी उत्कट हंसी का वेग किसी प्रकार और एक बार रोककर अन्त में कहा, "तलवल कर, महाचतुर पुलिसदल को आज की तरह मूर्ख बनते सम्भवत: किसी ने कभी नहीं देखा होगा।"

रामदास ने पूछा, "क्या ये लोग आपकी बंगाल पुलिस के हैं ?"

अपूर्व ने कहा, "हां। इसके अतिरिक्त सबसे अधिक लज्जा की बात यह है कि इनके इन्चार्ज मेरे पिताजी के मित्र हैं। बाबूजी ने ही एक दिन इनकी नौकरी लगवाई थी।"

"तब तो आपको किसी दिन इसका प्रायश्चित करना पड़ेगा !" यह कहकर रामदास सहसा अप्रतिम-सा हो गया। अपूर्व उसका चेहरा देखते ही उसका तात्पर्य समझ गया। बोला," मैं उनको चाचा जी कहता हूं। वे हमारे आत्मीय हैं, शुभाकांक्षी है। लेकिन क्या इसीलिए वे मेरे लिए देश से बढ़कर हैं। बल्कि जिन्हें देश की रुपये खर्च करके, देश के आदमियों की सहायता से शिकार की तरह पकड़ने के लिए घूम रहे हैं। वे ही मेरे परम आत्मीय हैं।"

रामदास बोला, "बाबूजी, यह कहने में भी विपत्ति है।"

अपूर्व बोला, "भले ही हो तलवलकर। केवल अपने ही देश में नहीं, संसार के जिस किसी देश में, जिस किसी युग में, जिस किसी ने अपनी जन्म भूमि को स्वतन्त्र करने की चेष्टा है। उसको अपना कहने की सामर्थ्य और किसी में भले ही न हो, मुझ में है।" यह कहते-कहते उसका कंठ स्वर तीक्ष्ण और नेत्रों की दृष्टि तेज हो उठी, "बिना अपराध के ही फिरंगी लड़कों ने जब मुझे लात मारकर प्लेटफार्म से बाहर निकाल दिया और जब मैं इसका प्रतिवाद करने के लिए गया तब अंग्रेज स्टेशन मास्टर ने मुझे केवल देशी आदमी समझकर कुत्ते की तरह आफिस से निकलवा दिया। उसकी लांछना, इस काले चमड़े के नीचे कम जलन पैदा नहीं करती तलवलकर। जो लोग इन जघन्य अत्याचारों से हमारी माताओं, बहनों और भाइयों का उद्धार करना चाहते हैं, उनको अपना कहकर पुकारने में जो भी कष्ट पड़े, मैं सहर्ष झेलने को तैयार हूं।"

रामदास का सुन्दर गोरा चेहरा पलभर के लिए लाल हो उठा। बोला "यह दुर्घटना तो आपने मुझे बताई नहीं।"

अपूर्व बोला, "कहना सरल नहीं है रामदास। वहां कम भारतीय नहीं थे। लेकिन मेरे अपमान का किसी पर प्रभाव नहीं पड़ा। लात की चोट से मेरी हड्डी-पसली नहीं टूटी, इसी कुशल समाचार से वे प्रसन्न हो गए। क्या बताऊं, याद आते ही दुख, लज्जा तथा घृणा से अपने आप मनों मिट्टी में गड़ जाता हूं।"

रामदास मौन हो रहा। लेकिन उसकी दोनों आंखें डबडबा आईं। तीन बज चुके थे, वह उठकर खड़ा हो गया।

उस दिन छुट्टी होने से पहले बड़े साहब ने कहा, "हमारे मामो के आफिसों में अव्यवस्था हो रही है। मांडले, शोएवो, मिक्थिला और प्रोम-सर्भा आफिसों में गड़बड़ी है। मेरी इच्छा है कि तुम एकबार जाकर उन सबको देख आओ। मेरे न रहने पर सारा काम तुम्हीं को करना होगा। एक परिचय रहना चाहिए। इसलिए अगर कल-परसों।"

अपूर्व बोला, "मैं कल ही बाहर जा सकता हूं।"

दूसरे ही दिन वह मामो जाने के लिए ट्रेन में जा बैठा। साथ में एक अर्दली और आफिस का एक हिन्दुस्तानी ब्राह्मण भी था। तिवारी डेरे पर ही रहा। लंगड़ा साहब अस्पताल में पड़ा है, इसलिए अब उतना भय नहीं है। तलवलकर ने तिवारी की पीठ ठोककर कहा, "चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। कभी कोई घटना हो तो आकर मुझे खबर देना।"

ट्रेन छूटने में लगभग पांच मिनट की देर होगी कि सहसा अपूर्व चौंक कर बोल उठा, "वही तो।"

तलवलकर गर्दन फेरते ही समझ गया कि वही गिरीश महापात्र है। वही ठाटबाट वाला बहारदार कुर्ता, हरे रंग के मोजे, वही पम्प शू और घड़ी। अन्तर केवल इतना ही है कि इस बार वह बाघ अंकित रूमाल, छाती की जेब के बजाय गले में लिपटा हुआ है। महापात्र इसी ओर आ रहा था। निकट आते ही अपूर्व ने पुकारकर कहा, "क्यों गिरीश, मुझे पहचान सकते हो? कहां जा रहे हो?"

"जी हां, पहचान रहा हूं। कहां के लिए प्रस्थान हो रहा है?"

"इस समय तो मामो जा रहा हूं। तुम कहां चल रहे हो?"

गिरीश ने कहा, "जी, एनाज से दो मित्रों के आने की बात थी, लेकिन बाबूजी, मुझे लोग झूठ-मूठ तंग करते हैं। हां, यह अवश्य है कि लोग अफीम और गांजा छिपाकर ले आते हैं। लेकिन बाबू मैं तो बहुत ही धर्म भीरु आदमी हूं। लेकिन कहावत है न—ललाट की लिखावट मेटी नहीं जा सकती।"

अपूर्व ने हंसते हुए कहा, "मुझे भी ऐसा विश्वास है। लेकिन तुम गलत

समझ रहे हो भाई। मैं पुलिस का आदमी नहीं हूं। अफीम गांजे से मेरा कोई मतलब नहीं है। उस दिन तो मैं केवल तमाशा देखने गया था।"

तलवलकर बोला, "बाबू, मैंने अवश्य ही कहीं देखा है।"

गिरीश ने कहा, "इसमें कोई आश्चर्य नहीं है बाबू। नौकरी के लिए कितनी ही जगह मैं घूमता रहता हूं। अच्छा, अब जा रहा हूं बाबू, राम-राम," इतना कहकर वह आगे बढ़ गया।

अपूर्व ने कहा, "इसी सव्यसाची के पीछे-पीछे चाचाजी अपने दलबल सहित इस देश से उस देश में घूम रहे हैं। तलवलकर?" यह कहकर वह हंस पड़ा। लेकिन तलवलकर ने इस हंसी में साथ नहीं दिया।

दूसरे ही पल सीटी बजाकर ट्रेन स्टार्ट हो गई। उसने हाथ बढ़ाकर मित्र से हाथ मिलाया लेकिन मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला।

अपूर्व फर्स्ट क्लास का यात्री था। उस कम्पार्टमेन्ट में और कोई यात्री नहीं था। सन्ध्या हो चली तो उसने संन्ध्या-पूजा के बाद भोजन किया। उसका ब्राह्मण अर्दली सवेरे जलपान रख गया था और बिछौना भी बिछा गया। भोजन करने के बाद हाथ-मुंह धो, तृप्त हो इत्मीनान से बिस्तर पर लेट गया। लेकिन उसी रात तीन बार पुलिस वालों ने उसे जगाकर उसका नाम, काम और पता-ठिकाना पूछा।

एकबार अपूर्व बोला, "मैं फर्स्ट क्लास का यात्री हूं। तुम रात के समय मेरी नींद खराब नहीं कर सकते।"

"यह नियम रेलवे कर्मचारियों के लिए है। मैं पुलिस कर्मचारी हूं। चाहूं तो तुम्हें खींचकर नीचे भी उतार सकता हूं।"

उसका भावुक मन भीतर-बाहर से आच्छन्न और अभिभूत होता चला जा रहा था। अचानक जोर का धक्का लगने से उसने चौंककर देखा। रामदास की बातें याद आ गईं। यहां आने के बाद से इस बर्मा देश की बहुत-सी व्यक्त-अव्यक्त कहानियों का उसने संग्रह कर रखा था। इस प्रसंग में उसने एक दिन कहा था, "बाबूजी केवल शोभा-सौन्दर्य ही नहीं, प्रकृति माता की दी हुई इतनी बड़ी सम्पदा कम देशों में है। इसके वन और अरण्यों की सीमा नहीं। इसकी धरती में कभी समाप्त न होने वाली तेलों की खानें हैं। इसकी हीरों की महामूल्यवान खानों का मूल्य आंका नहीं जा सकता। और विशाल वृक्षों की यह जो गगनचुम्बी पांतें हैं, इनकी तुलना संसार में कहां है। बहुत दिनों की बात नहीं है। यहां के बारे में जानकर एक दिन अंग्रेज बनिए की लालची दृष्टि अचानक इस पर आसक्त हो उठी। बन्दूकें-तोपें आईं। लड़ाई छिड़ गई। युद्ध में पराजित दुर्बल-शक्तिहीन राजा को निर्वासित कर दिया गया। उसकी रानियों के

शरीर के जेबर वेचकर लड़ाई का जुर्माना वसूल किया गया। इसके बाद देश के, मानवता, सभ्यता और न्याय धर्म के कल्याण के लिए अंग्रेज राजशक्ति इस विजित देश का शासन भार ग्रहण कर उसका अनेक प्रकार से कल्याण करने के लिए तन-मन से जुट गई।

इसी प्रकार न जाने कितनी बातें उसके हृदय को आलोड़ित करती रहीं। अचानक ट्रेन की गति धीमी पड़ने पर उसे चेत हुआ। जल्दी से आखें पोंछकर उसने देखा—स्टेशन आ गया था।

आठ

बचपन से ही स्त्रियों के प्रति अपूर्व के मन में श्रद्धा की अपेक्षा घृणा की भावना ही अधिक थी। भाभियां मज़ाक करतीं तो वह मन-ही-मन दुखी होता। घनिष्ठता बढ़ाने आतीं तो दूर हट जाता। मां के अतिरिक्त और किसी की सेवा या देखभाल उसे अच्छी नहीं लगती थी। किसी लड़की के परीक्षा में पास होने के समाचार से उसे प्रसन्नता नहीं होती थी। यूरोप में स्त्रियां कमर कसकर राजनैतिक अधिकार पाने के लिए लड़ रही थीं। अखबारों में उनके समाचार पढ़कर उसका शरीर जलने लगता था। लेकिन उसका हृदय स्वभाव से ही भद्र और कोमल था। वैसे वह नर-नारी का भेद न मानकर प्राणीमात्र को अत्यन्त प्रेम करता था। किसी को भी तनिक सा भी कष्ट देने में उसे हिचक होती थी। इसीलिए भारती को अपराधी जानते हुए भी उसने दंडित नहीं होने दिया। पुरुषों में स्त्री के सम्बन्ध में जो कमजोरियां होती हैं वे उसे छू तक नहीं गई थीं। इस ईसाई लड़की को दंड देना उसके स्वभाव के विरुद्ध था। नारी जाति के प्रति अनुराग न रखते हुए भी उसका मन भारती को आसानी से बहुत दिनों तक दूर हटाकर रख सकेगा, यह भी सच नहीं था। फिर भी इस निर्भय, मिथ्यावादिनी युवती के प्रति उसके मन में राग-द्वेष की सीमा नहीं थी।

उसे मामो आए पन्द्रह दिन हो गए हैं। यहां से कल-परसों तक मिक्थिला जाने की बात है। आफिस से लौटकर बरामदे में बैठा मन-ही-मन सोचने लगा। नारी स्वाधीनता के सम्बन्ध में उसका मन अपनी सम्मति देना नहीं चाहता था। इसमें मंगल नहीं है। यह धारणा उसकी रुचि तथा

संस्कार पर आधारित थी। शास्त्रीय अनुशासनों में भी इनके प्रति गम्भीर अन्याय है इस सत्य को भी उसका न्याय परायण मन किसी प्रकार स्वीकार नहीं करता था। लेकिन आज जिस कारण अचानक ही उसकी यह धारणा मिट गई, उसका विवरण इस प्रकार है—

जिस दोमंजिले मकान में उसने कमरे किराए पर लिए हैं उसकी निचली मंज़िल में एक बर्मी परिवार रहता है। सवेरे आफिस जाने से पहले उनके परिवार में एक अनर्थकारी दुर्घटना हो गई। उनकी चार लड़कियां हैं सभी विवाहिता हैं। किसी उत्सव के उपलक्ष में आज सभी उपस्थित हुए थे। भोज के समय सम्मान के विषय में पहले तो लड़कियों में, दामादों में तू-तू, मैं-मैं होने लगी और खून खराबी तक पहुंच गई। अपूर्व खबर लेने गया तो सुना कि इनमें से एक तो मदरास का चुलिया मुसलमान है। एक चटगांव का बंगाली पोर्तुगीज है। एक ऐंग्लो इंडियन और सबसे छोटा चौथा दामाद एक चीनी है। वे सब कई पीढ़ियों से इस शहर में रहकर चमड़े का व्यवसाय कर रहे हैं।

इस प्रकार पृथ्वी व्यापी सब जातियों का श्वसुर बनने का गौरव अन्य स्थानों में दुर्लभ होते हुए यहां सुलभ है। इन सम्बन्धों का पिता ने विरोध किया था लेकिन लड़कियों की स्वाधीनता ने उस पर ध्यान नहीं दिया। एक-एक दिन एक-एक करके लड़कियों का घर पर पता नहीं रहा। फिर एक-एक कर वे लौट आईं और उनके साथ आ गया विचित्र दामादों का यह दल। उनकी भाषा अलग, भाव-विचार अलग, कर्म और स्वभाव अलग। शिक्षा संस्कार किसी के साथ किसी का मेल नहीं मिलता। यह तो हमारे देश की हिन्दू-मुस्लिम समस्या की भांति धीरे-धीरे जटिल होती जा रही है। कैसे सुलझेगी?

अपूर्व का मन क्षोभ, दुख और विरक्ति से दुखी हो उठा और लड़कियों की इस सामाजिक स्वतन्त्रता को बार-बार कोसने लगा। बर्मा नष्ट हो रहा है। यूरोप नष्ट प्राय हो चुका है। इसी प्रकार की सभ्यता को अपने देश में लाने पर हम लोग भी समूल नष्ट हो जायेंगे। इस दुर्दिन में अगर हम संशय छोड़कर अपने पुरातन सिद्धान्तों का पालन न कर सके तो हमें विनाश से कोई नहीं बचा सकेगा। इसी प्रकार की अनेक विचारधाराओं में डूबा अंधेरे में अकेला बैठा रहा। लेकिन दुर्भाग्य? यह सीधी ही बात उसके मन में एक बार भी नहीं आई कि जिस मुक्ति मन्त्र को वह जीवन का एकमात्र व्रत मानकर तन-मन से ग्रहण करना चाहता है उसी की दूसरी मूर्ति को हाथों से ठेलकर मुक्ति के सच्चे देवता को ही सम्मान सहित दूर हटा रहा है। मुक्ति क्या ऐसी ही कोई छोटी-सी वस्तु है?

अर्दली बोला, "आपके जाने की बात तो परसों के लिए थी न ?"

"नहीं, परसों नहीं कल—एक बत्ती दे जा," समाज में महिलाओं की स्वाधीनता का यह नया रूप देखकर उसका मन उद्विग्न हो उठा था।

दूसरे दिन ठीक समय पर वह मिक्थिला के लिए चल पड़ा। लेकिन वहां पहुंचने पर मन नहीं लगा। देशी और विलायती पलटनों की छावनी है। अनेक बंगाली सपरिवार रहते हैं। अच्छा शहर है। नए लोगों के लिए घूमकर देखने की बहुत सी चीजें हैं। लेकिन यह सब उसे अच्छा नहीं लगा। मन रंगून पहुंचने के लिए छटपटाने लगा। मामो में रहते हुए रिडायरेक्ट किया हुआ मां का एक पत्र उसे मिला था। उसके बाद रामदास के दो पत्र आए थे। उसने लिखा था कि जब तक तुम लौट नहीं आते डेरा बदलने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह स्वयं जाकर देख आया है। तिवारी अच्छी तरह रह रहे हैं।

स्टेशन पर एक लड़के को रेल के कर्मचारियों ने ट्रेन से उतार दिया था। उसके बदन पर मैले, फटे-पुराने हैट-कोट थे। साथ में एक टूटा ट्रंक था। टिकट खरीदने के पैसे से उसने शराब पी ली थी। उसका बस इतना ही अपराध था। लड़के को पुलिस ले जा रही है। यह देखकर अपूर्व ने उसका किराया चुका दिया तथा और भी चार-पांच रुपए उसे देकर वहां से हटा रहा था कि सहसा उसने हाथ जोड़कर कहा, "महाराज, मेरा यह ट्रन्क लेते जाइए। इसे बेचकर जो दाम मिले उसमें से अपना रुपया काट लीजिएगा और बाकी रुपया मुझे लौटा दीजिएगा।" उसके कंठ स्वर से यह स्पष्ट हो गया कि उसने यह बात पूरे होश-हवास में कही है।

अपूर्व ने पूछा, "कहां लौटाऊं?"

लड़के ने कहा, "अपना पता दे दीजिए। मैं आपको चिट्ठी लिख दूंगा।"

अपूर्व बोला, "अपना ट्रन्क अपने पास रहने दो। मैं इसे नहीं बेच सकूंगा। मेरा नाम अपूर्व हालदार है। रंगून की वोथा कम्पनी में नौकर हूं। कभी भेज सको तो रुपया भेज देना।"

उसने कहा, "अच्छा नमस्कार। मैं अवश्य भेज दूंगा। यह दया मैं जीवन भर नहीं भूलूंगा," यह कहकर एक बार फिर नमस्कार करके ट्रन्क बगल में दबाकर वह चला गया।

इस बार अपूर्व ने ध्यान से उसके चेहरे को देखा। आयु अधिक नहीं है लेकिन कितनी है, ठीक-ठीक बताना कठिन है। सम्भव है नशे के कारण दस वर्ष का अन्तर पड़ गया है। शरीर का रंग गोरा है। लेकिन धूप में जलकर तांबे के रंग जैसा हो गया है। सिर के रुखे-सूखे बाल माथे के नीचे

तक भूल रहे हैं। आंखों की दृष्टि उछलती सी है। नाक खंजर की तरह सीधी है। शरीर दुबला है। हाथ की उंगुलियां लम्बी और पतली हैं। समूचे बदन पर उपवास और अत्याचार के चिह्न अंकित हैं।

टिकट खरीदकर अपूर्व ट्रेन में जा बैठा और दूसरे दिन ग्यारह बजे रंगून पहुंच गया। जब तांगा डेरे पर पहुंचा तो देखा तिवारी को जैसे कोई उत्कंठा ही नहीं। बरामदे का दरवाज़ा तक नहीं खुला। गाड़ी की आवाज सुनकर भी नीचे नहीं आया।

उसने दरवाजे पर पहुंचकर पुकारा, "तिवारी—! ऐ तिवारी !"

थोड़ी देर बाद धीरे से, बड़ी सतर्कता से दरवाज़ा खुला। क्रोध से पागल अपूर्व कमरे में घुसते ही अवाक और हतबुद्धि हो गया। सामने भारती खड़ी थी। यह कैसी मूर्ति है उसकी ? पैरों में जूते नहीं हैं। काले रंग की साड़ी पहने है। बाल सूखे-सूखे बिखरे हैं। शान्त चेहरे पर विषाद की आभा है। उस पर कभी क्रोध भी कर सकेगा, यह विचार अपूर्व मन में ला ही नहीं सका। भारती बोली, "आ गए ? अब तिवारी बच जाएगा।"

अपूर्व ने कहा, "उसे क्या हुआ ?"

भारती ने कहा, "इधर बहुत से लोगों को चेचक की बीमारी हुई है। उसे भी हो गई। आप ऊपर चलिए। स्नान करके थोड़ी देर आराम करने के बाद नीचे आइएगा। तिवारी अभी सो रहा है। जागने पर बता दूंगी।"

अपूर्व आश्चर्य से बोला, "ऊपर के कमरे में ?"

भारती बोली, "हां, अभी तक कमरा हमारे अधिकार में है। मैं चली गई। खूब साफ है। आपको कोई कष्ट नहीं होगा। चलिए।"

कमरे के फर्श पर संवार कर अपने हाथों से बिस्तर बिछाकर बोली, "अब आप स्नान कर लीजिए।"

अपूर्व ने कहा, "पहले सारी बातें मुझे बताइए।"

भारती बोली, "स्नान करके संध्या-पूजा कर लें, तब।"

अपूर्व ने जिद नहीं की। कुछ देर बाद जब वह स्नान आदि समाप्त करके आया तो भारती ने हंसकर कहा, "अपना यह गिलास लीजिए। खिड़की पर कागज़ में लिपटी चीनी रखी है। उसे लेकर मेरे साथ नल के पास आइए। किस तरह शर्बत बनाया जाता है, मैं सिखा देती हूं।"

अधिक कहने की आवश्यकता नहीं थी। प्यास से छाती फटी जा रही थी। शर्बत बनाकर उसने पी लिया।

भारती बोली, "अभी आपको एक कष्ट और दूंगी।"

अपूर्व बोला, "कैसा कष्ट ?"

भारती बोली, "नीचे से मैंने कोयला लाकर रख दिया है। उड़िया लड़के को बुलाकर आपके चूल्हे को मंजवा दिया है। चावल है, दाल है, परवल, घी, तेल, नमक सब हैं। पीतल की बटलोई ला देती हूं। थोड़ा-सा पानी लेकर धो लें और चढ़ा दें। कठिन काम नहीं है, मैं सब बता दूंगी। आप केवल चढ़ायेंगे और उतारेंगे। आज यह कष्ट उठा लीजिए। कल दूसरी व्यवस्था हो जाएगी।"

अपूर्व ने पल भर मौन रहकर पूछा, "लेकिन आपके भोजन की व्यवस्था क्या होती है ? कब अपने डेरे पर जाती हैं ?

भारती ने कहा, "डेरे पर भले ही न जाऊं, लेकिन हम लोगों को भोजन के लिए चिन्ता नहीं करनी पड़ती।"

अपूर्व ने घंटे भर में रसोई तैयार की। भारती कमरे की चौखट के बाहर खड़ी होकर बोली, "यहां खड़े रहने से तो कोई दोष नहीं होता आपके खाने में ?

अपूर्व बोला, "होता तो आप खड़ी न रहतीं।"

जीवन में पहली बार अपूर्व ने रसोई बनाई है। हजारों कमियां देखकर बीच-बीच में भारती का धीरज टूटने लगा। लेकिन जब कटोरे में डालते समय दाल इधर-उधर बिखर गई तब वह सहन न कर पाई। क्रोध से बोली, "आप जैसे निकम्मे आदमियों को भगवान न जाने क्यों जन्म देते हैं ? केवल हम लोगों को परेशान करने के लिए।"

खाने के बाद अपूर्व ने कहा, "अच्छा, क्या मामला है अब मुझे साफ-साफ बताइए। इधर और भी दस आदमियों को चेचक की बीमारी हुई है। तिवारी को हुई है। यहां तक तो समझ गया। पर जब इस मकान को छोड़कर आप सभी लोग चले गए तो इस बन्धुहीन देश में और इससे भी अधिक इस बन्धुहीन नगर में आप उसके लिए प्राण देने के लिए कैसे ठहर गईं ? क्या जोसेफ साहब ने कोई आपत्ति नहीं की ?

भारती बोली, "बाबूजी तो अस्पताल में ही मर गए थे।"

"मर गए ?" अपूर्व सन्नाटे में बैठा रह गया, "आपके काले कपड़े देखकर इसी प्रकार की किसी भयंकर दुर्घटना का मुझे अनुमान कर लेना चाहिए था।"

भारती बोली, "इससे भी बड़ी दुर्घटना यह हुई कि मां अचानक स्वर्ग सिधार गईं……"

"मां मर गई ?" अपूर्व स्तब्ध रह गया। अपनी मां की बात याद करके उसकी छाती में न जाने कैसी कंपकंपी होने लगी। भारती ने किसी तरह आंसू रोके। मुंह फेरने पर उसने देखा कि अपूर्व सजल आंखों से

उसकी ओर देख रहा है। दो-तीन मिनट बीतने पर उसने धीरे से कहा, तिवारी बहुत ही अच्छा आदमी है। मेरी मां बहुत दिनों से बीमार थीं। हम सभी जानते थे कि किसी भी क्षण उनकी मृत्यु हो सकती है। तिवारी ने हम लोगों की बहुत सेवा की। मेरे यहां से जाते समय बहुत रोया। लेकिन मैं इतना भाड़ा कैसे दे सकती थी ?

अपूर्व चुपचाप सुनता रहा।

भारती ने कहा, "आपकी वह चोरी पकड़ी गई है। रुपया और बटन पुलिस में जमा है। आपको पता है ?"

"कहां ? नहीं तो।"

"तिवारी को उस दिन जो लोग तमाशा दिखाने ले गए थे उन्हीं के दल का काम था। और भी न जाने कितने घरों में चोरी करने के बाद शायद चोरी का माल बांटने में झगड़ा हो जाने के कारण उनमें से एक ने सारी बातें खोलकर बता दीं। पुलिस के गवाहों में एक मैं भी हूं। यह पता लगा कर वे लोग एक दिन मेरे पास आए थे। तभी मैंने यहां आकर यह कांड देखा। मुकदमे की तारीख कब है, यह तो मैं ठीक नहीं जानती। लेकिन सब कुछ वापस मिल जाएगा। यह सुन चुकी हूं।"

यह अन्तिम बात अगर वह न भी कहती तो अच्छा होता। क्योंकि लज्जा के मारे अपूर्व का मुंह केवल लाल ही नहीं हो उठा, इस मामले में अपने उन प्रगट और अप्रगट इशारों की याद करके उसके शरीर में कांटे से चुभ उठें।

भारती फिर कहने लगी, "दरवाजा बंद था। हजारों बार पुकारने और चिल्लाने पर भी किसी ने उत्तर नहीं दिया। ऊपर की मंजिल की चाबी मेरे पास थी। दरवाजा खोलकर अन्दर गई। मेरे फर्श में एक छेद हो गया है," यह कहकर उसने लज्जा से हंसी को छिपाकर कहा, "उस छेद से आपके कमरे का सब कुछ दिखाई देता है। देखा, सभी दरवाजे बंद हैं। अंधेरे में कोई आदमी सिर से पैर तक कपड़ा ओढ़े सोया पड़ा है। तिवारी जैसा दिखाई दिया। उसी छेद पर मुंह रखकर चिल्ला-चिल्लाकर पुकारा, 'तिवारी, मैं भारती हूं। तुमको क्या हुआ ? दरवाजा खोल दो—' फिर नीचे आकर इसी तरह चीख-पुकार मचाने लगी। बीस मिनट के बाद तिवारी किसी तरह घिसट कर आया। और किसी तरह दरवाजा खोल दिया। उसका चेहरा देखकर फिर कुछ पूछने की आवश्यकता ही नहीं रही। इसके तीन-चार दिन पहले, सामने वाले मकान के नीचे के कमरे से पुलिस वाले चेचक से बीमार दो तेलगू कुलियों को पकड़कर अस्पताल ले गए थे। उनका रोना-पीटना, गिड़गिड़ाना तिवारी ने अपनी आंखों से देखा था।

मेरे दोनों पांव पकड़कर भों-भों करके रोते हुए बोला, 'माईजी, मुझे प्लेग अस्पताल में मत भेजना। भेजने से फिर मेरे प्राण नहीं बचेंगे।' यह बात बिल्कुल झूठी भी नहीं है। वहां से किसी के जिन्दा लौटकर आने की बात बहुत ही कम सुनाई देती है, इसी डर से वह रात दिन दरवाजे-खिड़कियां बंद करके पड़ा रहता है। मुहल्ले में किसी भी आदमी को अगर पता चल गया तो फिर रक्षा नहीं है।"

अपूर्व बोला, "और तभी से आप दिन-रात अकेली यहां रह रही हैं। इसकी सूचना क्यों नहीं भेजी? हमारे आफिस के तलवलकर बाबू को तो आप जानती हैं। उन्हें क्यों नहीं बुला लिया।"

भारती ने कहा, "कौन जाता? आदमी कहां है? सोचा था शायद हालचाल पूछने आयेंगे। लेकिन वह नहीं आए। और इसके अलावा बात फैल जाने की भी आशंका थी।"

"यह तो जरूर है," कहकर अपूर्व एक लम्बी सांस लेकर चुप रह गया। बहुत देर के बाद बोला, "आपका चेहरा कैसा हो गया?"

भारती हंसकर बोली, "यानी पहले इससे सुन्दर था?"

अपूर्व इस बात का कोई उत्तर न दे सका। उसकी दोनों आंखों की मुग्ध दृष्टि श्रद्धा और कृतज्ञता से उस तरुणी पर टिक गई। बोला, "मनुष्य जो काम नहीं करता, उसे आपने किया है। लेकिन अब आपकी छुट्टी है। तिवारी मेरा केवल नौकर ही नहीं है, मेरा मित्र भी है। उसकी गोद और पीठ पर चढ़-चढ़कर ही मैं इतना बड़ा हुआ हूं। अब भोजन के लिए घर जाइए। क्या घर यहां से बहुत दूर है?"

भारती बोली, "हम लोग तेल के कारखाने के पास, नदी के किनारे रहते हैं। मैं कल फिर आऊंगी।"

दोनों उतर कर नीचे आ गए। ताला खोलकर दोनों कमरे में घुसे। तिवारी जाग जाने पर भी बेसुध-सा पड़ा था। अपूर्व उसके बिस्तर के पास आकर बैठ गया और जो बर्तन आदि बिना मांजे-धोए पड़े थे उन्हें उठाकर भारती स्नानघर में चली गई। उसकी इच्छा थी कि जाने से पहले रोगी के सम्बन्ध में दो-चार जरूरी बातें बताकर इस भयानक रोग से अपने को सुरक्षित रखने की आवश्यकता की बात याद दिलाकर जाए। हाथ का काम समाप्त करके इन्हीं बातों को दोहराती हुई कमरे में लौटी तो उसने देखा कि चेतना शून्य तिवारी के विकृत मुंह की ओर टकटकी लगाए देखता हुआ अपूर्व पत्थर की मूर्ति की तरह बैठा है। उसका चेहरा एकदम सफेद हो गया है। चेचक की बीमारी उसने अपने जीवन में कभी देखी नहीं थी। भारती जब निकट आ गई तो उसकी दोनों आंखें छलछला

उठीं। बच्चों की तरह व्याकुल स्वर वोल उठा, "मैं कुछ न कर सकूंगा भारती।"

"तब तो खबर देकर इसे अस्पताल भेज देना पड़ेगा।" भारती के शब्दों में न श्लेष था, न व्यंग्य। लेकिन लज्जा से अपूर्व का सिर झुक गया।

भारती बोली, "दिन रहते ही कुछ कर देना ठीक रहेगा। आप कहें तो घर जाते समय कहीं से अस्पताल को टेलीफोन करती जाऊं। वे लोग गाड़ी लेकर आयेंगे और इसे यहां से उठा ले जायेंगे।"

अपूर्व बोला, "लेकिन आपने ही तो कहा है कि वहां जाने पर कोई भी नहीं बचता।"

"कोई भी नहीं बचता—यह मैंने कब कहा ?"

"आपने कहा था, अधिकांश रोगी मर जाते हैं।"

"मर जाते हैं। इसीलिए होश रहते वहां कोई नहीं जाना चाहता।"

अपूर्व ने पूछा, "क्या तिवारी को बिल्कुल होश नहीं है ?"

भारती बोली, "कुछ तो जरूर है ?"

तभी तिवारी के कराह उठने पर अपूर्व चौंक पड़ा। भारती ने पास आकर स्नेह भरे स्वर में पूछा, "क्या चाहिए तिवारी ?"

तिवारी ने कुछ कहा। अपूर्व उसे समझ नहीं सका। लेकिन भारती ने सावधानी से उसकी करवट बदलवाकर लोटे से थोड़ा जल उसके मुंह में डालकर कहा, "तुम्हारे बाबूजी आ गए हैं तिवारी।"

प्रत्युत्तर में तिवारी ने न जाने क्या कहा और फिर उसकी मुंदी आंखों के कोने से आंसू लुढ़ककर बहने लगे। कुछ देर किसी ने कुछ नहीं कहा। समूचा कमरा जैसे दुख और शोक से बोझिल हो गया। कुछ देर वाद भारती ने कहा, "अब इसे आप अस्पताल ही भेज दीजिए।"

अपूर्व सिर हिलाकर बोला, "नहीं।"

"अच्छा, अब मैं जा रही हूं। हो सका तो कल आऊंगी।"

जाने से पहले भारती बोली, "सब कुछ है, केवल मोमबत्ती खत्म हो गई है। मैं नीचे से एक बंडल खरीदकर दे जाती हूं।" यह कहकर बाहर चली गई। कुछ देर वाद जब वह मोमबत्ती लेकर आई, अपूर्व अपने को संभाल चुका था। मोमबत्ती का बंडल देकर भारती ने कुछ कहना चाहा। लेकिन अपूर्व के मुंह फेर लेने पर उसने भी कुछ नहीं कहा। लेकिन भारती ने जाने के लिए ज्यों ही दरवाजा खोला, अपूर्व एकदम बोल उठा, "अगर तिवारी पानी चाहे ?" भारती ने कहा, "पानी दे दीजिएगा।"

"और अगर करवट बदलकर सोना चाहे ?

"करवट बदलकर सुला दीजिएगा।"

"और मैं कहां सोऊंगा ? उसके कंठ स्वर का क्रोध छिपा नहीं रहा, बोला, "बिछौना तो ऊपर के कमरे में पड़ा है।"

पल भर मौन रहकर वह बोली, "वह बिछौना जो आपकी चारपाई पर है आप उस पर सो सकते हैं।"

"और मेरे भोजन का क्या होगा ?"

भारती चुप रही। लेकिन इस असंगत प्रश्न से छिपी हंसी के आवेग से उसकी आंखों की दोनों पलकें जैसे कांपने लगी। कुछ देर बाद बहुत ही गम्भीर स्वर में बोली, "आपके सोने और खाने-पीने का भार क्या मेरे ऊपर है ?"

"मैं क्या यह कह रहा हूं ?"

"इस समय तो आपने यही कहा है और वह भी गुस्से से।"

अपूर्व इसका उत्तर न दे सका। उसके उदास चेहरे को देखते हुए भारती ने कहा, "आपको इस तरह कहना चाहिए था—कृपा करके आप इन सब की व्यवस्था कर दीजिए।"

अपूर्व बोला, "यह कहने में कोई कठिनाई तो है नहीं।"

"अच्छी बात है, यही कहिए न।"

"यही तो कह रहा हूं," कहकर अपूर्व मुंह फुलाकर दूसरी ओर देखने लगा।

"आपने क्या कभी किसी रोगी की सेवा नहीं की ?"

"नहीं।"

"विदेश में भी कभी नहीं आए ?"

"नहीं, मां मुझे कभी कहीं जाने नहीं देती थी।"

"तब उन्होंने इस बार कैसे भेज दिया ?"

अपूर्व चुप रहा। मां उसे क्यों विदेश जाने पर सहमत हुई थीं यह बात किसी को बताने की इच्छा नहीं थी।

भारती बोली, "इतनी बड़ी नौकरी। आपको न भेजने से कैसे काम चलता। लेकिन वे साथ क्यों नहीं आईं ?"

अपूर्व क्षुब्ध होकर बोला, "मेरी मां को आपने देखा नहीं है। नहीं ऐसा न कहतीं। मुझे छोड़ने में उनकी आत्मा को अत्यन्त दुख हुआ है। वे तो विधवा हैं। इस मलेच्छ देश में कैसे आ सकती थीं ?"

"मलेच्छों पर आप लोगों के मन में इतनी घृणा है ? लेकिन रोग तो केवल गरीबों के लिए नहीं बना है, आपको भी तो हो सकता था। तो क्या ऐसी दशा में मां न आतीं ?"

अपूर्व का मुंह फीका पड़ गया। बोला, "अगर इस तरह डराओगी

तो मैं रात में अकेला कैसे रहूंगा।"

"न डराने पर भी आप अकेले नहीं रह सकेंगे। आप डरपोक आदमी हैं।"

अपूर्व चुपचाप बैठा सुनता रहा।

भारती बोली, "अच्छा बताइए, मेरे हाथ का पानी पीकर तिवारी की जाति नष्ट हो गई। रोग अच्छा हो जाने पर यह क्या करेगा?"

अपूर्व कुछ सोचकर बोला, "उसने सचेत अवस्था में ऐसा नहीं किया। मरणासन्न बीमारी की दशा में किया है। न पीता तो शायद मर जाता। ऐसी परिस्थिति में भी प्रायश्चित तो करना ही पड़ता है।"

भारती बोली, "हूं। इसका खर्च शायद आपको ही देना पड़ेगा, नहीं तो आप उसके हाथ का भोजन कैसे करेंगे?"

अपूर्व बोला, "मैं ही दूंगा। भगवान करे वह अच्छा हो जाए।"

भारती बोली, "और मैं ही सेवा करके उसे अच्छा कर दूं?"

अपूर्व कृतज्ञता से गदगद होकर बोला, "आपकी बड़ी दया होगी। तिवारी बच जाए। आपने ही तो उसे जीवनदान दिया है।"

भारती हंस पड़ी। बोली, "यदि मलेच्छ जीवनदान दे तो उसमें कोई दोष नहीं। लेकिन मुंह में जल देते ही प्रायश्चित होना चाहिए।" फिर ज़रा हंसकर बोली, "अच्छा, मैं जा रही हूं। अगर कल समय मिला तो एक बार देख जाऊंगी।" यह कहकर जाते-जाते अचानक घूमकर बोली, "और न आ सकूं तो तिवारी के अच्छा हो जाने पर उससे कह दीजिएगा कि अगर आप न आ जाते तो मैं न जाती। लेकिन मलेच्छ का भी तो एक समाज है। आपके साथ एक ही कमरे में रात बिताने में वे लोग भी अच्छा नहीं मानते। कल सबेरे आपका चपरासी आयेगा। तलवलकर बाबू को खबर दे दीजिएगा। सब व्यवस्था करेंगे। अच्छा नमस्कार।"

अपूर्व ने कहा, "करवट बदलवाने से उसे कष्ट तो न होगा?"

"नहीं।"

"रात को अगर बिछौना बदलने की जरूरत पड़ी तो कैसे बदलूंगा?

"सावधान होकर बदलिएगा। मैं स्त्री होकर अगर कर सकती हूं। तो आप क्यों नहीं कर सकते?"

अपूर्व चुप ही रहा। जाने के लिए भारती ने ज्योंही दरवाज़ा खोला, अपूर्व ने भय से आकुल होकर कहा, "और अगर यह बैठ जाए?—अगर रोने लगे?"

इन प्रश्नों का उत्तर न देकर मालती दरवाज़ा बंद करके चली गई। जब तक उसके कदमों की आवाज़ सुनाई देती रही अपूर्व शान्त बैठा रहा।

लेकिन खामोशी होते ही स्वयं को न संभाल सका। भय से दौड़ता हुआ बाहर आया। देखा, भारती तेजी से चली जा रही है। मिस भारती न कहकर उसने ऊंची आवाज़ में पुकारा, "भारती ?"

भारती के मुड़कर देखते ही अपूर्व दोनों हाथ जोड़कर बोला, "जरा इधर आइए।"

भारती लौट पड़ी। अन्दर जाकर देखा, वहां अपूर्व नहीं है। तिवारी अकेला पड़ा है। वह बरामदे में भी नहीं था। कहीं दिखाई भी नहीं दे रहा था। चारों ओर नज़रें दौड़ाकर देखा, स्नानघर का दरवाज़ा खुला है। दरवाजे के अन्दर गर्दन बढ़ाकर देखा तो उसके भय की सीमा नहीं रही। अपूर्व फर्श पर पड़ा था। दोपहर को जो कुछ खाया था उलट दिया था। आंखें बंद हैं और शरीर पसीना-पसीना हो रहा है। पास जाकर बोली, "अपूर्व बाबू !"

अपूर्व ने आंखें खोलकर देखा लेकिन फिर तत्काल आंखें मूंद लीं। एक पल दुविधा के बाद भारती उसके पास आ बैठी और माथे पर हाथ रखकर बोली, "उठकर बैठना होगा। सिर पर और मुंह में जल न देने पर तबियत ठीक नहीं होगी अपूर्व बाबू।"

अपूर्व उठ बैठा। भारती हाथ पकड़कर उसे नल के पास ले गई, और नल खोल दिया। उसने हाथ-मुंह धो डाले। भारती उसे धीरे-धीरे कमरे में ले आई और चारपाई पर लिटाकर आंचल से उसके हाथों और पैरों का पानी पोंछ डाला। फिर पंखे से हवा करती हुई बोली, "ज़रा सोने की कोशिश करो। आपके स्वस्थ न होने तक मैं यहीं रहूंगी।"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "लेकिन आपका खाना ?"

भारती बोली, "आपने खाने का अवसर ही कहां दिया।"

पलभर चुप रहकर अपूर्व ने पूछा, "अच्छा आपको मिस भारती कह कर न पुकारने पर क्या आप नाराज होंगी।"

"जरूर, लेकिन केवल भारती कहकर पुकारने पर नहीं होऊंगी।"

"लेकिन और लोगों के सामने ?"

"भारती हंसकर बोली, और लोगों के सामने भी। लेकिन अब चुप होकर जरा सो जाइए। मुझे काफी काम करने हैं।"

अपूर्व बोला, "सोते हुए डर लगता है। पीछे कहीं तुम चली न जाओ।"

"अगर जागते रहने पर भी चली जाऊं तो आप क्या कर लेंगे ?"

अपूर्व चुप रह गया।

भारती बोली, "हमारे मलेच्छ समाज में क्या नेकनामी और बदनामी

से बचकर नहीं चलना पड़ता ?"

अपूर्व की बुद्धि ठिकाने नहीं थी। प्रत्युत्तर में उसने एक विचित्र प्रश्न कर डाला। बोला, "मेरी मां यहां नहीं है। मेरे बीमार पड़ जाने पर आप क्या करेंगी ? तब तो आपको ही रहना होगा।"

"मुझे रहना होगा ? आपके मित्र तलवलकर बाबू को खबर देने से काम नहीं चलेगा ?"

अपूर्व गर्दन हिलाकर बोला, "नहीं। यह नहीं हो सकता। या तो मां या फिर आप। आप दोनों में से एक को न देख पाने पर मैं नहीं बचूंगा। कल अगर मुझे चेचक हो जाए तो आप यह बात भूल मत जाना।"

उसके अनुरोध के अन्तिम शब्द किस तरह सुनाई दिए कि भारती जैसे स्वयं को ही भूल गई। बिछौने के एक छोर पर बैठकर अपूर्व के शरीर पर एक हाथ रखकर रुंधे गले से बोली, "नहीं—नहीं भूलूंगी—कभी नहीं भूलूंगी—इस बात को क्या कभी भूल सकती हूं।" लेकिन इन शब्दों के मुंह से निकलते ही अपनी भूल समझकर एकदम उठ खड़ी हुई। ज़ोर लगाकर जरा हंसकर बोली, "लेकिन अच्छा हो जाने पर भी तो कम विपत्ति नहीं आयेगी अपूर्व बाबू। धूमधाम से प्रायश्चित करना पड़ेगा। अच्छा अब सो जाइए। मुझे बहुत काम करने हैं।"

"कौन से काम ?—खाना खाना है ?

भारती बोली, "खाना तो दूर अभी तक स्नान भी नहीं किया।"

"लेकिन सांझ के समय स्नान करने से बीमार न पड़ जाओगी ?"

भारती बोली, "असम्भव नहीं है। लेकिन स्नानघर में आपने जो गन्दगी फैला दी है उसे साफ करने पर स्नान किए बिना क्या रहा जा सकता है ?"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "वह सब मैं साफ कर दूंगा। आप मत कीजिए," कहकर वह उठने लगा।

भारती रूठकर बोली, "अब बहादुरी दिखाने की जरूरत नहीं है। थोड़ा सो रहने की कोशिश करो। लेकिन ऐसे कोमल आदमी को मां ने विदेश कैसे भेज दिया। यही सोच रही हूं। उठिए मत। वे नहीं हैं। इसलिए मेरी बात न मानने पर भारी अन्याय होगा। कहे देती हूं।" बनावटी क्रोध और शासन के स्वर में आज्ञा देकर वह चली गई।

निर्जीव की तरह अपूर्व कब सो गया यह जान भी न सका।

उसकी नींद टूटी, भारती के पहुंचने पर। आंखें मल कर उठने पर देखा। रात के बारह बज गए हैं। भारती सामने खड़ी है। अपूर्व की पहली नज़र पड़ी उसके बालों की लम्बाई पर। सुगन्धित साबुन की गन्ध से कमरे

की हवा हठात पुलकित हो उठी थी। काली पाड़ की साड़ी पहने है। बदन पर अंगिया न होने के कारण वहां का अधिकतर भाग दिखाई दे रहा है। भारती की यह मानो कोई नूतन मूर्ति है जिसे अपूर्व ने इससे पहले कभी नहीं देखा था। मुंह से एकाएक निकला, "इतने भीगे बाल, सूखेंगे कैसे?"

"कैसे सूखेंगे आप इनकी चिन्ता मत कीजिए। मेरे साथ आएं।"

तिवारी कैसा है?"

"ठीक है। कम-से-कम आज की रात तो आपको सोचना न पड़ेगा!"

उसके साथ-साथ दूसरे कमरे में आकर देखा। एक छोटी सी टोकरी में कुछ फल-फूल, एक थाली, एक गिलास रखा है। भारती ने दिखाकर कहा, "इससे अधिक और कुछ नहीं किया जा सकता था। पानी से सब धो डालिए। थाली, गिलास सब। गिलास में जल लेकर उस कमरे में जाइए। मैंने आसन लगा दिया है।"

अपूर्व ने पूछा, "आप यह सब कब ले आईं?"

भारती बोली, "आप सो रहे थे। पास ही फलों की एक दुकान है। दूर नहीं जाना पड़ा। टोकरी तो आप लोगों की ही है।" फिर जाते-जाते सावधान करती गई, "चाकू धोते समय कहीं हाथ मत काट लेना।"

कुछ देर बाद अपूर्व आसन पर बैठा फल काट रहा था। और पास ही बैठी भारती हंस रही थी। अपूर्व ने कहा, "आप हंसिए कोई हर्ज नहीं। लेकिन आपने मेरे भोजन के लिए जो व्यवस्था की है उसके लिए सहस्रो धन्यवाद। मां के अतिरिक्त और कोई ऐसा नहीं करता।"

उसकी बात को अनसुनी करके भारती ने कहा, "हंसती हूं क्या अपनी इच्छा से। अपूर्व बाबू, तिवारी के स्वस्थ हो जाने पर मैं अवश्य ही मां को चिट्ठी लिखूंगी कि या तो वे आ जायं या फिर अपने लड़के को वापस बुला लें। ऐसे मनुष्य को बाहर छोड़ना नहीं चाहिए।"

अपूर्व बोला, "मां अपने लड़के को अच्छी तरह जानती है। लेकिन देखिए, अगर यहां मेरे बजाय मेरे भाइयों में से कोई होता तो आपकी इतनी बातें न चलतीं। वे लोग आपसे ही सारे काम करा लेते।"

भारती समझी नहीं।

अपूर्व बोला, "भाई लोग सब कुछ खाते-पीते हैं। मुर्गी और डिनर बिना उनका पेट नहीं भरता।"

भारती आश्चर्य से बोली, "यह क्या कह रहे हैं आप?"

अपूर्व बोला, "सच कह रहा हूं। पिताजी भी तो आधे ईसाई थे। मां को उस हालत में क्या कम कष्ट भोगने पड़े थे।"

भारती उत्सुक होकर बोली, "क्या यह सच है ? लगता है मां जी भयानक हिन्दू हैं।"

अपूर्व बोला, "भयानक क्यों ? हिन्दू घर की लड़की को जैसा होना चाहिए वैसी ही है।" मां की बात कहते-कहते उसका स्वर करुण और स्निग्ध हो उठा। बोला, "घर में दो बहुएं हैं, फिर भी मां को अपनी रसोई आप ही बनानी पड़ती है। लेकिन मां का स्वभाव ही ऐसा है। कभी किसी पर दबाव नहीं डालतीं। किसी से कोई शिकायत नहीं करतीं। कहती हैं—मैं भी तो अपने आचार विचार त्याग कर अपने पति के मत को स्वीकार नहीं कर सकी। अगर ये लोग मेरे मत से सहमत न हो सकें तो शिकायत करना ठीक नहीं ? मेरी बुद्धि और मेरे संस्कार मानकर बहुओं को चलना पड़ेगा इसका कोई अर्थ भी है ?"

भारती ने भक्ति और श्रद्धा से अवनत होकर कहा ?, "मां पुराने ज़माने की महिला हैं। लेकिन उनमें धीरज बहुत है।"

अपूर्व ने उत्साहित होकर कहा, "धीरज ? मां के धीरज की भी क्या कोई सीमा है ? आपने उनको देखा नहीं है। देखने पर एकदम ही आश्चर्य-चकित रह जायेंगी।"

भारती प्रसन्न मौन मुख से टकटकी लगाए ताकती रही। अपूर्व बोला, "यह मान लेना पड़ेगा कि समूचे जीवन में मेरी मां दुख ही भोगती रहीं। उनका सम्पूर्ण जीवन पति-पुत्रों के मलेच्छाचार सहते ही बीता है। उनका एकमात्र भरोसा मैं हूं। बीमारी की हालत में केवल मेरे ही हाथ का पकाया भोजन मुंह में डालती है।"

भारती ने कहा, "तब तो उनको कष्ट हो सकता है।"

अपूर्व ने कहा, "शायद हो भी रहा हो। इसलिए तो उन्होंने मुझे पहले छोड़ना नहीं चाहा। लेकिन मैं हमेशा तो घर में बैठा नहीं रह सकता। उन्हें एकमात्र आशा है कि मेरी पत्नी रसोई बनाकर उन्हें खिलाया करेगी।"

भारती हंसकर बोली, "उनकी इस आशा को आप पूरा करके क्यों नहीं आए ?"

अपूर्व बोला, "लड़की पसन्द करके जब मां ने सब ठीक-ठाक कर लिया, तभी मुझे झटपट यहां चला आना पड़ा। मैं कह आया हूं कि मां जब चिट्ठी लिखेंगी आकर आज्ञा का पालन करूंगा।"

भारती बोली, "यही ठीक है।'

अपूर्व बोला, "मैं चाहता हूं कि वह मां को कभी दुख न दे। मुझे क्या ज़रूरत है गान-वाद्य जानने वाली कालेज में पढ़ी हुई विदुषी लड़की की।"

भारती बोली, "हां जरूरत ही क्या है ?"

अपूर्व स्वयं भी किसी दिन इसका विरोधी था। भाभी का पक्ष लेकर झगड़ा करके क्रुद्ध होकर मां से कहा था, "किसी ब्राह्मण-पण्डित के घर से जैसे बने एक लड़की पकड़ लाकर झमेला खत्म कर दो—' इस बात को वह आज बिल्कुल ही भूल गया। बोला, "आप जो बात समझती हैं मेरे भाई और भाभियां उस बात को समझना नहीं चाहते। अपना धर्म मानकर चलना चाहिए। पूरा घर आदमियों से भरा होने पर भी मेरी मां अकेली हैं। इससे बढ़ कर दुर्भाग्य और क्या हो सकता है ? इसीलिए मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं कि मेरे किसी आचरण से मां को दुख न हो।"

कहते-कहते उसका गला भारी हो गया और आंखों में आंसू छलछला उठे।

तभी तिवारी कुछ बड़बड़ा उठा। भारती उठ कर चली गई। आज अपूर्व का तन-मन भय और चिन्ता से अत्यन्त विकल हो उठा था। मां को अपने पास देखने की अन्धी आकुलता से उसके भीतर ही भीतर कुहरा घुमड़ने लगा था। यह बात अन्तर्यामी से छिपी नहीं रही। लेकिन भारती का हृदय अपमान की तरह वेदना से तड़फ उठा।

थोड़ी देर बाद लौटकर उसने देखा अपूर्व किसी तरह फल काटने का काम समाप्त करके चुपचाप बैठा है। बोली, "बैठे हैं ? खाया नहीं ?"

"नहीं, आपके लिए बैठा हूं।"

"क्यों ?"

"आप नहीं खायेंगी ?"

"नहीं। इच्छा होगी तो मेरे लिए अलग रखे हैं।"

अपूर्व ने फलों का थाल हाथ से कुछ आगे ठेलकर कहा; "क्या ऐसा कभी हो सकता है ? आपने सारे दिन नहीं खाया, और—।"

उसकी बात पूरी नहीं हुई थी कि अत्यन्त सूखे दबे स्वर में उत्तर मिला : "ओह, आप तो बहुत परेशान करते हैं। भूखे हैं तो खाइए। नहीं तो खिड़की से बाहर फेंक दीजिए।" यह कह कर वह कमरे में चली गई।

उसके चेहरे को अपूर्व ने देख लिया। उस चेहरे को वह फिर कभी नहीं भूल सका। आने के दिन से लेकर अब तक अनेक बार भेंट हुई थी। झगड़े में, मेल जोल में, शत्रुता में, मित्रता में, सम्पत्ति और विपत्ति में--कितनी ही बार तो इस लड़की को देखा है। लेकिन उस देखने और इस देखने में कोई समता नहीं है।

भारती चली गई। फलों का थाल उसी तरह पड़ा रहा। अपूर्व उसी तरह काठ की तरह अवाक और निस्पन्द बैठा रहा।

एकाध घंटे के बाद उसने कमरे में जाकर देखा, तिवारी के सिरहाने के पास चटाई बिछाए भारती अपनी बांह पर सिर टिकाए सो रही है।

वह जैसे आया था उसी तरह लौट गया और जाकर सो गया।

नींद जब टूटी तो सवेरा हो चुका था।

भारती ने आकर कहा, "मैं अब जा रही हूं।"

अपूर्व हड़बड़ा कर उठ बैठा। लेकिन अभी वह अच्छी तरह होश में भी न आया था कि वह कमरे से निकल कर भाग पड़ी।

नौ

तिवारी रोग मुक्त हो चुका है लेकिन अभी कमजोरी बाकी है। जो आदमी अपूर्व के साथ मामो गया था वही रसोई बना रहा है। तिवारी को बचाने के लिए अपूर्व के आफिस के कर्मचारियों ने अथक परिश्रम किया था। रामदास तो कई दिन घर भी नहीं जा सका था। शहर के एक बड़े डॉक्टर से इलाज कराया गया था। बर्मा देश तिवारी को कभी अच्छा नहीं लगा। अपूर्व ने उसे छुट्टी दे दी है। निश्चय हुआ है कि कुछ और स्वस्थ हो जाने पर वह घर चला जायगा। अगले सप्ताह में शायद यह सम्भव होगा।

उस दिन की गई भारती फिर नहीं आई। तिवारी कभी सोचता—भारती बहुत चालाक लड़की है। अपूर्व के आने का समाचार पाकर भाग गई। कभी सोचता—अपूर्व ने यहां आने के बाद शायद उसका अपमान किया हो। अपूर्व स्वयं कुछ न बताता। उससे पूछते हुए तिवारी डरता कि उसकी पूछ-ताछ से बातें खुल जायेंगी। उसके हाथ का छुआ जल उसने पिया है। उसका पकाया हुआ साबू वार्ली खाया है। शायद जाति इतने भयंकर रूप से नष्ट हो गई है कि उसका कोई प्रायश्चित नहीं है। तिवारी ने निश्चय कर रखा था कि कलकत्ता पहुंचकर वह अपने गांव चला जायगा। वहां गंगास्नान करके, किसी बहाने ब्राह्मणों को भोजन कराके, शरीर को काम-काज चलाने योग्य शुद्ध कर लेगा। इधर-उधर की बातों में यहां की बातें अपूर्व की मां के कानों तक पहुंचा देने से क्या होगा, कुछ कहा जा

सकता। हालदार परिवार की नौकरी जायगी, साथ ही समाज में बदनामी भी हो जायगी।

लेकिन इस स्वार्थ और भय के अतिरिक्त तिवारी के हाथ में एक बात और भी थी। वह बात जितनी मधुर थी उतनी ही वेदनापूर्ण भी थी। अपूर्व के मामो चले जाने के बाद इस लड़की के साथ उसका घनिष्ट परिचय हुआ था। जिस दिन अचानक उसकी मां की मृत्यु हुई, उस समय तक तिवारी का खाना पीना भी नहीं हुआ था। लड़की ने रोते हुए आकर उसका दरवाजा खटखटाया। दो दिन पहले ही जोसेफ मरा था। किवाड़ खोलते ही भारती कमरे में आकर उसके दोनों हाथ पकड़ कर ऐसी रोयी कि क्या कहें। तिवारी का पकाया हुआ भात हांडी में ही रह गया। सारे दिन चिट्ठी लेकर उसे न मालूम कहां-कहां दौड़ना पड़ा। दूसरे दिन जाते समय उसकी आंखों के आंसू जैसे रुकना नहीं चाहते थे। इस बीच उसने भारती को कभी दीदी, कभी बहिन भी कहकर पुकारा था। चार-पांच दिन तक स्वयं ही रसोई बनाकर खिलाई थी। फिर उसके बीमार पड़ जाने पर भारती ने उसकी कितनी सेवा की थी, यह बात वह अच्छी तरह जानता था। कभी सोचता भी न था। याद आते ही जाति नष्ट होने की बात याद आ जाती थी। सुबह स्नान करके भीगे बालों की विशाल राशि पीठ पर लटकाए प्रतिदिन उसका समाचार जानने के लिए आया करती थी। रसोई घर में नहीं जाती थी। कोई चीज़ नहीं छूती थी। चौखट के बाहर फर्श पर बैठकर कहती, "आज क्या क्या पकाया तिवारी? देखूं तो।"

"दीदी, आसन बिछा दूं?"

"नहीं, फिर चौका धोना पड़ेगा।"

"क्या आसन भी छूने से बिगड़ता है?"

भारती कहती, "तुम्हारे बाबू तो सोचते हैं कि मेरे रहने से समूचे मकान को छूत लग गई है। अपना मकान होता तो शायद जल छिड़क कर पवित्र कर लेते। यही बात है न तिवारी?"

तिवारी हंसकर कहता, "तुम नहीं जान सकीं। इसलिए सभी को वैसा ही समझती हो। लेकिन अगर बाबू को एक बार भी अच्छी तरह जान जातीं तो तुम भी कहतीं कि ऐसा मनुष्य संसार में दूसरा कोई नहीं है।"

भारती कहती, "नहीं है, यह तो मैं भी कहती हूं। तभी तो जिसने चोरी होने में रुकावट डाली उसीको चोर समझ बैठे।"

इस विषय में अपना अपराध याद करके तिवारी दुखी हो उठता।

बात दबाकर कहता, "लेकिन तुमने भी तो कम नहीं किया। जान-बूझ कर बाबू पर बीस रुपए जुर्माना कराया।"

भारती कहती, "लेकिन उस दंड को तो मैंने स्वयं ही झेला था तिवारी तुम्हारे बाबू को तो देने नहीं पड़े।"

"देने नहीं पड़े ? मैंने अपनी आंखों से देखा कि दो नोट देकर अदालत से बाहर आए।"

"और मैंने भी तो अपनी आँखों से देखा था तिवारी, कि तुमने कमरे में घुसते ही दो नोट नीचे से उठाकर अपने बाबू को दिए थे।"

तिवारी के हाथ की कलछुल हाथ की में रह गई, "ओह, यह सच है दीदी।"

"लेकिन सब्जी जली जा रही है तिवारी।"

तिवारी ने कहा, "बाबू से मैं यह बात ज़रूर कहूंगा दीदी।"

भारती हंसकर बोली, "तो क्या होगा ? मैं तुम्हारे बाबू से डरती थोड़े ही हूं।"

लेकिन यह आश्चर्यजनक बात छोटे बाबू से कहने का अवसर तिवारी को नहीं मिला। कब और किस तरह मिलेगा यह भी नहीं जान सका।

एक दिन बासी हल्दी से तरकारी बना रहा था कि भारती की झिड़की सुननी पड़ी। और जिस दिन स्नान किए बिना ही उसने रसोई तैयार की भारती ने उसके हाथ का भोजन नहीं खाया।

तिवारी गुस्से से बोला, "तुम लोगों में इतना विचार है। देखता हूं तुम तो माताजी को भी पार करके आगे बढ़ रही हो ?"

भारती ने कोई उत्तर नहीं दिया। हंसती हुई चली गई।

बर्मा में अब वह कभी नहीं लौटेगा। जाने से पहले भारती से भेंट होने की आशा भी नहीं है। दिन-प्रतिदिन एक ही प्रतीक्षा में चुपचाप बैठे रहने से उसकी छाती में भारी कसक उठती रहती है।

उस दिन आफिस से लौटकर अपूर्व ने अचानक पूछा, "भारती का घर कहां है तिवारी ?"

तिवारी बोला, "मैंने क्या जाकर देखा है बाबू ?"

"जाते समय तुम्हें बताया हो शायद ?"

"मुझे बताने की भला क्या ज़रूरत थी।"

अपूर्व बोला, "मुझे बताया तो था लेकिन ठीक से याद नहीं रहा। कल पता लगाना।"

तिवारी के मन में तूफान मचल उठा।

अपूर्व बोला, "पुलिस उस चोरी का माल देना चाहती है लेकिन

भारती के हस्ताक्षर आवश्यक हैं।"

तिवारी कुछ देर चुप रहकर बोला, "उस दिन वह यही सूचना देने आई थी। लेकिन मेरी हालत देखकर फिर लौटकर न जा सकी।"

"वे देखभाल न करतीं तो तू कब का मर चुका होता तिवारी। मुझ से भी भेंट न होती।"

तिवारी कुछ नहीं बोला।

अपूर्व ने फिर कहा, "आकर मैंने देखा कि अंधेरी कोठरी में तू है और वे हैं। तीसरा कोई नहीं। कहां जाना होगा, कहां सोना होगा, इसका कुछ निश्चय नहीं। दो दिन पहले ही उसके माता-पिता की मृत्यु हुई थी। बड़े कड़े दिल की लड़की है तिवारी।"

तिवारी चुप न रह सका। बोला, "वे कब चली गईं?"

अपूर्व बोला, "मेरे आने के दूसरे ही दिन। सवेरा होते न होते ही आवाज आई, 'अब जा रही हूं', कहकर एकदम चली गई।"

"नाराज होकर गई थीं क्या?"

"नाराज होकर?" अपूर्व ने ज़रा सोचकर कहा, "नहीं जानता। शायद हो सकता है। उसे समझाया भी तो नहीं जा सकता। नहीं तो तेरा इतना खयाल रहता था, एकबार समाचार जानने भी नहीं आई कि तू अच्छा हो गया या नहीं।"

यह बात तिवारी को अच्छी नहीं लगी। बोला, "हो सकता है। स्वयं अपने ही रोग-शोक के झमेले में पड़ गई हों।"

"अपने रोग-शोक में?" अपूर्व चौंक पड़ा। उसके सम्बन्ध में कई दिन बहुत-सी बातें याद आई हैं लेकिन ऐसी आशंका मन में पैदा नहीं हुई। अपूर्व को एकदम ध्यान आया कि उनके नए डेरे पर तो देखने सुनने वाला भी कोई नहीं है। हो सकता है अस्पताल वाले ले गए हों। हो सकता है अब तक जीवित भी न हो।

यह सब सोचकर वह मन ही मन व्याकुल हो उठा। एक कुर्सी पर बैठकर नेकटाई-वेस्ट कोट खोलते-खोलते उन दोनों में बातचीत शुरू हुई थी। उसके हाथ का काम वहीं रुक गया। मुंह में एक भी शब्द नहीं रहा। कुर्सी पर काठ की पुतली की तरह बैठा रहा।

कुछ देर बाद तिवारी धीरे-धीरे बोला, "छोटे बाबू, मकान मालिक का आदमी आया था। अगर तीसरी मंजिल का कमरा लेना हो तो इसी महीने बदल लेना चाहिए। वह कह गया है। मुझे चिन्ता हो रही है कि कोई फिर आ जाए।"

अपूर्व ने पूछा, "और कौन आने वाला है?"

तिवारी बोला, "आज मां जी का एक पोस्टकार्ड मुझे मिला है। दरबान से लिखवाकर भेजा है उन्होंने। मैं अच्छा हो गया इसके लिए बहुत प्रसन्नता प्रगट की है। दरबान का भाई अपने गांव छुट्टी लेकर जा रहा है। उसके हाथ पांच रुपए विश्वेश्वर की पूजा के लिए भेजे हैं।"

अपूर्व बोला, "ठीक तो है। मां तुझे बेटे जैसा प्यार करती हैं तिवारी।"

तिवारी बोला, "बेटे से भी अधिक। मैं तो चला ही जाऊंगा। मां तो चाहती हैं कि छुट्टी लेकर हम दोनों ही चलें। चारों ओर रोग-शोक—"

अपूर्व बोला, "रोग-शोक मरण कहां नहीं है ? कलकत्ते में नहीं है ? तूने शायद बहुत-सी बातें लिखकर उन्हें डरा दिया है।"

"जी नहीं," तिवारी बोला, "काली बाबू पीछे पड़ गए हैं। सभी की इच्छा है कि वैशाख के आरम्भ में ही यह शुभ कार्य सम्पन्न हो जाए।"

काली बाबू की छोटी लड़की को माताजी ने पसन्द किया है। इस बात का आभास उनके कई पत्रों में भी था। तिवारी की बात अपूर्व को अच्छी नहीं लगी। बोला, "इतनी जल्दी किसलिए ? अगर काली बाबू को बहुत अधिक जल्दी हो तो वे और कहीं प्रबन्ध कर सकते हैं।"

तिवारी जरा हंसकर बोला, "जल्दी माताजी को है। शायद लोग उनको यह कहकर डराते रहे हैं कि बर्मा में लड़के बिगड़ जाते हैं।"

अपूर्व को क्रोध आ गया। बोला, "देख तिवारी, मुझे पंडिताई दिखाने की ज़रूरत नहीं है। मां को रोज़-रोज़ चिट्ठियां क्यों लिखता रहता है ? मैं बच्चा नहीं हूं।"

अकारण क्रोध से तिवारी पहले विस्मित हुआ। बीमारी के बाद से उसका दिमाग अच्छा नहीं था। रोष भरे स्वर में बोला, "आते समय यह बात मां को कहकर न आ सके ? ऐसा होने से मैं बच जाता। जात-धर्म नष्ट करने के लिए जहाज़ पर न चढ़ना पड़ता।"

अपूर्व ने उसके प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया। खूंटी से कोट नेकटाई लेकर पहनता हुआ तेज़ी से कमरे से निकल गया।

तिवारी गरम होकर बोला, "कल रविवार को जहाज चटगांव जाता है। मैं उसी से घर चला जाऊंगा।—कहे देता हूं।"

अपूर्व जाते-जाते बोला, "न जाओ तो हज़ारों सौगन्धें रहीं।"

दस

अपूर्व के जाने का एकमात्र स्थान था तलवलकर का घर। लेकिन रास्ते में उसे याद आया कि आज शनिवार है। उसका पत्नी के साथ थियेटर जाने का प्रोग्राम है। तभी उसे अचानक भारती की याद आ गई। उसका आहत, अपराधी मन अपने ही प्रति बारबार कहने लगा। वह अच्छी तरह ही है। उसे कुछ भी नहीं हुआ। नहीं तो इतनी बड़ी जीवन-मरण की समस्या में खबर भी न देती ? तेल के कारखाने के आसपास ही कहीं उसका नया मकान है। यह बात वह भूला नहीं था। उसे खोजकर ढूंढ़ निकालने की कल्पना से उसका मन नाच उठा।

लेकिन इसे महसूस करके अपने मन के चोर के पकड़े जाने की लज्जा से भी वह नहीं बच सका। शायद वह मुझे नहीं चाहती। शायद वह मुझे देखकर उपेक्षा करे। यह सोचकर वह स्वयं को सैकड़ों तरह से समझाने लगा। पुलिस वाले उससे हस्ताक्षर लेना चाहते हैं। इसी काम से वह आया है। वह कैसी है, कहां है, यह सब कौतूहल उसे अकारण नहीं है। इस तरह इतने दिनों बाद जाने का वह कोई उलाहना भी नहीं दे पायेगी।

इस इलाके में अपूर्व पहले कभी नहीं आया था। काफी दूर चलने पर दायीं ओर नदी के किनारे रास्ता दिखाई दिया। एक आदमी से पूछा, "इधर साहब—मेम लोग कहां रहते हैं ?" प्रत्युत्तर में उस आदमी ने आसपास के छोटे बड़े बंगले दिखा दिए। उनकी सजावट देखकर अपूर्व समझ गया कि उसका प्रश्न गलत था। संशोधन करके पूछा, "अनेक बंगाली भी तो यहां रहते हैं ? कोई कारीगर, कोई मिस्त्री है।"

वह आदमी बोला, "बहुत हैं। मैं भी एक मिस्त्री हूं। तुम किसको खोज रहे हो ?"

अपूर्व ने कहा, "देखो मैं जिसे खोज रहा हूं—अच्छा जो बंगाली ईसाई अथवा—"

वह आदमी आश्चर्य से बोला, "क्या कह रहे हैं ? बंगाली—फिर ईसाई कैसे ? ईसाई हो जाने पर फिर कोई बंगाली रह जाता है क्या ? ईसाई, ईसाई है। मुसलमान, मुसलमान है। यही तो।"

अपूर्व बोला, "अरे भाई, बंगाल का आदमी तो है। बंगला भाषा तो बोलता है।"

वह गर्म होकर बोला, "भाषा बोलने से ही हो गया ? जो जात देकर ईसाई बन गया, उसमें और क्या पदार्थ रह गया महाशय ? कोई भी बंगाली

उसके साथ आहार-व्यवहार करे तो देख लूं। न मालूम कहां से मास्टरी करने कुछ लड़कियां आ गई है। बच्चों को पढ़ाती हैं—बस। इसीलिए कोई भी क्या उनके साथ खा रहा है या बैठ रहा है ?"

अपूर्व ने पूछा, "वे कहां रहती हैं—आप जानते हैं ?"

वह बोला, "जानता क्यों नहीं। इस रास्ते से सीधे नदी के किनारे जाकर पूछिए कि नया स्कूल कहां है ;—छोटे-छोटे बच्चे भी बता देंगे।" यह कहकर वह अपने काम पर चला गया।

उसी रास्ते चलकर अपूर्व को लाल रंग का काठ का एक मकान दिखाई दिया। रात हो चुकी थी। सुनसान था। ऊपर की खुली खिड़की से बत्ती की रोशनी आ रही थी। किसी से पूछने के लिए वहीं खड़ा हो गया। उसे निश्चय हो गया कि भारती यहीं रहती है।

पन्द्रह मिनट बाद दो-तीन आदमी बाहर निकले। उसे देखकर एक ने पूछा, "कौन हैं ? किसे चाहते हैं ?"

अपूर्व ने लज्जित होकर पूछा, "मिस जोसेफ नाम की कोई महिला यहां रहती है ?"

वह बोला, "अवश्य रहती हैं। आइए।"

अपूर्व की जाने की इच्छा न थी। उसे दुविधा में देख वह आदमी बोला, "आप कबसे खड़े थे ? आइए न, हम आपको पहुंचा दें।" यह कह कर वह आगे हो लिया।

"चलिए," कहकर वह उसके पीछे-पीछे मकान के निचले कमरे में पहुंच गया। कमरा काफी बड़ा था। छत से एक बहुत बड़ी बत्ती लटक रही थी। कुछ टेबल-कुर्सियां, एक ब्लैकबोर्ड और दीवारों पर चारों ओर तरह-तरह के आकार और रंगों के नकशे टंगे हुए थे। यही नया स्कूल है। देखते ही अपूर्व पहचान गया।

वहां चार-पांच स्त्रियों-पुरुषों में किसी विषय पर बहस हो रही थी। सहसा एक अपरिचित पुरुष को आते देख सब चुप हो गए। अपूर्व ने एक बार उन लोगों की ओर देखा। फिर जिसके साथ आया था उसी के पीछे-पीछे चढ़ गया। भारती कमरे में ही थी। अपूर्व को देखते ही उसका चेहरा चमक उठा। कुर्सी पर बैठाकर बोली, "इतने दिनों तक आपने मेरी खोज खबर खूब ली ?"

अपूर्व बोला, "आपने भी तो हम लोगों की खोज खबर नहीं ली।" लेकिन यह उत्तर उचित नहीं था, यह कहते ही वह समझ गया।

भारती हंसकर बोली, "तिवारी घर जाना चाहता है तो चला जाए। न जाने पर वह अच्छा भी न होगा।"

अपूर्व बोला, "इसका मतलब यह है कि मेरा यह अभियोग गलत है कि आप हम लोगों की खोज खबर नहीं रखतीं।"

भारती फिर हंसकर बोली, "परसों बारह बजने से पहले ही कोर्ट जाकर रुपया और चीजें वापस ले आइएगा। भूल न जाइएगा।"

"लेकिन उस पर तो आपके हस्ताक्षर होने जरूरी हैं।"

"मैं जानती हूं।"

"आपके साथ तिवारी की भेंट नहीं हुई?"

"नहीं। लेकिन आप जाकर उस पर बेकार नाराज़ न हों।"

अपूर्व बोला, "झूठा नहीं, सच्चा क्रोध करना उचित है। अपने प्राण बचाने वाले के प्रति मन में कृतज्ञता रहना उचित है।"

भारती बोली, "वह तो है ही। नहीं तो वह मुझे जेल भेजने की भी कम से कम चेष्टा ज़रूर करता।"

अपूर्व इस संदेह को समझ गया। नीचा मुंह करके बोला, "आप मुझ पर भयंकर रूप से नाराज हैं।"

भारती बोली, "कभी नहीं। सारे दिन स्कूल में बच्चों को पढ़ाकर घर लौटकर फिर समिति की सेक्रेटरी की हैसियत से अनेक चिट्ठी-पत्रियां लिखने के बाद बिस्तर पर लेटते ही सो जाती हूं। नाराज होने के लिए मेरे पास समय ही नहीं है।"

अपूर्व बोला, "ओह, नाराज होने तक का समय नहीं है।"

भारती ने कहा, "कहां है? आप किसी दिन सबेरे से देखिए कि सच कहती हूं या झूठ।"

अपूर्व के मुंह से अनजाने ही एक लम्बी सांस निकल गई। बोला, "मुझे देखने की क्या जरूरत है?" फिर जरा रुककर बोला, "स्कूल से आपको क्या वेतन मिलता है?"

भारती हंसी दबाकर बोली, "आप भी खूब हैं? क्या वेतन की बात पूछने पर उसका अपमान नहीं होता?"

अपूर्व क्षुब्ध कंठ से बोला, "मैंने अपमान करने के लिए नहीं कहा। जब नौकरी ही कर रही हैं—।"

भारती ने कहा, "न करके क्या भूखा मर जाने को कहते हैं?"

"ऐसी नौकरी से तो भूखा मरना ही अच्छा है। हमारे आफिस में एक जगह खाली है। वेतन एक सौ रुपए माहवार मिलेगा। शायद दो घंटे से अधिक काम नहीं करना पड़ेगा।"

"आप मुझे वह काम करने को कहते हैं?"

क्या हर्ज है?"

भारती बोली, "नहीं, मैं नहीं करूंगी। आप उसके मालिक हैं। काम में कभी भूल हुई तो लाठी लेकर द्वार पर आ खड़े होंगे।"

अपूर्व ने उत्तर नहीं दिया। मन ही मन समझ गया कि भारती ने केवल मज़ाक किया है। फिर बोला, "मालूम हो रहा है कि आप लोगों का स्कूल शुरू हो गया। बच्चों ने पढ़ना शुरू कर दिया है।"

भारती बोली, "ऐसा होता तो शोर कुछ कम रहता। लगता है कि उनके शिक्षक विषय का निर्वाचन कर रहे हैं।"

"आप नहीं जायेंगी ?"

"जाना तो है। लेकिन आपको छोड़कर जाने की इच्छा नहीं हो रही।" यह कहकर वह हंस पड़ी। लेकिन अपूर्व के कान तक लाल हो उठे। दीवार पर सजे कच्चे झाऊ के पत्तों से अंकित कुछ अक्षरों पर नज़र डालकर अपूर्व बोला, "वहां पर वह क्या लिखा हुआ है ?"

"आप पढ़ सकते हैं।"

अपूर्व बोला—"पथ के दावेदार"—इसका क्या अर्थ है ?"

"यह हम लोगों की संस्था का नाम है। इस विद्यालय की संचालक भी यही है। आप इसके सदस्य बनेंगे ?"

"इसमें करना क्या होगा ?"

भारती बोली, "हम सब राही हैं। मनुषत्व के मार्ग से मनुष्य के चलने के सभी प्रकार के दावे स्वीकार करके, हम सभी बाधाओं को ठेलकर चलेंगे। हमारे बाद जो लोग आयेंगे, वे बाधाओं से बचकर चल सकें। यही हमारी प्रतिज्ञा है। चलिए हमारे साथ ?"

"हमारा राष्ट्र पराधीन है भारती। स्टेशन की एक बेंच पर बैठने तक का हमें अधिकार नहीं है। अपमानित होने पर दावा करने का उपाय नहीं।" कहते-कहते उस दिन की लांछना—फिरंगी लड़कों के बूटों के आघात से लेकर स्टेशन मास्टर द्वारा निकाले जाने तक की सभी अपमान-जनक बातों को याद करके उसकी आंखें लाल हो उठीं। बोला, "हमारे बैठने से बेंच अपवित्र हो जाती है। हमारे रहने से मकान की हवा बिगड़ जाती है। जैसे हम मनुष्य ही नहीं है। अगर हम लोगों की यही साधना हो तो मैं आप लोगों के दल में हूं।"

"आप क्या मनुष्य की पीड़ा का कुछ पता पा सके हैं अपूर्व बाबू ? क्या वास्तव में मनुष्य के छूने में, आपत्ति की कोई बात नहीं है ? उसके शरीर की हवा लगने से दूसरे के मकान की हवा क्या गन्दी नहीं हो जाती ?"

अपूर्व ने दृढ़ स्वर में कहा, "बिलकुल नहीं। मनुष्य के चमड़े का रंग उसकी मनुष्यता का मापदंड नहीं। किसी विशेष देश में जन्म लेना उसका

कोई अपराध नहीं है। क्षमा करना आपके पिता ईसाई थे। इसलिए कोर्ट ने मुझ पर बीस रुपया जुर्माना किया। यह कहां का न्याय है ? याद रखिए इसी कारण एक दिन हमारा सर्वनाश होगा। अकारण मनुष्य को छोटा समझना। यह घृणा-द्वेष, यह अपराध भगवान कभी भी सहन नहीं करेंगे।"

भारती चुप बैठी रही। अपूर्व की बातें समाप्त होते ही उसने मुस्करा कर अपना मुंह दूसरी ओर घुमा लिया। अपूर्व इस तरह चौंक पड़ा जैसे किसी ने उसके मुंह पर कसकर थप्पड़ मार दिया हो। भारती के किसी प्रश्न पर अब तक उसने ध्यान नहीं दिया था। लेकिन अब वे अग्नि शिखा की तरह उसके दिमाग में सनसनाते हुए चक्कर काटकर उसे एकदम ही वाक्यहीन कर गए।

कुछ क्षणों के बाद जब भारती ने नजर उठाईं तो उसके होठों पर हंसी नहीं थी। बोली, "आज शनिवार है। हमारा स्कूल बन्द है। लेकिन समिति का काम होगा। चलिए न, नीचे चलकर आपका डाक्टर साहब से परिचय कराकर आपको 'पथ के दावेदार' का सदस्य बनवा दूं।"

"क्या वे अध्यक्ष हैं ?"

"अध्यक्ष नहीं, वे हम लोगों की जड़ हैं। धरती के भीतर रहते हैं। उनका काम आंखों से दिखाई नहीं देता।"

"क्या इस सभा के सभी सदस्य ईसाई हैं ?"

"नहीं। मेरे अतिरिक्त सभी हिन्दू हैं।"

"लेकिन महिलाओं की आवाज़ भी तो सुन रहा हूं।"

"वे सब हिन्दू हैं।"

अपूर्व बोला, "सम्भवतः वे लोग जाति भेद—अर्थात् खान-पान और और छूत-छात का विचार नहीं करते होंगे ?"

भारती ने कहा, "नहीं।" फिर हंसती हुई बोली, "लेकिन अगर कोई यह सब माने तो उसके मुंह में हम लोग कोई खाद्य पदार्थ जबर्दस्ती ठूंस भी नहीं देते। मनुष्य की व्यक्तिगत मान्यता का हम सम्मान करते हैं। आपको कोई भय नहीं है।"

"भय किस बात का है ?—आपकी तरह शिक्षित महिलाएं भी संभव है आपके दल में हैं ?"

"मेरी तरह ?—हमारी जो अध्यक्षा हैं उनका नाम है सुमित्रा। वे अकेली ही पूरे विश्व का भ्रमण करके आई हैं। डाक्टर के अतिरिक्त उन जैसी विदुषी सम्भवतः इस देश में और कोई नहीं है।"

"और जिन्हें आप डाक्टर कह रही हैं वे ?"

"डाक्टर ?" श्रद्धा और भक्ति से भारती की दोनों आंखें छलक आईं बोली, "उनकी बात रहने दें अपूर्व बाबू । परिचय देने लगूंगी तो उनको छोटा बना डालूंगी ।"

अपूर्व चुप रहा। देश प्रेम का पागलपन तो उसके रक्त में विद्यमान था ही । पथ के दावेदार का विचित्र नाम उसे अपनी ओर आकर्षित करने लगा। उसके साथ घनिष्ट रूप से मिलने के लोभ को रोक रखना कठिन हो गया । फिर भी एक प्रकार की विजातीय, धर्महीन, अस्वस्थकर भाप नीचे से उठकर उसने मन को धीरे-धीरे ग्लानि से भरने लगी ।

शोर बढ़ रहा था । भारती बोली, "चलिए, नीचे चलें ।"

अपूर्व बोला, "चलिए ।"

दोनों नीचे पहुंचे तो भारती ने उसे बेंत के एक सोफे पर बैठने को कहा और जगह की कमी के कारण स्वयं भी उसके पास बैठ गई ।

ऐसा अद्भुत आचरण भारती ने इससे पहले कभी नहीं किया था । अपूर्व को लज्जा अनुभव होने लगी। लेकिन यहां इन मामलों में आक्षेप करने का किसी के पास अवसर नहीं था ।

वहां पहुंचते ही अपूर्व को एक व्यक्ति एकटक देखता रह गया। वह कुछ लिख रहा था ।

अपूर्व ने गिनकर देखा—छै महिलाएं और आठ पुरुष मिलकर एक साथ किसी विषय पर बातचीत कर रहे थे। वे सभी लोग अपरिचित हैं, केवल एक आदमी को देखते ही अपूर्व पहचान गया। वेशभूषा में कुछ परिवर्तन अवश्य हो गया था। लेकिन उसने इसी आदमी को कुछ दिन पहले मिक्थिला स्टेशन पर बिना टिकट होने के अपराध में पुलिस के हाथ पड़ने से बचाया था । और जिसने जल्द से जल्द रुपए वापस करने का वचन दिया था । उस आदमी ने नज़रें दौड़ाकर देखा। लेकिन शराब के नशे में जिसके सामने हाथ पसारकर सहायता ग्रहण की थी शराब के पिए हुए उसकी याद तक नहीं आ सकी। लेकिन इस बात के लिए नहीं, भारती के सम्बन्ध में सोचकर उसके हृदय में पीड़ा की कसक उठी कि वह ऐसे लोगों के बीच कैसे आ फंसी ।

भारती ने सामने खड़ी महिला की ओर इशारा करके कहा, "यह हमारी अध्यक्षा हैं सुमित्रा देवी ।"

कहने की आवश्यकता नहीं थी । अपूर्व ने उसे पहले ही पहचान लिया था । उम्र तीस के लगभग होगी । लेकिन जान पड़ता है जैसे कहीं की राज-रानी हैं । शरीर का रंग तपे हुए सोने के समान है । दक्षिणी ढंग से सिर के बाल ढीले बांधे हुए है। कलाई में सोने की दो-चार चूड़ियां हैं। गले पर

सोने के हार का कुछ भाग चमक रहा है। कानों में हरे पत्थर के झुमकों पर प्रकाश पड़ने से सांप की आंखें जैसे दिखाई देते हैं। यही तो चाहिए। माथा, ठोड़ी, नाक,आंख, होंठ—कहीं भी कोई कमी नहीं है।इतना आश्चर्य-जनक सौन्दर्य। ब्लैकबोर्ड पर वे एक हाथ रखे खड़ी थीं। साहबी पोशाक वाले सज्जन के प्रत्युत्तर में वह बोलने लगीं—यही तो। इसी को तो नारी का कंठ स्वर कहते हैं।"

सुमित्रा ने कहा, "मनोहर बाबू, आप नौसिखिए वकील नहीं हैं। आपका तर्क असम्बद्ध हो जाने पर मैं इसका विवेचन कर सकती हूं।"

मनोहर बाबू बोले, "असम्बद्ध तर्क करना मेरा व्यवसाय भी नहीं है।"

सुमित्रा हंसते हुए बोली, "मुझे भी यही आशा है। बहुत अच्छा। आपके बयान को छोटा कर देने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि आप नवतारा के पति के मित्र हैं। वे जबर्दस्ती उसे वापस ले जाना चाहते हैं। लेकिन उनकी पत्नी गृहस्थी चलाने की इच्छा न रख कर देश का काम करना चाहती हैं। इसमें तो कोई अन्याय नहीं है।"

"लेकिन पति के प्रति भी तो पत्नी का कुछ कर्तव्य है? देश का काम करूंगी, कह देने से इसका निर्वाह नहीं हो जाता।"

सुमित्रा बोली, "मनोहर बाबू, नवतारा के पति का अपनी पत्नी के प्रति जो कर्तव्य था, क्या उसे उन्होंने कभी निभाया? यह सब जानते हैं। कर्तव्य का भार तो दोनों ओर समान ही रहता है।"

मनोहर बाबू क्रुद्ध स्वर में बोले, "लेकिन क्या इसीलिए स्त्री को कुलटा बन जाना चाहिए? ऐसी तो कोई युक्ति है नहीं। इस दल में शामिल होकर, सतीत्व को सुरक्षित रखकर वे देश की सेवा कर सकेंगी, यह तो किसी प्रकार भी सम्भव नहीं है।"

सुमित्रा के चेहरे पर हल्की सी लालिमा छा गई। लेकिन दूसरे पल ही सामान्य हो गया। बोली; "जोर देकर कुछ भी नहीं कहना चाहिए। लेकिन हम देख रहे हैं कि नवतारा में हृदय है, प्राण है, साहस है और सबसे बड़ा कर्म ज्ञान है। देश सेवा में हम इसी को पर्याप्त मानते हैं। लेकिन आप जिसे सतीत्व कहते हैं उसकी रक्षा करने की उनको सुविधा मिल सकेगी या नहीं, यह तो वे ही जानती हैं।"

नवतारा के चेहरे पर नजर डालकर मनोहर बाबू ने व्यंग्य से कहा, "अच्छा कर्मज्ञान है। सम्भवत: देश के काम में वे महिलाओं को यही शिक्षा देती फिरेंगी?"

सुमित्रा बोली, "उसके उत्तरदायित्व पर हमें विश्वास है। व्यक्ति

विशेष के चरित्र की आलोचना करना हमारे नियमों के विरुद्ध है। जिस पति को वह प्रेम न कर सकी और इस महान कार्य के लिए उन्होंने जिसे छोड़ देना अन्याय नहीं समझा। अगर देश की महिलाओं को वे यही शिक्षा दें तो हमें कोई आपत्ति नहीं होगी।"

"हमारे सीता-सावित्री के देश में क्या आप स्त्रियों को यही शिक्षा देंगी?"

सुमित्रा बोली—"देना अनुचित नहीं है। महिलाओं के सामने अर्थहीन शब्द न कहकर अगर नवतारा कहे कि इस देश में एक दिन सीता को भी आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए पति को त्यागकर पाताल में जाना पड़ा था। और राजकन्या सावित्री ने दरिद्र सत्यवान को विवाह से पहले इतना प्यार किया था कि उसकी अल्प आयु के बारे में जानते हुए भी हिचकी नहीं और मैं स्वयं भी उस दुष्ट पति को प्यार नहीं कर सकी। और उसे छोड़कर चली आई हूं। इसलिए मेरी जैसी अवस्था में तुम लोग भी वही करो। इस शिक्षा से तो देश की भलाई ही होगी। मनोहर बाबू।"

मनोहर बाबू के होंठ क्रोध से कांपने लगे। पहले तो उनके मुंह से बात ही नहीं निकली। फिर बोले, "ऐसा होने पर देश नष्ट हो जाएगा। आप लोगों की जो इच्छा हो कीजिए लेकिन दूसरों को ऐसी शिक्षा मत दीजिए। यूरोप की सभ्यता की हवा लगने से काफी क्षति हुई है। लेकिन महिलाओं में इस सभ्यता का प्रचार करके समूचे भारत वर्ष को रसातल में मत भेजिए।"

सुमित्रा के चेहरे पर विरक्ति तथा क्लान्ति एक साथ ही फूट पड़ी। बोली, "देश को रसातल से बचाने का यदि कोई मार्ग है तो यही है। आपको योरोपियन सभ्यता के सम्बन्ध में यथेष्ट ज्ञान नहीं है। इसलिए इस विषय पर बहस करना समय की बर्बादी होगी। बहुत टाइम बर्बाद हो गया। हम लोगों को और भी बहुत से काम करने हैं।"

मनोहर बाबू ने यथासम्भव अपना क्रोध दबाकर कहा, "मेरे पास भी अधिक समय नहीं है?—तो नवतारा नहीं जायेगी?"

"नहीं," नवतारा ने सिर झुका कर कहा।

मनोहर ने सुमित्रा से कहा, "तब इसकी जिम्मेदारी आप पर ही है।"

नवतारा बोली, "मेरी जिम्मेदारी स्वयं मुझ पर ही है। आपको चिंता करने की जरूरत नहीं।"

मनोहर ने वक्र दृष्टि से उसकी ओर देख कर सुमित्रा से पूछा, "पति गृह में विवाहित जीवन से अधिक गौरव की वस्तु नारी के लिए और भी कुछ है क्या?"

"दूसरों की बात जो भी हो, लेकिन नवतारा का पति के घर रहकर

जीवन बिताना कोई गौरव का जीवन नहीं है।"

इस उत्तर पर मनोहर स्वयं को न रोक सके। क्रुद्ध होकर पूछ बैठे। "लेकिन घर से बाहर रह कर जो यह व्यभिचार पूर्ण जीवन बितायेगी। उसे आप सम्भवतः गौरवपूर्ण जीवन कहेंगी।"

इतने भीषण विद्रूप से भी किसी के चेहरे पर चंचलता दिखाई नहीं दी। सुमित्रा ने शान्त स्वर में कहा, "हम लोगों की समिति में संक्षेप में बातचीत करने का नियम है। यह न भूलिए।"

"और अगर मैं इस नियम को न मान सकूं तो?"

"तो हमें बाहर निकालना पड़ेगा।"

मनोहर बाबू पागल हो उठे। एकदम सीधे खड़े होकर बोले, "अच्छा, मैं जाता हूं। गुडबाई।"—यह कह कर दरवाजे के पास पहुंचकर क्रोध से पागल होकर बोले, "मैं तुम लोगों का सारा हाल जानता हूं। तुम लोग ब्रिटिश राज्य को समाप्त कर सकोगी, कभी सोचना मत। मैं एडवोकेट हूं। किस तरह तुम्हारे हाथों में हथकड़ियां डाली जा सकती हैं, मैं अच्छी तरह जानता हूं। अच्छा" यह कह कर वे चले गये।

अचानक यह कौन सा कांड हो गया। यद्यपि किसी ने भी उत्तेज़ना प्रदर्शित नहीं की तो भी सभी के चेहरे पर एक छाया सी डोल गई। केवल एक व्यक्ति जो कोने में बैठा लिख रहा था, उसने एक बार भी आंख उठा कर नहीं देखा। अपूर्व ने सोचा—या तो यह एकदम बहरा है या पत्थर की भांति निर्विकार है। मनोहर ने इस समिति के विरुद्ध जो बात कहीं, वे अत्यन्त सन्देहपूर्ण हैं। इतनी बड़ी संख्या में इन आश्चर्यमयी नारियों ने कहां से आकर यह समिति स्थापित की है, इसका उद्देश्य क्या है? भारती को अचानक इसका पता कैसे लगा? और यह आदमी जो टिकट के बदले शराब खरीदकर पी लेने पर उसके सामने ही पकड़ा गया था—और सबसे बढ़कर वह नवतारा—पति को छोड़कर देश का काम करने आई है। सतीत्व की रक्षा की बात पर सोचने के लिए जिसके पास समय नहीं है—फिर भी ये सब लोग इतने बड़े अन्याय का समर्थन ही नहीं कर रहे उसे प्रश्रय भी दे रहे हैं। और जो इस दल की अध्यक्षा हैं, उन्होंने स्वयं स्त्री होते हुए भी खुली सभा में इतने पुरुषों के सामने सती धर्म के प्रति अपनी गहरी अवज्ञा निस्संकोच प्रगट करने में लज्जा नहीं की।

कुछ देर तक लोगों में खामोशी छाई रही। बाहर अंधेरा था। राजपथ सुनसान पड़ा था। एक प्रकार की उद्विग्न आशंका से अपूर्व का मन भारी हो गया।

अचानक सुमित्रा बोल उठी, "अपूर्व बाबू।"

अपूर्व ने चकित होकर मुंह उठाकर देखा।

सुमित्रा ने कहा, "आप हम लोगों को नहीं जानते लेकिन भारती के द्वारा हम सभी आपसे परिचित हैं। सुना है आप हमारी समिति के सदस्य बनना चाहते हैं। क्या यह सच है ?"

अपूर्व ने गर्दन हिलाकर सम्मति प्रगट की। इन्कार न कर सका। जो व्यक्ति एकाग्रचित से लिख रहा था, उसे लक्ष्य करके सुमित्रा ने कहा, "अपूर्व बाबू का नाम लिख लीजिए।" फिर हंसकर अपूर्व से कहा, "हमारे यहां किसी प्रकार का चन्दा नहीं लिया जाता। हमारी समिति की यही विशेषता है ?"

प्रत्युत्तर में अपूर्व ने हंसने की चेष्टा की, लेकिन हंस न सका। एक मोटी जिल्द वाले रजिस्टर में उसका नाम लिख लिया गया है, यह देखकर वह चुप न रह सका। बोला, "लेकिन उद्देश्य क्या है ? मुझे क्या करना पड़ेगा ? यह तो मैं कुछ नहीं जानता।"

"भारती ने आपको बताया नहीं ?"

अपूर्व बोला, "कुछ तो बताया है। लेकिन एक बात आपसे पूछना चाहता हूं—नदतारा के आचरण को क्या आप वास्तव में अनुचित नहीं समझतीं ?

सुमित्रा ने कहा, "कम से कम मैं नहीं समझती। क्योंकि देश से बढ़ कर मेरे लिए दूसरी कोई वस्तु नहीं है।"

अपूर्व श्रद्धा भरे स्वर में बोला, "देश को मैं हृदय से प्यार करता हूं। और देश की सेवा करने का अधिकार स्त्री-पुरुष को समान है। लेकिन इनके कर्म क्षेत्र भी तो एक नहीं हैं। पुरुष बाहर काम करेंगे तो स्त्री तो घर में पति-पुत्र की सेवा करके ही सार्थक होगी। उसके सत्य कल्याण से देश का जितना बड़ा काम होगा, पुरुषों के साथ घर से निकलकर खड़ी होने से उतना न हो सकेगा।"

सुमित्रा हंस पड़ी।

अपूर्व ने देखा, सभी ने उसकी ओर देखकर होंठ भींचकर हंसी छिपा ली।

सुमित्रा ने कहा, "अपूर्व बाबू, यह बात बहुत पुरानी हो चुकी है। और कोई बात बहुत लोगों के वर्षों से कहने के कारण सच नहीं बन जाती। यह छल है। जिन लोगों ने कभी देश का काम नहीं किया यह उनकी बात है। आप स्वयं जब काम में लग जाएंगे, तभी इस सत्य को समझ सकेंगे कि जिसे आप नारी का बाहर आना कह रहे हैं, वह जब होगा, तभी देश का काम होगा। नहीं तो पुरुषों की भीड़ में सूखी बालू

की भांति सब झर पड़ेगा। टिक नहीं पायेगा।"

अपूर्व लज्जित सा होकर बोला, "लेकिन क्या इससे चरित्र कलुषित होने का भय नहीं होगा ?"

सुमित्रा बोली, "क्या घरों में रहकर भय कम रहता है ? यह दोष बाहर आने का नहीं, विधाता का है। जिसने नारी का निर्माण किया। उसमें अनुराग और आकर्षण दिया। जरा सहानुभूति पूर्वक संसार के अन्य देशों की ओर ध्यान से देखिए तो।"

इस बात से अपूर्व को प्रसन्नता नहीं हुई। तीखे स्वर में बोला, "अन्य देशों की बात अन्य देश ही सोचें। अपने देश की ही चिन्ता कर सकूं, यही बहुत है। क्षमा कीजिएगा, एक बात पर ध्यान दिए बिना मैं नहीं रह सकता। शायद विवाहित जीवन के प्रति आपकी आस्था नहीं। यहां तक कि सतीत्व और पतिव्रत धर्म का भी आप की नजरों में कोई मूल्य नहीं है। इसीसे क्या देश का कल्याण होगा ?"

सुमित्रा ने मीठे स्वर में कहा, "अपूर्वबाबू आप क्रोध में आकर विचार कर रहे हैं। नहीं तो मेरा भाव यह नहीं है। लेकिन आपने आदि से अन्त तक गलत ही समझा है, यह बात भी नहीं है। जिस समाज में केवल पुरुष द्वारा ही पत्नी ग्रहण करने का विधान है, नारी होकर मैं उसे श्रद्धा नहीं कर सकती। आप सतीत्व के गौरव की बड़ाई कर रहे हैं। लेकिन जिस देश में ऐसी ही विवाह व्यवस्था है, उसके देश में यह वस्तु बहुत बड़ी नहीं होती। सतीत्व केवल देह में निहित नहीं है, मन में होना जरूरी है। तन और मन—दोनों से प्यार न कर सकने पर तो उसे ऊंचे स्तर पर पहुंचाया नहीं जा सकता। क्या आप वास्तव में ऐसा ही समझते हैं कि मन्त्र पढ़कर विवाह कर देने से ही कोई स्त्री किसी भी पुरुष को प्यार कर सकती है ?"

अपूर्व बोला, "लेकिन युगयुगों से ऐसा ही चल रहा है।"

सुमित्रा हंसकर बोली, "अवश्य चल रहा है। पत्र में प्राणाधिकार पति कह कर सम्बोधित करने में भी तो कोई रुकावट नहीं होती। वास्तव में घर-गृहस्थी के काम में इससे अधिक भी उसे जरूरत नहीं पड़ती। आपने तो यह कथा पढ़ी होगी—किसी मुनि के लड़के दूध के स्थान पर चावल का धोवन पीकर ही सुख से जीवन बिताते थे। लेकिन सुख जैसा भी क्यों न हो। जो नहीं है उसे वही कहकर तो गर्व नहीं किया जा सकता।"

यह आलोचना अपूर्व को बड़ी कटु लगी। लेकिन उत्तर न देकर बोला, "क्या आप यह कहना चाहती हैं कि इससे अधिक किसी के भाग्य में कुछ नहीं होता ?"

सुमित्रा बोली, "नहीं, क्योंकि संसार में भाग्य नाम का एक भी शब्द नहीं है।"

अपूर्व बोला, "भाग्य ! लेकिन अगर आपकी बात सच भी हो तो भी मैं कहता हूं कि आने वाली पीढ़ियों के कल्याण के लिए हम लोगों की यह व्यवस्था उचित है।"

सुमित्रा बोली, "नहीं अपूर्व बाबू, किसी का इससे कल्याण नहीं होगा। समाज और वंश के नाम पर किसी समय व्यक्ति की बलि चढ़ाई जाती थी लेकिन उसका फल अच्छा नहीं हुआ। आज वह चेतना ठीक है। प्रेम और प्यार का सबसे अधिक प्रयोजन अगर भावी वंशजों के लिए न रहता तो ऐसे भयंकर स्नेह की व्यवस्था उसके बीच में स्थान न पाती। इस अर्थहीन विवाहित जीवन का मोह नारी को त्यागना ही पड़ेगा। उसे समझना ही होगा कि इसमें उसकी लज्जा ही है, गौरव नहीं।"

अपूर्व बोला, "लेकिन विचार कर देखिए—आप लोगों की इन सब शिक्षाओं से हम लोगों के सुगठित समाज में अशान्ति और विप्लव ही बढ़ेगा।"

सुमित्रा बोली, "भले ही बढ़े। अशान्ति और विप्लव का अर्थ विनाश नहीं होता अपूर्व बाबू। जो रुग्ण, जीर्ण और ग्रस्त है केवल वही सतर्कता से स्वयं को अलग रखना चाहता है। जिससे किसी भी ओर से उसके शरीर में धक्का न लगे। अगर समाज की ऐसी दशा हो गई हो तो एक प्रकार से सब कुछ समाप्त हो जाए तो क्या हानि है?"

अपूर्व ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। पलभर मौन रहकर सुमित्रा बोली "ऋषि पुत्र की उपमा देकर लगता है मैंने आपके मन को चोट पहुंचाई है। लेकिन जो चोट लगने ही वाली थी उससे मैं आपको बचा भी कैसे सकती थी?"

अन्तिम बात को समझते हुए अपूर्व बोला, "जगन्नाथजी के मार्ग में खड़े होकर ईसाई मिशनरी लोग यात्रियों को बहुत सताते हैं। इस पर भी उस लूले मास्टर जी को छोड़कर कोई ईसा प्रभु को नहीं पूजता। लूले से ही उन लोगों का काम चल जाता है। यही आश्चर्य की बात है।"

"संसार में आश्चर्य हैं। इसीलिए तो मनुष्य का बचना असम्भव नहीं हो जाता अपूर्व बाबू। पेड़ की पत्ती का रंग सभी हरा नहीं देखते। इसे वे जानती भी नहीं। फिर भी लोग उसे हरा ही कहते हैं। क्या यह कम आश्चर्य की बात है? सतीत्व का मूल्य जान लेने से क्या—?"

जो व्यक्ति इतनी देर से चुपचाप बैठा लिख रहा था, उठ खड़ा हुआ। अन्य लोग भी उठ खड़े हुए।

अपूर्व ने देखा—गिरीश महापात्र।

भारती ने उसके कान में कहा, "ये ही हमारे डॉक्टर साहब हैं। उठ कर खड़े हो जाइए।"

मशीन के पुर्जों की तरह अपूर्व उठकर खड़ा हो गया। लेकिन क्रोधित मनोहर की अन्तिम बातें याद आते ही उसके शरीर का रक्त जैसे ठंडा पड़ने लगा।

गिरीश ने उसके पास आकर कहा, "सम्भवतः मुझे आप भूले नहीं होंगे। ये सभी लोग मुझे डॉक्टर कहते हैं" कह कर वह हंस पड़े।

अपूर्व हंस न सका। लेकिन धीरे धीरे बोला "मेरे चाचाजी के रजिस्टर में आपका कोई भयानक नाम लिखा हुआ है।"

गिरिश ने एकाएक उसके दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर धीरे से कहा, 'सव्यसाची ही न ?" फिर हंसते हुए बोले, "लेकिन अब रात हो गई है अपूर्व बाबू !" चलिए आपको कुछ दूर तक पहुंचा आऊं। रास्ता कोई बहुत अच्छा नहीं है। पठान मजदूर जब शराब पी लेते हैं तब उन्हें बिल्कुल सुधबुध नहीं रहती। चलिए," यह कहकर एक तरह से जबर्दस्ती ही उसे कमरे से बाहर ले गया।

उसे सुमित्रा को नमस्कार करने का भी अवसर नहीं मिला। न भारती से ही कोई बात कह सका। लेकिन जिस बात से उसके हृदय को धक्का लगा वह था उसके चाचा का रजिस्टर। जिसमें उस विद्रोही का नाम लिखा था।

ग्यारह

थोड़ी दूर चलकर अपूर्व ने सौजन्यतापूर्वक कहा, "आपका शरीर इतना अस्वस्थ और दुर्बल है कि इस हालत में और आगे चलने की जरूरत नहीं है। यही रास्ता तो सीधे जाकर बड़े रास्ते से मिल गया है। मैं चला जाऊंगा।"

तनिक मुस्करा कर डॉक्टर ने कहा, "जाने से ही क्या चला जाया जा सकता है अपूर्व बाबू ! सांझ को यह रास्ता सीधा था। लेकिन रात को पठान-हब्शी इसे टेढ़ा बना देते हैं। चले चलिए।"

"ये लोग क्या करते हैं मारपीट ?"

डॉक्टर बोले, "अपनी शराब का खर्च दूसरे के कन्धे पर लादने के लिए वे लोग ऐसा करते हैं। जैसे आपकी यह सोने की घड़ी है। इसके दूसरी की जेब में जाते समय आपत्ति उठने की सम्भावना है। ठीक है न ?"

अपूर्व घबरा कर बोला, "लेकिन यह तो मेरे पिताजी की है।"

डॉक्टर बोले, "लेकिन यह बात तो वे लोग समझना ही नहीं चाहते। लेकिन आज उन्हें समझना ही होगा।"

"यानी ?"

"यानी, आज इसके बदले किसी को शराब पीने की सुविधा न मिल सकेगी।"

अपूर्व ने शंकित स्वर में कहा, "न हो चलिए। किसी दूसरे रास्ते से घूमकर चला जाए।"

डॉक्टर खिलखिलाकर हंस पड़े। उनकी हंसी स्त्रियों की तरह स्निग्ध कौतुक भरी थी। बोले, "घूमकर ? इस आधी रात को ? नहीं-नहीं, इसकी जरूरत नहीं है। चलिए।" यह कहकर उस जीर्ण हाथ से अपूर्व का दायां हाथ थाम लिया। दबाव पड़ते ही अपूर्व के वर्षों के जिमनास्टिक और क्रिकेट-हाकी खेलने से पुष्ट हाथ की हड्डियां भरभरा उठीं।

अपूर्व बोला, "चलिए, समझ गया। चाचाजी ने उस दिन आपकी बात चलने पर कहा था कि हम लोगों के गुप्त रजिस्टरों में लिखा है कि कृपा करने पर वे पांच-सात-दस पुलिस वालों की जीवन लीला केवल थप्पड़ मार कर समाप्त कर सकते हैं। चाचाजी की उस मुख भंगिमा पर हम लोग खूब हंसते रहे थे। लेकिन अब सोच रहा हूं, कि हंसना उचित नहीं था। आप सम्भवतः ऐसा कभी कर सकते हैं।"

डॉक्टर के चेहरे के भाव बदल गए। बोले, "चाचाजी की यह तो अतिशयोक्ति थी।"

सूनी गली को पार करके वे बड़ी सड़क के पास पहुंचे तो अपूर्व बोला, "अब लगता है कि मैं बेखटके जा सकूंगा। धन्यवाद।"

डॉक्टर ने रास्ते पर दूर तक नजर डालकर धीरे से कहा, "जा सकेंगे —शायद—"

नमस्कार करके विदा होते समय अपूर्व अपने आन्तरिक कौतूहल को किसी भी प्रकार रोक नहीं सका। बोला, "अच्छा सव्य—।"

"नहीं, नहीं, सव्य नहीं—डॉक्टर कहो।"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "अच्छा डॉक्टर साहब, हमारा यह सौभाग्य है कि रास्ते में कोई मिला नहीं। लेकिन मान लीजिए अगर

उनके दल में अधिक संख्या में लोग होते, तो भी क्या हम लोग संकट मुक्त थे।"

डॉक्टर बोले, "उनके दल में दस-पांच आदमी ही तो रहते हैं।"

"दस हों या पांच, हमें भय नहीं था ?"

डॉक्टर मुस्करा कर बोले, "नहीं।"

मोड़ पर पहुंच कर अपूर्व ने पूछा, "अच्छा, क्या सचमुच ही आपकी पिस्तौल का निशाना कभी खाली नहीं जाता ?"

डॉक्टर हंसते हुए बोले, "नहीं, लेकिन क्यों, बताइए तो ? मेरे पास तो पिस्तौल है नहीं।"

अपूर्व बोला, "बिना लिए ही निकल पड़े ? आश्चर्य है। अच्छा डॉक्टर साहब, मेरा डेरा यहां से लगभग एक कोस होगा या नहीं ?"

"अवश्य होगा।"

"अच्छा नमस्कार। मैंने आपको बहुत कष्ट दिया।" वह फिर बोला, अच्छा यह भी हो सकता है कि वे लोग आज किसी दूसरे रास्ते पर खड़े हों।"

डॉक्टर बोले, "कोई आश्चर्य तो है नहीं।"

"नहीं भी है। है भी। अच्छा नमस्कार। लेकिन मजा तो देखिए, जहां वास्तव में आवश्यकता है वहां पुलिस की परछाइं तक नहीं। यही है उन लोगों का कर्तव्य बोध। क्या हम लोग इसलिए भर-भर कर टैक्स देते हैं ? सब बन्द कर देना चाहिए—क्या कहते हैं आप ?"

"इसमें सन्देह नहीं," कहकर डॉक्टर साहब हंस पड़े, बोले, "चलिए बात-चीत करते-करते आपको कुछ दूर और पहुंचा दूं।"

अपूर्व लज्जा भरे स्वर में बोला, "मैं बहुत डरपोक आदमी हूं डॉक्टर साहब। मुझ में तनिक भी साहस नहीं है। दूसरा कोई होता तो इतनी रात आपको कष्ट न देता।"

उसकी ऐसी विनम्र, अभिमान रहित सच्ची बात सुनकर डॉक्टर साहब अपनी हंसी के लिए स्वयं ही लज्जित हो गए। स्नेह से उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोले, "साथ चलने के लिए ही तो मैं आया हूं अपूर्व बाबू। नहीं तो प्रेसीडेन्ट मेरे हाथ में इस चीज को नहीं सौंपती" यह कहकर उन्होंने बांए हाथ की काली मोटी लाठी दिखा दी।

"क्या वे आपको आदेश दे सकती हैं ?"

डॉक्टर हंस कर बोले, "अवश्य दे सकती हैं।"

"लेकिन किसी दूसरे को भी तो मेरे साथ भेज सकती थीं।"

"इसका अर्थ होता सबको दल बनाकर भेजना। उससे तो यही

व्यवस्था ठीक हुई अपूर्व बाबू।" डॉक्टर ने कहा, "वह हमारे दल की प्रेसीडेण्ट हैं। उनको सब कुछ समझ बूझ कर काम करना पड़ता है। जहां छुरेबाजी होती है वहां हर किसी को नहीं भेजा जा सकता। अगर मैं न होता तो आज रात को रुकना पड़ता। वे आपको आने न देतीं।"

"लेकिन अब इसी रास्ते से आपको अकेले ही लौटना पड़ेगा।

डॉक्टर बोले, "पड़ेगा ही।"

अपूर्व और कुछ नहीं बोला। पन्द्रह मिनट और चलकर पहले पुलिस स्टेशन को दायीं ओर छोड़कर बस्ती में कदम रखते ही अपूर्व ने कहा, "डॉक्टर साहब, अब मेरा डेरा अधिक दूर नहीं है। आज रात यहीं ठहर जायें तो क्या हानि है।"

डॉक्टर हंसते हुए बोले, "हानि तो बहुत सी बातों में नहीं होती अपूर्व बाबू। लेकिन बेकार काम करने की हम लोगों को मनाही है। इस का कोई प्रयोजन नहीं है, इसलिए मुझे लौट जाना पड़ेगा।"

"क्या आप लोग बिना प्रयोजन कोई भी काम नहीं करते?"

"करने का निषेध है। अच्छा, अब मैं चलता हूं अपूर्व बाबू।"

एक बार मुड़कर पीछे के अंधेरे से भरे रास्ते को देखकर अपूर्व इस व्यक्ति के अकेले लौट जाने की कल्पना से सिहर उठा। बोला, "डॉक्टर साहब लोगों की मर्यादा की रक्षा करने की भी क्या आप लोगों को मनाही है?"

डॉक्टर ने आश्चर्य से पूछा, "अचानक यह प्रश्न क्यों?"

अपूर्व ने क्षुब्ध अभिमान के स्वर में कहा, "इसके अतिरिक्त और क्या कहूं, बताइए? मैं डरपोक आदमी हूं। दलबद्ध गुंडों के बीच से अकेला नहीं जा सकता। लेकिन मुझे निरापद पहुंचा कर उसी संकट के बीच से यदि आप अकेले लौटेंगे तो मैं मुंह दिखाने योग्य नहीं रहूंगा।"

बड़े स्नेह से उसके दोनों हाथ पकड़ कर डॉक्टर ने कहा, "अच्छा चलिए। आज रात आपके डेरे पर ही चलकर अतिथि बन कर रहूं। लेकिन यह सब बखेड़ा क्यों मोल ले रहे हो भाई।"

अपूर्व इस बात का ठीक अर्थ नहीं समझ सका। लेकिन दो-चार कदम आगे बढ़ते ही, हाथ में न जाने किस प्रकार का खिचाव अनुभव करके घूम कर बोला, "आपका जूता शायद काट रहा है डॉक्टर साहब। आप लंगड़ा रहे हैं।"

डॉक्टर ने हंसते हुए कहा, "यह कुछ नहीं है। लोगों के घरों के पास पहुंचते ही मेरे पैर अपने आप लंगड़ाने लगते हैं। गिरीश महापात्र का चलना याद है न?"

अपूर्व बोला, "आपको चलना नहीं पड़ेगा डॉक्टर साहब।"

डॉक्टर मुस्करा कर बोले, "लेकिन आपकी मर्यादा।"

"आपसे मर्यादा की क्या बात है। मैं तो आपकी चरण-धूलि के बराबर भी नहीं। आपके अतिरिक्त किसमें इतना साहस है?"

इस रास्ते से अकेले चलने में इस व्यक्ति के लिए क्या कठिनाई है पुलिस वाले जिसे सव्यसाची के नाम से जानते हैं उसकी राह दस-बारह गुंडे मिलकर भला कैसे रोक सकते हैं?"

डॉक्टर ने हंसी छिपाकर भले आदमी की तरह कहा, "इससे तो यही उचित होगा कि हम दोनों ही फिर एक साथ लौट चलें। मुझे अकेला देख कर अगर कोई आक्रमण करने का साहस करे भी तो आपके साथ रहने से इसकी सम्भावना नहीं रहेगी।"

अपूर्व बोला, "फिर लौट चलूं?"

"हानि ही क्या है? अकेले जाने में मुझे जो शक है, वह तो न रहेगी।"

"मैं ठहरूंगा कहां?"

"मेरे यहां।"

आफिस से लौटने पर अपूर्व को आज भोजन भी नहीं मिला था। बड़े ज़ोर की भूख लग रही थी। कुछ लज्जित होकर बोला, "देखिए अभी तक मैंने कुछ खाया भी नहीं है। आपके लिए—।"

डॉक्टर ने हंसते हुआ कहा, "चलिए न, आज भाग्य की परीक्षा करके देख ली जाए। लेकिन एक बात है, तिवारी को बहुत चिन्ता होगी।

तिवारी की चर्चा होते ही अपूर्व के मन में अचानक एक हिंस्र प्रतिशोध की भावना जाग उठी। क्रुद्ध होकर बोला, "मर जाए सोचते-सोचते। चलिए। लौट चलें।"

दोनों फिर सुनसान रास्ते से लौट पड़े।

लेकिन इस बार उसे डर की बातें याद ही नहीं आईं। पुलिस स्टेशन पार करके अचानक पूछ बैठा, 'डॉक्टर साहब, आप एनार्किस्ट हैं?"

"आपके चाचाजी क्या कहते हैं?"

"उनका कहना है कि आप एक भयानक एनार्किस्ट हैं।"

"मैं सव्यसाची हूं इस सम्बन्ध में आपको सन्देह नहीं?"

"नहीं।"

"एनार्किस्ट से आप क्या अर्थ लगाते हैं?"

"राजद्रोही—अर्थात् जो राजा का शत्रु हो।"

डॉक्टर बोले, "हमारे राजा विलायत में रहते हैं। लोग कहते हैं बहुत

ही भले आदमी हैं। मैंने अपनी आंखों से उन्हें कभी नहीं देखा। उन्होंने भी मेरी कभी कोई हानि नहीं की। फिर उनके प्रति शत्रुता का भाव मेरे मन में क्यों होगा ?"

अपूर्व बोला, "जिन लोगों के मन में आता है उनमें भी वह किस प्रकार आता है, बताइए तो ? उनका भी तो उन्होंने कभी अनिष्ट नहीं किया।"

डॉक्टर बोले, "इसीलिए तो आप जो कुछ कह रहे हैं सत्य नहीं है।"

इसे अस्वीकार करने से अपूर्व चौंक पड़ा। अविश्वास करने का उसमें साहस नहीं था। कुछ सोचकर बोला, "राजा भले ही न हो, राज कर्मचारियों के विरुद्ध जो षडयंत्र है वह तो असत्य नहीं है डाक्टर साहब।"

कर्मचारी राजा के नौकर हैं, वेतन पाते हैं, और आज्ञा पालन करते हैं। एक जाता है तो दूसरा आ जाता है। लेकिन इस सहज को जटिल और विराट को सूक्ष्म करके जब देखने की चेष्टा करता है तभी व्यक्ति सबसे बड़ी भूल करता है। इसलिए उन लोगों पर आघात करने को एक शक्ति के मूल में आघात करना कहकर कुछ लोग आत्मवंचना करते हैं, इतनी बड़ी सांघातिक व्यर्थता दूसरी नहीं है।"

अपूर्व बोला, "लेकिन यह व्यर्थ काम करने वाले लोग क्या भारत में नहीं हैं ?"

"हो सकते हैं।"

"अच्छा डाक्टर साहब, ये लोग कहां रहते हैं और क्या करते हैं ?" अपूर्व ने पूछा।

उसकी उत्सुकता और व्यग्रता देखकर डाक्टर केवल मुस्करा दिए।

अपूर्व बोला, "हंस क्यों दिए ?"

डाक्टर बोले, "आपके चाचा होते तो समझ जाते। आपको विश्वास है कि मैं एनार्किस्टों का नेता हूं। मेरे ही मुंह से उत्तर की आशा करना क्या उचित होगा अपूर्व बाबू ?"

अपनी बुद्धिहीनता पर अपूर्व अप्रतिम होकर बोला, "आशा करना पूरी तरह अनुचित हो जाता अगर आप मुझे आज अपने दल में भर्ती न कर लेते। सदस्यों को इतनी बात जान लेने का अधिकार है। इससे शायद आप इनकार नहीं कर सकेंगे।"

"अधिकार है," कहकर डाक्टर हंस पड़े, "विद्रोही दल के खाते में जिसका नाम लिखा गया है उसके प्रश्न का यही उत्तर है। इससे अधिक जानने की उसे जरूरत नहीं है।"

अपूर्व तीखे स्वर में बोला, "दल के खाते में झटपट नाम लिख लेने से

ही तो कुछ नहीं होता। उसका फलाफल भी तो समझाना पड़ता है।"

"लेकिन उन लोगों ने क्या ऐसा नहीं किया है?"

"कुछ भी नहीं। 'पथ का दावेदार,' 'दावे का इतना ठाट-बाट है, यह कौन जानता था। और आप भी थे। नाम लिखने के पहले आपको भी तो जान लेना उचित था कि मेरा वास्तविक उद्देश्य क्या हैं?"

डाक्टर तनिक लज्जित होकर बोले, "महिलाओं ने ही यह सब आयोजन किया है। वे ही जानती हैं किसे सदस्य बनाएं, किसे नहीं। वास्तव में इन लोगों की सभा की कोई विशेष बात नहीं जानता अपूर्व बाबू।"

अपूर्व समझ गया कि यह भी परिहास ही है। उत्कंठा और आशंका से क्रुद्ध होकर बोला, "छिपा क्यों रहे हैं डाक्टर साहब। सुमित्रा को ही अध्यक्ष बनाइए और जिसे जो चाहे बना दीजिए। यह दल आपका है और आप ही इसके सब कुछ है। इसमें सन्देह नहीं। पुलिस की आंखों में आप धूल झोंक सकेंगे, लेकिन मेरी आंखों को धोखा नहीं दे सकते, यह समझ लीजिए।"

डाक्टर ने आंखें फाड़कर कहा, "मेरे दल का अर्थ एनार्किस्टों का दल ही तो है। आप व्यर्थ ही शंकित हो उठे हैं अपूर्व बाबू। आदि से अन्त तक आपने गलत समझा है। ये लोग जीवन-मरण के खेल में शामिल हैं। वे लोग आपके जैसे कायर आदमी को अपने दल में क्यों शामिल करेंगे? वे क्या पागल हैं?"

अपूर्व लज्जा से लाल हो उठा। लेकिन उसकी छाती पर का भारी बोझ हट गया।

डाक्टर ने कहा, 'पथ के दावेदार' नाम रखकर सुमित्रा ने इस दल की स्थापना की है। जीवन यात्रा में, पथ पर चलने का मनुष्य को कितना बड़ा अधिकार है, संस्था के सदस्य अपना पूरा जीवन लगाकर यही बात हर मनुष्य को बता देना चाहते हैं। सुमित्रा के अनुरोध पर जितने दिन यहां रहूंगा इस दल को सुसंगठित करने का प्रयत्न करूंगा। इसके अतिरिक्त मेरा कुछ सम्बन्ध नहीं। ये हैं समाज-सुधारक। लेकिन समाज-सुधार के लिए घूमने को न तो मेरे पास समय है न धैर्य। हो सकता है कुछ दिन यहां रहूं। हो सकता है कल ही चलता बनूं। फिर जीवन भर भेंट न हो। मेरे जीने या मरने का समाचार भी सम्भव है आप तक न पहुंचे।"

ये वचन शान्त और धीमे थे। उच्छवास का आवेग उनमें नहीं था। सव्यसाची का जो विवरण उसने चाचाजी से सुना था वह अपूर्व को याद आ गया। लेकिन तभी याद आया—वह तो पत्थर है उसके लिए पीड़ा का अनुभव कैसा?

उसने पूछा, "सुमित्रा कौन है ? आपसे कैसे परिचय हुआ ?"

डाक्टर थोड़ा हंस दिए। उत्तर न मिलने पर अपूर्व स्वयं समझ गया कि पूछना ठीक नहीं हुआ ?

कुछ पल मौन रहकर डाक्टर बोले, "आपकी कृपा से आज रास्ता निर्विघ्न है। लेकिन अक्सर होता नहीं। लेकिन आप क्या सोच रहे हैं, सुनूं तो ?"

अपूर्व बोला, "सोचता तो बहुत कुछ हूं। लेकिन उसे छोड़िए। अच्छा, आपने कहा, 'मनुष्य का पथ पर निर्विघ्न चलने का अधिकार।' जिस प्रकार आज हम लोग पथ पर निर्विघ्न चल रहे हैं—ऐसा ही न ?"

डाक्टर हंसकर बोले, "हां, कुछ-कुछ ऐसा ही।"

अपूर्व ने कहा, "जो स्त्री पति को छोड़कर पथ के दावेदारों की सदस्य बनने आई है, वह भी मैं अच्छी तरह नहीं समझ सका।"

"मैं भी ठीक प्रकार से समझ गया हूं—कह नहीं सकता। उन सब बातों को सुमित्रा ही अच्छी तरह जानती है ?"

अपूर्व ने पूछा, "उसके पति शायद नहीं हैं ?"

डाक्टर चुप हो रहे। अपूर्व को लज्जा से फिर याद आया कि वे कोई उत्तर नहीं देंगे। डाक्टर के मुंह की ओर देखकर उसे लगा मानो इस आश्चर्यमय व्यक्ति के अशान्त जीवन के एक गोपनीय भाग को उसने अचानक देख लिया है। लेकिन अब तक वह जो कुछ जान सका है, वह उसका अतीत है, उसने स्पष्ट देखा उस भीषण रूप से सतर्क व्यक्ति की आंखों पर एक धुंधला-सा जाला छा गया था।

अपूर्व ने और कुछ नहीं पूछा। चुपचाप चलने लगा।

अचानक डाक्टर ने हंसकर पूछा, "देखिए अपूर्व बाबू, आपसे मैं सच कहता हूं। स्त्रियों की ये प्रणय जनित मान-अभिमान की बातें—मैं कुछ नहीं समझता। इनमें बेकार ही समय नष्ट होता है। इतना समय मेरे पास कहां है !"

अपूर्व के प्रश्न का यह उत्तर नहीं था। वह चुप ही रहा।

डाक्टर बोले, "चुप क्यों हो ? बातचीत क्यों नहीं करते ?"

"क्या कहूं, बताइए।"

डाक्टर बोले, "देखिए अपूर्व बाबू, भारती बहुत अच्छी लड़की है। जैसी बुद्धिमती है वैसी ही कर्मठ और शिष्ट भी।"

यह बात भी बेकार थी। लेकिन अपूर्व ने यह भी नहीं पूछा कि आप उससे कितने दिनों से परिचित हैं और किस प्रकार ? वह बोला, "हां।" लेकिन डाक्टर शायद अपनी अन्तिम बात का ही सूत्र पकड़कर बोले,

"आपके विषय में उन्होंने बताया था कि आप भयंकर हिन्दू हैं—एकदम कट्टर। भारती ने कहा था कि उसने इतने कट्टर हिन्दू की भी जात बिगाड़ दी।"

अपूर्व बोला, "हो सकता है।"

उसकी तर्क करने की इच्छा नहीं थी। रास्ता भी लगभग समाप्त हो चला था। गली के मोड़ पर डाक्टर ने जैसे अपने सुस्त मन को एकाएक झकझोर कर जगा दिया। बोले, "अपूर्व बाबू?"

स्वर की तेजी से सचेत होकर अपूर्व ने सतर्क होकर कहा, "कहिए।"

डाक्टर बोले, "मेरे यहां रहने की कोई आवश्यकता नहीं। मेरे चले जाने पर आप संकोच छोड़कर सुमित्रा की सहायता कीजिएगा। ऐसी स्त्री आप सारे संसार में भी न पा सकेंगे। इनका 'पथ का दावेदार' कहीं निरादर तथा अवहेलना से मर न जाए।"

"तो फिर आप छोड़कर क्यों जा रहे हैं?"

"यहां से चले जाना ही मंगलमय है। मेरी सहायता की आप लोगों को जरूरत नहीं। सब लोग मिलकर इसे संगठित कीजिए। इसी के द्वारा देश का सबसे बड़ा कल्याण होगा।"

"नवतारा की घटना पर तो मैं विश्वास नहीं कर सकता डाक्टर साहब।"

"लेकिन सुमित्रा पर तो करेंगे? विश्वास के लिए इतना ऊंचा स्थान और कहीं नहीं मिलेगा अपूर्व बाबू। मैंने पहले ही बता दिया है कि स्त्रियों की बातें मैं बिल्कुल समझ नहीं सकता। लेकिन जब सुमित्रा कहती है कि विघ्न-बाधा हीन स्वतन्त्र जीवन यात्रा का मानव को अधिकार है तब इस दावे की किसी भी युक्ति से अवहेलना नहीं की जा सकती। केवल मनोहर के ही नहीं अनेक लोगों के निर्दिष्ट मार्ग से चलने से नवतारा का जीवन निर्विघ्न हो जाता यह मैं जानता हूं। और जिस पथ को उसने स्वयं चुना है वह भी निरापद नहीं है। लेकिन स्वयं विपत्ति में डूबे रहकर मैं भी भला किस बूते पर उस पर विचार करूं, बताइए तो? सुमित्रा कहती है, इस जीवन को निर्विघ्न बिता पाना ही क्या मनुष्य का चरम कल्याण है? मनुष्य के विचार और प्रवृत्ति ही उसके कर्त्तव्य को निर्धारित करते हैं। लेकिन दूसरों के द्वारा निर्धारित विचारों और प्रवृत्ति के द्वारा जब वह अपने स्वाधीन विचारों का मुंह बन्द कर देता है तब उससे बढ़कर आत्महत्या तो मनुष्य के लिए कुछ हो ही नहीं सकती। इस बात का कोई भी उत्तर मैं खोजने पर भी नहीं पा सकता हूं अपूर्व बाबू।"

"लेकिन यदि सभी अपने ही विचारों के अनुसार—?"

डाक्टर ने बीच में ही रोक कर कहा, "अर्थात् अगर सभी अपने ही विचारों के अनुसार काम करना चाहें? उस दशा में कैसा कांड होगा—यह बात आप एक बार सुमित्रा से पूछकर देखिए।"

अपने प्रश्न की त्रुटि समझकर अपूर्व उसे सुधारना चाहता था लेकिन समय नहीं मिला। डाक्टर ने रोककर कहा, "लेकिन अब कोई तर्क नहीं चलेगा अपूर्वबाबू। हम लोग अब पहुंच गए। इस विषय में फिर कभी बात की जायगी।"

अपूर्व ने देखा, वही लाल रंग का विद्यालय—उसके दो तल्ले के भारती के कमरे में उस समय भी रोशनी दिखाई दे रही थी।

डाक्टर ने पुकारा, "भारती?"

खिड़की से झांककर भारती ने व्याकुल स्वर में पूछा, "विजय से आपकी भेंट हुई डाक्टर साहब? वह आपको बुलाने गया है।"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "तुम लोगों की प्रेसीडेन्ट का आदेश ही तो है। लेकिन कोई भी आदेश इतनी रात गए किसी को भी उस रास्ते से भेज नहीं सकेगा। देख रही हो किसी को साथ लौटा लाया हूं।"

भारती ने ध्यान से देखकर अंधेरे में भी पहचान लिया, बोली, "ठीक नहीं किया। लेकिन आप शीघ्र जाइए। नरहरि ने शराब पीकर अपनी हेम के सिर पर कुल्हाड़ी मार दी है। बचेगी या नहीं, इसमें सन्देह है। सुमित्रा दीदी वहीं गई हैं।"

डाक्टर बोले, "अच्छा ही तो किया है। मरती हो तो मर जाए। लेकिन मेरे अतिथि—?"

भारती बोली, "महिलाओं पर आपकी विशेष अनुकम्पा रहती है। लेकिन हेम के बजाय अगर नरहरि के साथ ऐसा हुआ होता तो आप अब तक दौड़े चले गए होते।"

"मान लो दौड़ा चला जा रहा हूं। लेकिन मेरे अतिथि—?"

भारती दीपक लिए नीचे आ गई और द्वार खोलकर बोली, "अब आप देर मत कीजिए डाक्टर साहब, जल्दी कीजिए।"

"लेकिन क्या इनको ईसाई का आतिथ्य स्वीकार होगा? इनको छोड़ कर कैसे जाऊं भारती? उसे तुम लोगों ने अस्पताल भेजने की व्यवस्था क्यों नहीं की?"

भारती नाराज होकर बोली, "जो कुछ करना हो कीजिए। आपके पैरों पड़ती हूं। देर न कीजिए। इनको मैं संभाल लूंगी। मुझे अभ्यास है। कृपया आप फौरन चले जाइए।"

अपूर्व कुछ कहना ही चाहता था लेकिन उससे पहले ही डाक्टर तेजी से अंधेरे में विलीन हो गए।

बारह

सीढ़ियां चढ़कर अपूर्व भारती के कमरे में पहुंचा और अच्छी तरह देखकर एक आरामकुर्सी बिछाकर लेटकर गया।

कुछ देर बाद जब भारती ने ऊपर आकर तिपाई पर दीपक रखा तो अपूर्व को एकाएक लज्जा का अनुभव हुआ। यह कोई बात नहीं थी। इससे पहले भी उन दोनों ने एक कमरे में रात बिताई है, लेकिन आज यह लज्जा क्यों? वह मन-ही-मन इसका कारण खोजने लगा तो सहसा उसे तिवारी की याद आ गई। भारती ने उसे जगाने का प्रयास नहीं किया। लेकिन पुराने मकान के दरवाजे-खिड़कियां बन्द करने में जो खटपट की आवाज़ हुई यह वास्तविक नींद के लिए अत्यन्त विघ्नकारक थी। अपूर्व उठ बैठा। आंखें मलकर जंभाई लेते हुए बोला, "ओह, इतनी रात को फिर लौट आना पड़ा।"

"जाते समय यह बात बताकर क्यों नहीं गए? सरकारजी से कहकर आपके लिए भोजन मंगवाकर रख लेती?"

"लौट आने की बात क्या मैं जानता था?"

भारती ने सहज स्वर में कहा, "मुझसे ही भूल हुई। भोजन के बारे में उनसे उसी समय कह देना चाहिए था। इतनी रात गए यह बखेड़ा उठाने की नौबत न आती। इतनी देर तक आप लोग कहां बैठे रहे?"

"उन्हीं से पूछिए कि तीन कोस का मार्ग चलना, बैठकर समय बिताना कहलाता है या नहीं?"

भारती बोली, "गोरख धन्धे में पड़ गए थे, यही न। फिर चलना ही सार निकला," यह कहकर खड़े होने के बाद जरा हंसकर बोली, "सध्या आदि अब भी करते हैं या नहीं? कपड़ा दे रही हूं। इन कपड़ों को उतार दीजिए।" यह कहकर आंचल समेत चाबियों का गुच्छा हाथ में लेकर एक अलमारी खोलती हुई बोली, "बेचारा तिवारी घबरा जायेगा। लगता है आफिस से लौटने पर एक बार भी डेरे पर जाने का समय नहीं मिला।"

अपूर्व ने क्रोध को दबाते हुए कहा, "अवश्य ही आप ऐसी अनेक वस्तुएं देख लेती हैं, जिन्हें मैं नहीं देख पाता। स्वीकार करता हूं इसे। लेकिन कपड़ा निकालने की जरूरत नहीं है। सन्ध्या आदि का झंझट कहीं नहीं गया। इस जन्म में जाएगा—ऐसा भी समझ में नहीं आता। लेकिन आप के दिए कपड़े से इसके लिए सुविधा नहीं होगी। रहने दीजिए। कष्ट मत कीजिए।"

"पहले देखिए तो कि मैं क्या देती हूं।"

"मैं जानता हूं। टसर है या रेशम। लेकिन मुझे ज़रूरत नहीं। मत निकालिए।"

"सन्ध्या नहीं करेंगे ?"

"नहीं।"

"सोयेंगे क्या पहनकर ? कोट-पतलून पहनकर ?"

"हाँ।"

"खाना भी नहीं खाइएगा ?"

"नहीं।"

"सच ?"

अपूर्व ने बिगड़कर कहा, "आप क्या खेल कर रही हैं ?"

भारती उसके चेहरे की ओर देखकर बोली, "खेल तो आप ही कर रहे हैं, क्या आप में शक्ति है कि भोजन न करके, उपवास करके रह सकें ?"

यह कहकर उसने अलमारी खोली। टसर की एक सुन्दर साड़ी निकालकर बोली, "एकदम पवित्र है। मैंने इसे कभी पहना नहीं है। उस छोटे कमरे में जाकर कपड़े बदल आइए। नीचे नल है। हाथ मुंह धोकर सन्ध्या पूजा कर लीजिए।

अचानक उसकी बातचीत का ढंग ऐसा बदल गया कि अपूर्व अवाक रह गया। धीरे से बोला, "लाइए कपड़ा। मैं नीचे जाऊं। लेकिन मैं किसी के हाथ का भात न खा सकूंगा। यह कहे देता हूं।"

भारती कोमल होकर बोली, "सरकारजी अच्छे ब्राह्मण हैं। आचार-हीन नहीं हैं। स्वयं रसोई बनाते हैं। सब खाते हैं उनके हाथ का। कोई भी आपत्ति नहीं करता। डाक्टर साहब का खाना भी उन्हीं के यहां से आता है।"

अपूर्व का सन्देह तब भी दूर नहीं हुआ। उदास मन से बोला, "जिस तिसके हाथ की वस्तु से मुझे घृणा होती है।"

भारती हंसकर बोली, "जिस तिसके हाथ की वस्तु खाने के लिए क्या

मैं आपको दे सकती हूं ? मैं उन्हीं से मंगवाऊंगी। तब तो आपको कोई आपत्ति नहीं होगी ?"—यह कहकर वह हंस पड़ी।

अपूर्व नीचे चला गया। लेकिन उसके चेहरे का भाव देखकर भारती को यह समझने में देर नहीं लगी कि होटल का खाना खाने में उसे बहुत संकोच हो रहा है।

अपूर्व रेशमी साड़ी लपेटकर काठ की बेंच पर बैठा सन्ध्या कर रहा था। भारती बाहर जाती हुई बोली, "सरकारजी को लेकर लौटने में मुझे देर नहीं लगेगी। तब तक आप नीचे ही रहिएगा।"

भारती को लौटने में देर हुई भी नहीं। अपूर्व सन्ध्या-पूजा कर चुका था। भारती के साथ सरकारजी थे। उनके हाथ में भोजन का थाल था। धरती पर जल छिड़ककर फिर चौका ठीक करके थाल रख दिया।

उसके जाने पर भारती ने हाथ जोड़कर कहा, "यह मलेच्छ का अन्न नहीं है। सब खर्च डाक्टर साहब ने किया है। आप संकोच छोड़कर भोजन कीजिए।"

अपूर्व इस परिहास को प्रसन्नता से सहन न कर सका। वह किसी का छुआ अन्न नहीं खाता। होटल के भोजन में उसकी रुचि नहीं है। लेकिन व्यय किसी मलेच्छ ने किया या ब्राह्मण ने इसके लिए बेकार का कट्टरपन उसमें नहीं है। उसके बड़े भाइयों ने उसकी शुद्धचारिणी मां को अनेक दुख दिए हैं। भली हो, या बुरी हो उसे माता की आज्ञा का उल्लंघन करने में अत्यन्त पीड़ा होती है। भारती यह नहीं जानती—ऐसी बात नहीं है। फिर भी इस व्यंग्य से उसका मन दुखी हो उठा। लेकिन कोई उत्तर न देकर वह आसन पर आ बैठा और भोजन करने लगा।

भारती कुछ दूर धरती पर बैठी रही। सहसा वह मन-ही-मन कुंठित हो उठा। ईसाई होने के कारण वह होटल के रसोईघर में नहीं गई थी। इतनी रात गए, सबका खाना-पीना हो चुकने के बाद जो कुछ बचा था सरकारजी उसी को उठा लाए थे। उसे भारती ने देखा नहीं था।

कमरे में रोशनी पूरी न होते हुए भी उसे जो खाना दिखाई दिया उसे देखते ही वह स्तब्ध हो उठी। कितनी ही बार उसने अपने ऊपर वाले कमरे के फर्श के छेद से झांककर चोरी छिपे इस व्यक्ति को भोजन करते देखा था। तिवारी की छोटी-से-छोटी गलती से ही इस चिड़चिड़े आदमी का भोजन बर्बाद होते भारती ने अनेक बार देखा था। वही व्यक्ति आज चुपचाप जब उस न खाने योग्य भोजन को खाने लगा तो वह चुप न रह सकी। व्याकुल होकर बोल उठी—"रहने दीजिए, रहने दीजिए—इसे खाने की आवश्यकता नहीं, आप इसे नहीं खा सकेंगे।"

अपूर्व विस्मित होकर बोला, "खा न सकूंगा ? क्यों—?"

"नहीं, नहीं खा सकते।"

"नहीं, खा सकूंगा?" यह कहकर वह खाने ही जा रहा था कि भारती पास आकर बोली ? आप तो खा सकेंगे लेकिन मैं खिला नहीं सकूंगी, खाकर बीमार पड़ने पर इस देश में मुझे ही तो भरना पड़ेगा। उठिए।"

अपूर्व ने उठकर पूछा, "तो मैं क्या खाऊंगा ?" यह कहकर उसने भारती की ओर इस तरह देखा कि उसकी असह्य भूख की बात भारती से छिपी न रह सकी।

अपूर्व शान्त आज्ञाकारी बालक के समान हाथ धोकर ऊपर की मंजिल पर चला गया। कुछ देर बाद ही सरकार जी और उनके होटल के सहयोगी आ गए। एक आदमी के हाथ में फरुही की डाली और दूध की कटोरी थी दूसरे के हाथ में थोड़े से फल और जल का लोटा था। यह आयोजन देख वह मन ही मन प्रसन्न हो उठा। प्रसन्न होकर उसने खाने में मन लगाया। दरवाजे के बाहर सीढ़ी के पास खड़ी भारती देखती रही।

अपूर्व बोला, "कमरे में आ जाइए। काठ के फर्श का स्पर्श दोष मानने से बर्मा में नहीं रहा जा सकता।"

भारती हसकर बोली, "यह क्या कह रहे हैं ?आप तो बहुत उदार हो गए हैं।"

अपूर्व ने कहा, "वास्तव में इसमें कोई दोष नहीं है। डाक्टर साहब ने कहा, 'चलिए, लौट चलें,' मैं लौट आया। यहां शराबियों की वजह से खून खराबी हो गई है, यह कौन जानता था।"

"जानते तो क्या करते ?"

"मेरे लिए आपको इतना कष्ट उठाना पड़ेगा, यह जानता तो कभी न लौटता।"

भारती बोली, "सम्भव है। लेकिन मैंने तो सोचा था कि आप स्वयं अपनी इच्छा से लौट आए हैं।"

अपूर्व का चेहरा लाल पड़ गया। मुंह का ग्रास निगलकर बोला, "कभी नहीं, कभी नहीं। कल डाक्टर बाबू से पूछ कर देख लेना।"

"पूछताछ की क्या जरूरत है ? आप क्या झूठ बोलेंगे ?"

उत्तर सुनकर अपूर्व जल उठा। उसके लौटने पर भारती ने जो विचार प्रगट किया उसे याद करके बोला, "झूठ बोलना मेरा स्वभाव नहीं है। आप विश्वास नहीं कर सकतीं ?"

"मैं क्यों विश्वास करूंगी ?"

"मैं यह नहीं जानता। जिसका जैसा स्वभाव होता है—कहकर मुंह

नीचा करके भोजन करने लगा।

"आप बेकार ही नाराज हो रहे हैं। डाक्टर साहब के कहने से न आकर अपनी इच्छा से ही आ जाने में क्या दोष है ? वह जो आज स्वयं खोजते हुए मेरे पास आए उसमें भी क्या दोष था ?"

"सन्ध्या को हाल चाल जानने के लिए आना और आधी रात को लौट कर आना—दोनों में अन्तर है।"

भारती बोली, "नही है। इसीलिए तो मैंने आपसे पूछा था कि अगर बताकर गए होते तो खाने-पीने की इतनी परेशानी न होती। सब कुछ ठीक ठाक करके रखवा दिया होता।"

अपूर्व चुपचाप भोजन करने लगा। जब भोजन समाप्त हो आया तो अचानक मुंह ऊपर उठाकर देखा—भारती स्निग्ध होकर और कौतुक भरी नजरों से चुपचाप उसकी ओर देख रही है। बोली, "देखिए तो, खाने में कितना कष्ट हुआ।"

"आज आपको न जाने क्या हो गया है। सीधी-सी बात भी समझ नहीं पा रहीं।"

"और ऐसा भी तो हो सकता है कि बात सीधी-सादी न हो सकने के कारण समझ में न आ रही हो," कह कर भारती खिलखिला कर हंस पड़ी।

अपूर्व भी हंस पड़ा। उसे सन्देह हुआ कि इतनी देर से भारती शायद उसे झूठमूठ ही परेशान कर रही थी।

जल समाप्त हो गया था। खाली गिलास देख कर भारती व्यग्र हो उठी "यह जो—?"

"क्या और जल नहीं है ?"

"है तो," कहकर भारती क्रुद्ध होकर बोली, "इतना नशा करने से मनुष्य को याद नहीं रहता। पीने के पानी का लोटा शिबू नीचे के नल पर ही छोड़ गया। अब आप हाथ धोकर पी लीजिए। लेकिन क्रोध मत कीजिए, यह कहे देती हूं।"

अपूर्व ने हंसते हुए कहा, "इसमें क्रोध करने की क्या बात है ?"

"भोजन के समय पीने भर को जल न मिलने पर बड़ी अतृप्ति होती है। लगता है पेट नहीं भरा। लेकिन इसीलिए कुछ छोड़कर उठ जाने से भी तो काम नहीं चलता। अच्छा जाऊं, जल्दी से शिबू को बुला लाऊं।"

अपूर्व ने हंसते हुए कहा, "इस अंधेरे में बुलाने जायेंगी ?"

भोजन समाप्त हो चुका था। फिर भी जबर्दस्ती दो-चार कौर मुंह में ठूंस कर जब वह उठकर खड़ा हुआ तो उसे लज्जा महसूस होने लगी।

बोला, "मैं सच कह रहा हूं, मुझे किसी प्रकार की असुविधा नहीं हुई। मैं हाथ धोने के बाद पानी पी लूंगा।"

भारती हसकर बोली, "मैं रोशनी दिखाती हूं। आप नीचे चलकर मुंह धो लीजिए। जल का लोटा सामने ही रखा है। भूल न जाइएगा।

हाथ-मुंह धोकर अपूर्व जब ऊपर आया तो देखा कि उसकी जूठन हटाकर भारती ने जगह साफ कर दी है। एक ओर छोटी तिपाई पर तश्तरी में इलायची-सुपारी आदि रखी है। भारती के हाथ से तौलिया लेकर हाथ-मुंह पौंछकर, इलायची-सुपारी मुंह में डालकर वह आराम कुर्सी पर आ बैठा। बोला "ओह, इतनी देर के बाद शरीर में जैसे प्राण आ गए। कितनी जोर की भूख लगी थी।"

फिर दीपक के प्रकाश में भारती का चेहरा देखकर बोला, "देख रहा हूं आपको भी सर्दी लग रही है।"

"नहीं तो—कहां ?"

"नहीं क्यों ? गला भारी है, आंखें सूजी हुई हैं। ठण्ड बहुत है। अब तक इस ओर मेरा ध्यान नहीं गया था।"

भारती ने उत्तर नहीं दिया।

अपूर्व बोला, "ठण्ड का अपराध क्या है ? इतनी रात गए दौड़-धूप जो करनी पड़ी है।"

कुछ रुककर फिर बोला, "लौट कर मैंने आपको व्यर्थ ही कष्ट दिया लेकिन कौन जानता था कि डाक्टर साहब बुलाकर अन्त में आफत आपके गले मढ़ कर स्वयं खिसक जाएंगे। भुगतना तो आपको पड़ा।"

भारती बोली, "यही हुआ। लेकिन जब भगवान ने बोझा खींचने का काम सौंपा है तो फिर नालिश किससे करने जाऊं ?"

अपूर्व आश्चर्य से बोला, "इसका क्या अर्थ है ?"

भारती उसी तरह काम करते-करते बोली, "अर्थ मैं नहीं जानती। लेकिन देख रही हूं कि जबसे आपने बर्मा में पांव रखा है तब से मैं ही बोझ ढो रही हूं। पिताजी से झगड़ा आपने किया, दण्ड मैंने भोगा। घर पर पहरेदारी के लिए तिवारी को आपने छोड़ा, उसकी सेवा करते करते मर मिटी मैं। भय लग रहा है कि कहीं सारा जीवन आपका बोझ ही न ढोना पड़े।—रात हो गई, सोइएगा कहां ?"

"मैं क्या जानूं ?"

भारती बोली, "होटल में डाक्टर साहब के कमरे में आपके लिए बिस्तर ठीक करने को कह आई हूं। शायद व्यवस्था हो गई हो।"

"वहां मुझे कौन ले जाएगा ? मुझे तो पता नहीं।"

"मैं चलती हूं।"

"चलिए," कहकर अपूर्व उठ खड़ा हुआ। फिर कुछ संकोच के साथ बोला, "लेकिन तकिया और बिछौने चादर लेता जाऊंगा। दूसरे के बिछौने पर मैं सो नहीं पाऊंगा।"

यह कहकर बिछौना उठाने जा रहा था कि भारती ने रोक दिया। इतनी देर के बाद उसका गम्भीर चेहरा हंसी से खिल उठा। लेकिन उसे छिपाने के लिए मुंह फेर कर धीरे से बोली, "यह भी तो दूसरे का ही बिछौना है अपूर्व बाबू। इस पर बैठने में आपको घृणा का अनुभव न होता हो तो भारी आश्चर्य है। लेकिन अगर ऐसा ही हो तो आपको होटल में सोने की जरूरत ही क्या है। आप यहीं सोइए।"

"लेकिन आप कहां सोएंगी? आपको कष्ट होगा।"

भारती बोली, "नहीं," फिर उंगली से दिखाकर कहा, "उस छोटे कमरे में कुछ बिछाकर मैं अच्छी तरह सो सकूंगी। केवल काठ के फर्श पर हाथ को ही तकिया बनाकर तिवारी के पास कितनी ही रातें बितानी पड़ी थीं।"

एक महीने पहले की बात याद करके अपूर्व बोला, "एक रात मैंने भी देखा था।"

भारती ने हंसते हुए कहा, "यह बात आपको याद है? आज उसी तरह फिर देख लेना।"

"तब तो तिवारी बहुत बीमार था। लेकिन अब लोग क्या सोचेंगे?"

"सोचेंगे क्या? दूसरों के बारे में व्यर्थ ही कुछ सोचने का छोटा मन यहां किसी का नहीं है।"

"लेकिन नीचे की बेंच पर भी तो मैं सो सकता हूं?"

भारती बोली, "तब—जब मैं सोने दूं। इसकी आवश्यकता नहीं है। मैं आपके लिए अस्पृश्य हूं। इसलिए आपसे मुझे कोई हानि पहुंच सकती है, यह भय नहीं है।"

अपूर्व आवेग से बोला, "मुझसे आपका कभी अकल्याण हो सकता है, यह भय मुझे भी नहीं है। लेकिन किसी को अस्पृश्य कहने से मुझे सबसे अधिक पीड़ा होती है। अस्पृश्य शब्द से घृणा का भाव है। लेकिन आपसे तो घृणा नहीं करता। हम लोगों की जाति अलग है, इसलिए आपका छुआ मैं खा नहीं सकता। लेकिन इसका कारण क्या घृणा है? यह झूठ है। इसके लिए आप मन ही मन मुझसे घृणा करती हैं। उस दिन भोर में ही मुझे अथाह सागर में डाल कर जब आप चली आयीं उस समय

की आपकी मुखाकृति मुझे आज भी याद है। उसे मैं जीवन भर न भूल सकूंगा।"

"सब कुछ चाहे भूल जाएं लेकिन मेरा यह अपराध न भूलिएगा।"

"कभी नहीं।"

"मेरी उस मुखाकृति में क्या भावना थी ? घृणा ?"

"अवश्य ही।"

भारती हंस पड़ी। बोली, "अर्थात मनुष्य का मन समझने की बुद्धि आपकी अत्यन्त तीक्ष्ण है। है या नहीं ? लेकिन अब जरूरत नहीं है। आप सो जाइए। मुझे तो रात को जागने का अभ्यास है। लेकिन आप और अधिक जागेंगे तो मुझे भुगतना होगा," कहकर वह पास की कोठरी में चली गई।

भारती चली गई लेकिन अपूर्व की आंखों में नींद की छाया तक न थी। कमरे के एक कोने में टंगी हुई बत्ती टिमटिमा रही थी। बाहर रात का अन्धकार छाया हुआ था। उसका सम्पूर्ण शरीर मानो रोम-रोम में यह अनुभव करने लगा कि कमरे में इस बिस्तर पर, इस नीरव रात में इसी प्रकार चुपचाप सो रहने की तरह सुन्दर वस्तु तीनों लोक में और नहीं है।

प्रातःकाल उसकी नींद भारती के पुकारने पर टूटी। आंखें खोलते ही उसने देखा—वह उसके पैरों के पास खड़ी है।

"उठिए, क्या ऑफिस नहीं जाना है।"

"जाना तो है। देख रहा हूं आप नहा भी चुकी हैं।"

"आपको भी सारे काम जल्दी निपटा लेने चाहिए। कल अतिथि सत्कार में काफी त्रुटि हुई। लेकिन आज हमारी प्रेसीडेण्ट का आदेश है कि आपको अच्छी तरह खिलाए-पिलाए बिना किसी भी तरह न जाने दिया जाए।

अपूर्व ने पूछा, "कल वाली स्त्री बच गई ?"

"उसे अस्पताल भेज दिया गया है। बचने की आशा तो है।"

उस स्त्री को अपूर्व ने कभी देखा नहीं था। फिर भी उसके कुशल समाचार से उसने बड़ी राहत महसूस की। आज किसी का कोई भी अकल्याण मानो वह सह नहीं सकेगा। उसे ऐसा महसूस हुआ।

स्नान, सन्ध्या-पूजा आदि समाप्त करके, कपड़े पहनकर तैयार होकर जब वह ऊपर पहुंचा तो लगभग नौ बज चुके थे। इसी बीच चौका ठीक करके सरकार जी भोजन रख गए। अपूर्व ने आसन पर बैठकर पूछा,

"आपकी प्रेसीडेण्ट से तो मेरी भेंट नहीं हुई। क्या उसके अतिथि सत्कार की यही रीति है।"

"आपके जाने से पहले भेंट हो जाएगी। आपके साथ उनको शायद कुछ जरूरी काम भी है।"

"और डाक्टर साहब—जो मुझे बुलाकर लाए हैं? शायद वे अभी बिछौने पर ही पड़े हैं।

"बिछौने पर लेटने का उन्हें समय ही नहीं मिला। अभी-अभी अस्पताल से आए हैं। सोने, न सोने किसी का भी उनके निकट कोई मूल्य नहीं है।"

अपूर्व ने पूछा, "इससे क्या वे बीमार नहीं पड़ते?"

"मैंने तो देखा नहीं। लगता है सुख-दुख दोनों ही उनसे हार मान कर भाग गए हैं। सामान्य मनुष्य के साथ उनकी तुलना नहीं की जा सकती।"

"उनके प्रति आप सब लोगों की अपार श्रद्धा है।"

"श्रद्धा है। श्रद्धा तो अनेक लोगों को अनेक चीजों पर होती है।" कहते-कहते उसका कंठ स्वर अचानक भारी हो उठा। बोली, "उनके जाते समय जी चाहता है कि रास्ते की धूल पर लेटी रहूं। वे छाती के ऊपर पैर रख कर चले जाएं। इच्छा होती है लेकिन आशा कभी पूरी नहीं होती अपूर्व बाबू," यह कहकर उसने मुंह फेरकर झटपट आंखों के दोनों कोने पोंछ डाले।

अपूर्व ने और कुछ नहीं पूछा। चुपचाप भोजन करने लगा। उसे बार-बार याद आने लगा कि सुमित्रा और भारती के समान इतनी पढ़ी-लिखी और बुद्धिमती नारियों के हृदय में जिस व्यक्ति ने इतनी ऊंचाई पर सिंहासन बना लिया है। भगवान ने उसे किस धातु का बनाकर इस संसार में भेजा है। उसके द्वारा वे कौन सा असाधारण कार्य सम्पन्न करायेंगे?

आफिस के कपड़े पहनकर तैयार होकर उसने कहा, "चलिए डाक्टर साहब से भेंट कर आयें।"

"चलिए, उन्होंने आपको बुलाया भी है।"

सरकार जी के जीर्ण-शीर्ण होटल के एक बहुत ही भीतरी कमरे में डाक्टर साहब रहते हैं। रोशनी नहीं है, हवा नहीं है। आस पास गन्दा पानी जमा हो जाने से बदबू फैल रही है। अत्यन्त पुराने तख्तों पर पैर रखने से लगता है कि कहीं टूट कर न गिर पड़ें। ऐसे ही एक गन्दे तथा भद्दे कमरे में रास्ता दिखाती हुई भारती उसे ले गई तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। उस कमरे में पहुंचकर कुछ देर तक तो अपूर्व को कुछ दिखाई ही नहीं दिया।

डाक्टर साहब ने स्वागत करते हुए कहा, "आइए, अपूर्व बाबू।"

"ओह, कैसा भयानक कमरा आपने ढूंढ़ निकाला है डाक्टर साहब?"

"लेकिन कितना सस्ता है। दस आने महीना किराया है—बस।"

"अधिक है, बहुत अधिक है। दस पैसे ही उचित होता।"

डाक्टर साहब बोले, "हम दुखी लोग किस तरह रहते हैं आपको आंखों से देखना चाहिए। बहुतों के लिए तो यही राज महल है।"

"तब तो भगवान मुझे इस महल से वंचित ही रखें।"

"सुना है कल रात आपको बहुत कष्ट उठाना पड़ा। क्षमा कीजिएगा।"

"क्षमा तभी करूंगा जब आप यह कमरा छोड़ देंगे, इससे पहले नहीं।"

डाक्टर हंस पड़े। बोले, "अच्छा ऐसा ही होगा।"

अब तक अपूर्व ने देखा नहीं था। उसे एक मोढ़े पर बैठी सुमित्रा को देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। "आप यहां हैं? मुझे क्षमा करें, आपको मैंने देखा ही नहीं था।"

"अपराध आपका नहीं अन्धकार का है अपूर्व बाबू।"

अपूर्व ने धीरे से कहा, "डाक्टर साहब, आज आपका पहनावा कैसा है? क्या कहीं बाहर जा रहे हैं?"

डाक्टर के सिर पर पगड़ी, बदन पर लम्बा कोट, ढीला पाजामा, पैरों में रावलपिण्डी का नागौरी जूता। सामने चमड़े के बंधे कई गट्ठर रखे थे। बोले, "मैं तो अब जा रहा हूं अपूर्व बाबू। ये लोग सभी रहेंगे। आपको देखभाल करनी होगी। इससे अधिक आपको कुछ कहना मुझे आवश्यक नहीं जान पड़ता।"

अपूर्व घबराकर बोला, "अचानक कैसे जा रहे हैं? कहां जाना है?"

डाक्टर ने शान्त स्वाभाविक स्वर में कहा, "हम लोगों के शब्दकोष में क्या 'अचानक' शब्द होता है अपूर्व बाबू? मामो के रास्ते में जाना है। उसके भी और उत्तर में। कुछ सच्ची जरी का माल है। सिपाही, अच्छे दामों में खरीद लेते हैं।" यह कहकर वह हंस पड़े।

सुमित्रा बोल उठी, "उन लोगों को पेशावर से एकदम हटाकर मामो लाया गया है। तुम जानते हो, उन लोगों पर कैसी बुरी निगरानी रहती है। तुमको बहुत से लोग पहचानते हैं। यह मत सोच लेना कि सबकी आंखों में धूल झोंक सकोगे। इधर कुछ दिनों तक न जाने से क्या काम नहीं चलेगा?"

अन्तिम वाक्य कहते समय उसका स्वर कुछ विचित्र-सा सुनाई पड़ा।

डाक्टर ने कहा, "तुम तो जानती ही हो कि न जाने से काम नहीं चलेगा।"

सुमित्रा ने फिर कुछ नहीं कहा। लेकिन क्षणभर में अपूर्व सारी घटना समझ गया। उसके समूचे शरीर में आग-सी जलने लगी। किसी प्रकार पूछ बैठा, "मान लीजिए, यदि उनमें से कोई पहचान ही ले? यदि पकड़ ले?"

डाक्टर बोले, "सम्भव है पकड़ लेने पर फांसी दे देंगे। लेकिन अब दस बजे की ट्रेन छूटने में देर नहीं है अपूर्व बाबू। मैं जा रहा हूं।" यह कह कर उन्होंने फीते से बंधे बहुत बड़े पुलिंदे को बड़ी आसानी से पीठ पर रखा और चमड़े का बैग हाथ में उठा लिया।

अभी तक भारती ने एक शब्द भी नहीं कहा था। बिना कुछ बोले पैरों में गिरकर प्रणाम कर लिया। सुमित्रा ने भी प्रणाम किया। लेकिन पैरों के पास नहीं एकदम पैरों के ऊपर गिरकर।

डाक्टर ने कमरे के बाहर आकर अपूर्व के हाथ को पिछली रात की तरह अपनी मुट्ठी में भींचकर कहा, "मैं अब जा रहा हूं अपूर्व बाबू।—मैं ही सव्यसाची हूं।"

अपूर्व का चेहरा एकदम सूख गया। गले से एक शब्द भी नहीं निकला लेकिन आंखों की पलकों के गिरते-गिरते उसके पैरों के पास स्त्रियों की तरह धरती पर गिरकर प्रणाम किया। डाक्टर ने उसके सिर पर हाथ रखा। और दूसरा हाथ भारती के सिर पर रखकर धीमे स्वर में क्या कहा सुनाई नहीं दिया। फिर वे तेजी से बाहर निकल गए।

तेरह

भारती और अपूर्व दोनों ने पीछे की ओर के बन्द दरवाजे की ओर मुड़कर देखा लेकिन किसी ने कुछ कहा नहीं। दोनों चुपचाप होटल से बाहर आने लगे तो भारती ने कहा, "चलिए अपूर्व बाबू, हम लोग अपने कमरे में चलें।"

"लेकिन मेरा तो ऑफिस का समय—!"

"रविवार को भी ऑफिस?"

"रविवार ? —ये बात है ?" आपूर्व प्रसन्न होकर बोला, "यह बात सवेरे याद आ जाती तो नहाने-खाने के लिए इतना घबराने की जरूरत ही न पड़ती। आपको इतनी बातें याद रहती हैं लेकिन इस बात को भूल गईं।"

"ऐसा ही हुआ है। लेकिन कल रात का आपका निराहार रहना मैं नहीं भूली।"

अपूर्व बोला, "देर करने के लिए अब समय नहीं है। बेचारा तिवारी परेशान हो रहा होगा।"

भारती बोली, "नहीं हो रहा। आपके जागने से पहले ही उसे आपकी कुशलता की सूचना मिल चुकी है।"

"उसे क्या पता कि मैं यहां हूं ?"

"पता है। मैंने आदमी भेज दिया था।"

यह सुनकर अपूर्व के मन पर से भारी बोझ उतर गया। तिवारी और जो कुछ भी क्यों न करे लेकिन भारती के मुंह से निकली बात पर मरजाने की स्थिति में भी अविश्वास नहीं करेगा। प्रसन्न होकर अपूर्व बोला, "आपकी नज़र चारों ओर रहती है। घर पर भाभी को भी देखा है। मां को भी देखा है लेकिन हर ओर जिसकी दृष्टि रहे, ऐसा कोई नहीं देखा। सच कहता हूं, आप जिस घर की स्वामिनी होंगी उस घर के लोग आंखें मूंदकर दिन बितायेंगे। किसी को कभी कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा।"

भारती के चेहरे पर बिजली-सी दौड़ गई। अपूर्व ने इसे नहीं देखा। वह पीछे-पीछे आ रहा था।

"इस पराए देश में आप न होतीं तो मेरी क्या दशा होती बताइए तो। सब कुछ चोरी हो जाता। शायद तिवारी कमरे में ही मर जाता। ब्राह्मण के लड़के को डोम-मेहतर खींचकर उठाते। मैं भी क्या रह पाता ? नौकरी छोड़कर शायद चला जाना पड़ता। उसके बाद वही स्थिति। भाभियों की गर्जना और मां की आंखों के आंसू। आप ही तो सब कुछ हैं। सब कुछ बचा दिया आपने।"

"फिर भी आपने आते ही मेरे साथ झगड़ा मचा दिया था।"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "सारा दोष तिवारी का ही है। लेकिन मां यह सुनकर आपको कितना आशीर्वाद देंगीं। यह आप नहीं जानतीं ?"

"कैसे जानूं ? मां के आने पर उन्हीं के मुंह से तो सुन पाऊंगी।"

"मां आयेंगी, इस बर्मा में ? यह आप क्या कर रही हैं ?"

भारती ने बल देकर कहा, "क्यों नहीं आयेंगी। कितनों ही की मां आए दिन आ रही हैं। यहां आने से क्या किसी की जाति चली जाती है ?"

अपूर्व जाकर आराम कुर्सी पर बैठ गया। भारती बोली, "भाभियां

मां की अच्छी तरह सेवा नहीं करतीं। आपको बहुत दिनों तक विदेश में नौकरी करके रहना पड़े तो उनकी सेवा कौन करेगा ?"

"मां कहतीं हैं, छोटी दुल्हिन उनकी सेवा करेगी।"

भारती बोली, "अगर वह भी सेवा न करे तो ? आप रहेंगे विदेश में, बड़ी बहुओं की देखा-देख यदि वह भी उनकी तरह मां की सेवा न करके उन्हें कष्ट देने लगे तो क्या कीजिएगा ?"

अपूर्व भयभीत होकर बोला, "ऐसा कभी नहीं हो सकता। कुलीन ब्राह्मण वंश से आकर किसी प्रकार भी वह मेरी मां को कष्ट नहीं देगी।"

"कुलीन ब्राह्मण वंश," भारती मुस्कराकर बोली, "अब रहने दीजिए। अगर ज़रूरत पड़ी तो वह कहानी किसी दूसरे दिन आपको सुनाऊंगी। केवल मां की सेवा के लिए ही जिससे विवाह करके आप छोड़कर चले आयेंगे, उसके प्रति क्या यह आपका अन्याय नहीं होगा ?"

"अन्याय तो अवश्य होगा।"

"और इस अन्याय के बदले में आप स्वयं न्याय की अपेक्षा करेंगे ?"

कुछ पल मौन रहकर अपूर्व बोला, "लेकिन इसके अतिरिक्त मेरे पास और उपाय ही क्या है भारती ?"

"उपाय नहीं भी है और हो भी सकता है। लेकिन इस असम्भव बात की आशा आप बहुत बड़े कुलीन घर की बेटी से भी नहीं कर सकते। इसका परिणाम कभी शुभ नहीं होगा। आपकी निर्ममता के बदले में वह जितना ही अपना कर्तव्य-पालन करेगी आप उसके सामने उतने ही छोटे हो जायेंगे। पत्नी के सामने अश्रद्धेय होने की अपेक्षा बड़ा दुर्भाग्य संसार में और कुछ नहीं है।"

इस बार अपूर्व निरुत्तर-सा हो गया। मित्र मंडली में शास्त्र के अनुसार नारी को आधुनिकता के विरुद्ध शास्त्र ग्रन्थों से प्रमाण उद्धृत करके उन लोगों को स्तब्ध कर दिया है। लेकिन इस ईसाई लड़की के आगे उसका मुंह नहीं खुला। वह इतना ही कह सका, "कोई नहीं।"

भारती हंसकर बोली, "एकदम कोई नहीं, यह बात नहीं है। कुलीन घर की न होकर कहीं भी कोई हो सकती है जो आपके लिए अपने आपको सम्पूर्ण रूप से समर्पित कर दे। लेकिन उसे आप खोज कहां पायेंगे ?"

अपूर्व अपने आप में ही डूबा रहा। भारती की बात पर उसने ध्यान नहीं दिया। बोला, "यही तो बात है।"

भारती ने पूछा, "आप घर कब जाइएगा ?"

"क्या पता मां कब चिट्ठी भेजती हैं। बाबूजी के साथ मतभेद होने के कारण मां ने जीवन में कभी सुख नहीं पाया। उस मां को अकेली छोड़

आने के लिए मेरा मन कभी तैयार न होता।" फिर भारती की ओर देखकर बोला, "देखिए, बाहर से देखने में हम लोगों की अवस्था कितनी ही अच्छी क्यों न हो लेकिन भीतर से बहुत खराब है। भाभियां किसी भी दिन हम लोगों को अलग कर सकती हैं। वहां जाकर शायद फिर लौटकर न आ सकूं।"

भारती बोली, "आपको आना ही पड़ेगा।"

"मां को छोड़कर कब तक अलग रहूंगा ?"

"उन्हें सहमत करके साथ ले आइए। वे आयेंगी।"

अपूर्व हंसकर बोला, "कभी नहीं। मां को आप नहीं जानतीं। अच्छा मान लो, वे आजायें, तो उनकी देख-भाल कौन करेगा ?"

"मैं करूंगी !"

"आप करेंगी ? आपके घर में कदम रखते हो ही मां बर्तन उठाकर फेंक देंगी।"

भारती बोली, "कितनी बार फेंक देंगी। मैं रोज कमरे में जाऊंगी।"

दोनों हंस पड़े। भारती ने सहसा गम्भीर होकर कहा, "आप भी तो बर्तन फेंकने वालों के दल के ही हैं। लेकिन फेंक देने से ही सारा बखेड़ा समाप्त हो जाता तो संसार की सारी समस्याएं सुलझ जातीं। विश्वास न हो तो तिवारी से पूछ लीजिएगा।"

अपूर्व बोला, "यह तो सच है। वह बर्तन तो फेंक देगा लेकिन साथ ही उसकी आंखों से आंसू भी बहेंगे। आपके लिए उसके मन में अपार भक्ति है। थोड़ा-सा सिखाने-पढ़ाने से वह ईसाई भी बन सकता है।"

भारती बोली, "संसार में कब क्या हो जाए। कुछ नहीं कहा जा सकता, न नौकर के सम्बन्ध में और न—" यह कहकर उसने हंसी छिपाने के लिए मुंह नीचा किया तो अपूर्व का चेहरा लाल हो उठा। बोला, "पर यह तो निश्चित है कि नौकर और मालिक की बुद्धि में कुछ अन्तर रह सकता है।"

भारती बोली, "अन्तर तो है। इसीलिए मालिक के सहमत होने में देर हो सकती है।"

परिहास समझ अपूर्व प्रसन्न होकर बोला, "क्या आप ऐसा सोच सकती हैं ?"

"हां, सोच सकती हूं।"

अपूर्व बोला, "लेकिन मैं तो प्राण जाने पर भी धर्म का त्याग नहीं कर सकता।"

भारती बोली, "प्राण जाना क्या वस्तु है आप यही तो नहीं जानते।

तिवारी जानता है। लेकिन इस विषय पर बहस करने से अब क्या लाभ है? आपकी तरह अन्धकार में डूबे व्यक्ति को प्रकाश में लाने की अपेक्षा अधिक आवश्यक काम अभी मुझे करने बाकी हैं। आप थोड़ी देर सो रहिए।"

अपूर्व बोला, "मैं दिन में कभी नहीं सोता।"

भारती बोली, "मुझे तो मुट्ठी भर अन्न पकाकर खाना पड़ता है। सो नहीं सकते तो मेरे साथ नीचे चलिए। मैं क्या रसोई पकाती हूं, किस तरह पकाती हूं, यही देखिए। जब एक दिन मेरे हाथ का खाना ही पड़ेगा तो अनजान रहना उचित नहीं," यह कहकर खिलखिलाकर हंस पड़ी।

अपूर्व बोला, "मैं मर जाने पर भी आपके हाथ का नहीं खाऊंगा।"

"मैं जीवित रहते खाने की बात कह रही हूं," कहकर हंसती हुई नीचे चली गई।

अपूर्व चिल्लाकर बोला, "तब मैं अपने डेरे पर चला जाता हूं तिवारी परेशान होगा।"

लेकिन कोई उत्तर नहीं हुआ। आलस्य आ जाने के कारण वह आराम करने लगा।

चौदह

"उठिए, दिन बहुत बीत गया।"

अपूर्व आंखें मलकर उठ बैठा। देखकर बोला, "तीन-चार घंटे हो गए, मुझे जगा क्यों नहीं दिया?"

"जाइए, हाथ-मुंह धो आइए। सरकार जी जलपान की थाली ले आए हैं।"

नीचे से हाथ-मुंह धोकर आने के बाद अपूर्व जलपान करके सुपारी-इलायची आदि मुंह में रखकर बोला, "अब मुझे छुट्टी दीजिए। मैं अपने डेरे पर जाऊं।"

भारती बोली, "यह नहीं होगा। तिवारी को मैंने सूचना पहुंचा दी है वह घर पर स्वस्थ है। कोई चिन्ता नहीं। आज सुमित्रा देवी अस्वस्थ हैं, नवतारा अतुल बाबू को लेकर उस पार गई है। आप मेरे साथ चलिए।

आपके लिए प्रेसीडेन्ट का यही आदेश है। यह धोती मैंने ला दी है। उसे आप पहन लीजिए।"

"कहां जाना होगा ?"

"मजदूरों के घर। आज रविवार के दिन वहां काम करना है।"

"लेकिन वहां किसलिए ?"

भारती ने हंसकर कहा, "आप इस संस्था के माननीय सदस्य हैं। निश्चत स्थान पर न जाने से काम का ढंग नहीं समझ पायेंगे।"

"चलिए," अपूर्व तैयार हो गया।

अलमारी से एक चीज़ निकालकर भारती ने छिपाकर उसकी जेब में रख दी। अपूर्व बोला, "यह क्या है ?"

"पिस्तौल है।"

"पिस्तौल क्यों ?"

"आत्मरक्षा के लिए।"

"इसका लाइसेन्स है ?"

"नहीं।"

"अगर पुलिस पकड़ लेगी तो दोनों की ही आत्मरक्षा हो जाएगी। कितने साल की सजा मिलेगी, जानती हो ?"

"नहीं, चलिए।"

अपूर्व बोला, "दुर्गा श्रीहरि। चलिए।"

लम्बा रास्ता चलकर, एक कारखाने के सामने पहुंचकर वे लोग
फाटक के कटे दरवाजे से निकलकर अन्दर चले गए। अन्दर कारीगरों और
मजदूरों के रहने के लिए टूटे-फूटे काठ और टीनों की लम्बी बस्ती थी।

भारती बोली, "आज काम का दिन होता तो यहां मारपीट और खून-
खराबा हो रहा होता।"

"यह तो छुट्टी के दिन की भीड़ से ही अनुभव कर रहा हूं।"

सामने एक मदरासी महिला पर्दा खिसकाकर पाखाने जा रही थी।
पर्दे की हालत देखकर अपूर्व लज्जा से लाल होकर बोला, "पथ के दावे
करने हों तो कहीं और चलिए। मैं यहां खड़ा नहीं रह सकता।"

प्रत्युत्तर में भारती हंस पड़ी।

कई घरों को पार करके दोनों ने एक बंगाली मिस्त्री के घर में प्रवेश
किया। उस आदमी की उम्र काफी हो चली है। कारखाने में पीतल ढालने
का काम करता है। शराब पीकर, काठ के फर्श पर लेटा मुंह बिगाड़कर
किसी को गालियाँ दे रहा था।

भारती बोली, "माणिक, किस पर नाराज हो रहे हो? सुशीला दो दिन से पढ़ने क्यों नहीं गई?"

माणिक किसी तरह उठकर बैठ गया। पहचानकर बोला, "बहिन जी आओ बैठो। सुशीला तुम्हारे स्कूल में कैसे जाए, बताओ। रसोई-पानी, बर्तन मांजने से लेकर लड़के को संभालने तक का काम। छाती फटी जा रही है बहिन जी। उस साले को अगर मार न डालूं तो मैं वैवर्त समाज से खारिज। बड़े साहब के पास ऐसी अर्जी भेजूंगा कि साले की नौकरी ही छूट जाएगी।"

भारती हंसकर बोली, "वही करना। और अगर कहो तो सुमित्रा दीदी से कहकर तुम्हारी अर्जी लिखवा दूंगी। लेकिन कल तो फायर मैदान में हमारी मीटिंग है। याद है न?"

तभी दस-ग्यारह वर्ष की एक लड़की आई। उसने शराब फर्श पर रखकर कहा, "घोड़ा मार्का शराब नहीं मिली, टोपी मार्का ले आई हूं। चार पैसे बाकी बचे हैं बाबूजी। रमिया ने शराब में धुत होकर मुझ से क्या कहा था जानते हो?"

पिता ने रमिया का नाम लेकर एक भद्दी गाली दी।

भारती बोली, "वहां तुम मत जाना सुशीला। तुम्हारी मां कहां हैं?"

"मां? मां तो परसों रात को ही यदु चाचा के साथ चली गई। लाईन के बाहर किराए एक मकान में रहती है···।"

लड़की और भी कुछ करने जा रही थी कि बाप गरजकर बोला, "रहने दूंगा? ब्याही औरत है, रखैल नहीं।" कहकर उसने नई बोतल की टोपी तोड़ डाली।

अचानक भारती की साड़ी का छोर खींचकर अपूर्व बोला, "चलिए यहां से।" इससे पहले उसने भारती को कभी छुआ तक नहीं था।

"थोड़ी देर और ठहरिए।"

"नहीं, बिलकुल नहीं," वह उसे जबर्दस्ती बाहर ले आया।

कमरे में माणिक बोतल खोलकर गर्व से बोला, "खून करके अगर फांसी पर भी चढ़ना पड़े तो भी अच्छा है। मैं जेल या फांसी किसी से भी नहीं डरता।"

अपूर्व अग्नि पिंड की तरह दहक उठा, "हरामजादा, पाजी, लुच्चा, बदमाश—नरक कुंड बना रखा है। यहां आपको कदम रखने में घृणा नहीं हुई?"

भारती बोली, "नहीं। इस नरक कुंड का निर्माण इन लोगों ने नहीं किया।"

अपूर्व बोला, "इन्होंने नहीं तो क्या मैंने किया है। लड़की की बात सुनी ? उसकी मां तीर्थयात्रा करने गई है। निर्लज्ज, बेहया, शैतान ! फिर कभी यहां आइएगा तो अच्छा न होगा।"

भारती हंसकर बोली, "मैं मलेच्छ हूं। मेरे यहां आने में क्या दोष है ?"

अपूर्व क्रुद्ध होकर बोला, "दोष नहीं है ? ईसाई के लिए क्या अपने समाज के प्रति कोई उत्तरदायित्व नहीं है ?"

"मेरा कौन है जिसके प्रति उत्तरदायित्व दिखाऊं ? किसके सिर में मेरे लिए पीड़ा होती है ?"

"यह आपकी चालाकी है। घर लौट चलिए।"

"मुझे पांच जगह और जाना है। आपको अच्छा न लगता हो तो आप लौट जाइए।"

"यह कहने से ही क्या मैं आपको छोड़कर जा सकता हूं।"

"ऐसी बात है तो मेरे साथ चलिए। मनुष्य पर मनुष्य के अत्याचार आंखें खोलकर देखने चलिए। केवल छुआछूत फैलाकर, अपने आप साधु बनकर सोचते हैं कि पुण्य संचय करके एक दिन स्वर्ग जायेंगे ? ऐसा सोचिएगा भी नहीं।"

कहते-कहते भारती की मुखाकृति कठोर और गले की आवाज़ तीखी हो उठी, "इस लड़की की मां और यदु ने जो अपराध किया है वह क्या केवल इन लोगों को दण्ड देकर समाप्त हो जाएगा ? डाक्टर साहब को जब तक मैंने नहीं पहचाना या तब तक मैं भी ठीक इसी तरह सोचती थी। लेकिन आज मैं जानती हूं कि इस नरक कुंड में जितना पानी है उसका भार आपको भी स्वर्ग के द्वार से खींचकर ले आयेगा और इस नरक कुंड में डुबो देगा। आप में इतनी सामर्थ्य नहीं है कि इस दुष्कृति का ऋण चुकाए किए बिना ही मुक्ति पा जाएं। हम लोग अपनी ही गरज से यहां आते हैं अपूर्व बाबू। यह उपलब्धि ही हम लोगों के पथ के दावे की सबसे बड़ी साधना है। चलिए।"

"चलिए," अपूर्व ने कहा। लेकिन वह भारती की बातों पर विश्वास नहीं कर सका।

सागौन का एक पेड़ दिखाकर भारती बोली, "यहां सामने कई बंगाली रहते हैं। चलिए।"

"बंगालियों के अतिरिक्त और जातियों में भी आप लोग काम करती हैं ?"

"हां, हमें तो सभी की आवश्यकता है। लेकिन प्रेसीडेन्ट के अतिरिक्त

और कोई अन्य भाषाएं नहीं जानता। यह काम उन्हीं का है।"

"वे भारत की सभी भाषाएं जानती हैं ?"

"हां।"

"और डाक्टर साहब ?"

भारती हंस पड़ी, "डाक्टर साहब के सम्बन्ध में आपको भी उत्सुकता रहती है। आपको इस बात पर विश्वास नहीं होता कि संसार में जो कुछ भी जान लेना सम्भव है वे सब कुछ जानते हैं। जो कुछ किया जा सकता है वे कर सकते हैं। उनके लिए अज्ञान या असाध्य कुछ भी नहीं है।"

दोनों ने एक मकान में प्रवेश किया। भारती ने पुकारा, "पंचकौड़ी, आज तबियत कैसी है ?"

भीतर से आवाज़ आई, "आज कुछ ठीक है।"

इतने में एक बूढ़ा सामने आ खड़ा हुआ। बोला, "बेटी, लड़की को खूनी आंव रहता है। शायद बचेगी नहीं। लड़के को कल से फिर बुखार आ गया है। पास में एक पैसा नहीं कि एक-दो खुराक दवा ला सकूं। या एक कटोरी साबूदाना या बार्ली ही पकाकर खिला सकूं।" उसकी दोनों आंखें आंसुओं से भर गई।

अपूर्व बोला, "पैसा क्यों नहीं है ?"

वह बोला, "पुली की जंजीर गिर जाने से बांए हाथ में चोट लग गई है। लगभग एक महीने से काम पर नहीं जा सका। पैसा कहां से आएगा बाबूजी ?"

अपूर्व बोला, "कारखाने वाले इसका कोई प्रबन्ध नहीं करते ?"

"मजदूर के लिए प्रबन्ध ? वह तो कह रहे हैं कि काम नहीं कर सकते तो मकान छोड़ दो। ठीक होकर आना। काम मिल जाएगा। ऐसी हालत में चला कहां जाऊं ? छोटे साहब के हाथ-पांव जोड़कर एक हफ्ते और रह पाऊंगा। बीस वर्ष से काम कर रहा हूं महाशय। ये लोग ऐसे ही नमक हराम हैं।"

अपूर्व क्रोध से जल उठा। जी में आया कि अगर मैनेजर मिल जाए तो उसकी गर्दन पकड़कर दिखा दूं कि अच्छे दिनों में जिसने लाखों रुपए कमाकर दिए हैं आज बुरे दिनों में उसकी क्या हालत है।

अपूर्व के मकान के पास ही बैलगाड़ियों का एक अड्डा है। उसे वहां की एक घटना याद आ गई। एक जोड़ी बैल जीवनभर बोझ ढोते-ढोते जब अशक्त और बूढ़े हो गए तो उनके मालिक ने उन्हें कसाई के हाथ बेच दिया। उस रास्ते से वह जब भी गया है, इस घटना को याद करके उसकी आंखों में आंसू आ गए हैं। बैलों के लिए नहीं। लेकिन धन की लालसा में

इस सीमा तक बर्बर और निष्ठुर बने मनुष्य के लिए, जो अपने आपको निरन्तर छोटा बनाता जा रहा है।

कमरे के एक कोने में सैंकड़ों स्थान पर फटे-पुराने बिछौने पर एक लड़की और एक लड़का अधमरे से पड़े थे। उनके पास जाकर भारती ने उनकी नब्ज देखी। भय के कारण अपूर्व वहां नहीं जा सका। लेकिन दरिद्रता पीड़ित उन दोनों बच्चों की वेदना उसकी छाती में चोट कर गई।

कुछ देर के बाद भारती बोली, "चलिए।"

पंचकौड़ी चुपचाप, उदास मुख लिए खड़ा था। भारती ने स्निग्ध स्वर में फिर कहा, "तुम डरो मत। ये दोनों अच्छे हो जायेंगे। मैं डाक्टर और दवा, सबका प्रबन्ध कर देती हूं।"

उसकी बात पूरी हो ही रही थी कि अपूर्व जेब में हाथ डालकर रुपया निकालने लगा। भारती ने जल्दी से उस हाथ को पकड़कर रोक दिया। पंचकौड़ी की नज़र दूसरी ओर थी। वह यह नहीं देख पाया। लेकिन अपूर्व इसका कारण नहीं समझ सका।

भारती ने आपनी अंगिया की जेब से चार आने निकालकर उसके हाथ में देकर कहा, "बच्चों के लिए चार पैसे की मिश्री, चार पैसे का साबूदाना ले आना और बाकी दो आने का दाल-चावल लाकर तुम खा लेना। कल तुम्हारा प्रबन्ध कर दूंगी।" यह कहकर अपूर्व को साथ लेकर कमरे से निकल आई।

रास्ते में अपूर्व ने पूछा, "आपने मुझे पैसे देने से रोक दिया और स्वयं भी नहीं दिए। यह क्यों?"

"देकर तो आ रही हूं?"

"इसी को देना कहते हैं? उसके इस दुर्दिन में पाई-पैसे का हिसाब करके केवल चार आने देना उसका अपमान है।"

"आप कितना देने जा रहे थे?"

"कम से कम पांच रुपए।"

भारती जीभ काटकर बोली, "बाप रे बाप, सब चौपट हो जाता। बाप तो शराब पीकर बेहोश पड़ा रहता और लड़की, लड़के दोनों की मृत्यु हो जाती।"

"शराब पी लेता?"

"नहीं पीता? हाथ में इतना रुपया आ जाने पर शराब न पी जाए ऐसा मनुष्य संसार में कौन है?"

"आपकी सभी बातें विचित्र हैं। बीमार बच्चे की दवा के रुपए से

शराब खरीदकर पीले—यह क्या सत्य हो सकता है ?"

"नहीं तो दाता का हाथ पकड़कर दुखी व्यक्ति को देने से रोकूं, क्या मैं इतनी नीच हूं ?"

"इनकी मां नहीं है ?"

"नहीं।"

"कहीं कोई रिश्तेदार भी नहीं है ?"

भारती बोली, "होने पर भी कोई काम नहीं आता। दस-ग्यारह साल पहले पंचकौड़ी एक बार अपने गांव गया था। अपने किसी पड़ोसी की एक विधवा स्त्री को फुसलाकर यहां ले आया था। लड़के-लड़की उसी के हैं। दो वर्ष बीत रहे हैं। गले में फांसी लगाकर इस संसार से मुक्त हो गई यही पंचकौड़ी के परिवार का संक्षिप्त इतिहास है।"

अपूर्व ने गहरी सांस लेकर कहा, "नरक कुंड है।"

"इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। लेकिन कठिनाई तो यह है कि ये सभी हमारे भाई-बहिन हैं। रक्त का सम्बन्ध अस्वीकार कर देने से तो छुटकारा नहीं मिलेगा अपूर्व बाबू। ऊपर बैठकर जो सब कुछ देख रहे हैं। वे कौड़ी-छदाम जोड़-जोड़कर हिसाब करके ही छोड़ेंगे।"

अपूर्व ने गम्भीर होकर कहा, "लगता है कि यह असम्भव नहीं है।"

पलभर पहले पंचकौड़ी के कमरे में खड़े-खड़े जो विचार पैदा हुए थे बिजली के वेग के समान मन में दौड़ गए। बोला, "मैं भी मनुष्य हूं। मेरा भी कुछ न कुछ दायित्व है।"

भारती बोली, "पहले-पहले तो मैं भी नहीं देख पाती थी। क्रोध में आकर झगड़ा कर बैठती थी। लेकिन अब देख पा रही हूं कि इन सब अज्ञानी दुखी, दुर्बल मन और पीड़ित भाई-बहिनों की गर्दन पर पाप का बोझ कौन लादता जा रहा है।"

पास वाले कमरे में एक उड़िया मिस्त्री रहता है। उसके पास वाले कमरे से बीच-बीच में तेज़ हंसी और कोलाहल की आवाज़ें आ रही थीं। यह सब पंचकौड़ी के कमरे से भी सुनाई दे रहा था। वे दोनों उस कमरे में पहुंचे। भारती को वे लोग पहचानते थे। सभी ने उसकी अभ्यर्थना की। एक दौड़कर एक स्टूल और बेंत का एक मोढ़ा ले आया। दोनों बैठ गए। फर्श पर बैठे छै-सात आदमी और आठ-दस औरतें एक साथ शराब पी रहे थे। टूटा हारमोनियम और तबला बीच में रखा था। तरह-तरह के रंग और आकार की खाली बोतलें चारों ओर लुढ़की पड़ी थीं। एक बूढ़ी-सी औरत नशे में धुत पड़ी सो रही थी। उसे एक प्रकार से नंगी ही कहा जा सकता था। साठ से लेकर बीस-पच्चीस वर्ष तक के नौ उम्र स्त्री-पुरुष बैठे थे।

आज रविवार है। पुरुषों की छुट्टी का दिन है। प्याज-लहसुन की तरकारी और सस्ती जर्मन शराब की अवर्णनीय दुर्गन्ध एक साथ मिलकर अपूर्व की नाक तक पहुंचते ही उसका जी मिचलाने लगा। एक कम उम्र की औरत के हाथ में शराब का गिलास था। शायद थोड़े दिन पहले ही घर छोड़कर आई है। बांए हाथ से नाक बन्द करके गिलास को मुंह में उड़ेल कर बार-बार थूकने लगी। एक आदमी ने झटपट उसके मुंह में तरकारी ठूंस दी। एक बंगाली स्त्री को शराब पीते देख अपूर्व स्तम्भित-सा हो गया। लेकिन उसने कनखी से देखा कि इतने भयंकर वीभत्स दृश्य से भी भारती के चेहरे पर किसी प्रकार के विकार का चिह्न तक नहीं है। यह सब देखने-सुनने की जैसे वह अभ्यस्त हो गई हो। लेकिन पलभर के बाद घर के स्वामी के कहने से जब ट्रमी ने गाना आरम्भ किया—"वह यमुना—वह यमुना—" और पास ही बैठे एक आदमी ने हारमोनियम उठाकर झूठ-मूठ ही जी जान से बजाकर आरम्भ किया तब शायद इतना बोझ भारती के लिए असह्य हो उठा। घबराकर बोली, "मिस्त्री जी, कल हम लोगों की सभा है। शायद यह बात तुम भूले नहीं हो। वहां जाना तो चाहिए ही।"

"जरूर चाहिए बहिन जी," कहकर काला चांद ने गिलास में शराब डाल ली।

भारती ने कहा, "बचपन में तुमने पढ़ा होगा कि तिनके जोड़-जोड़ कर रस्सी तैयार करने पर हाथी भी बांधा जा सकता है। एक न होने पर तुम लोग कभी कुछ न कर सकोगे। केवल तुम लोगों की भलाई के लिए सुमित्रा बहिन कितना परिश्रम कर रही हैं। बताओ तो।"

इस बात का सभी ने समर्थन दिया। भारती ने कहा, "तुम लोगों के बिना क्या इतना बड़ा कारखाना एक दिन भी चल सकता है? तुम लोग ही तो उसके वास्तविक स्वामी हो। इतनी सीधी-सादी बात कालाचांद, तुम लोग न समझना चाहो तो कैसे काम चलेगा।"

सबने कहा, "यह बात बिल्कुल ठीक है। उन लोगों के न चलाने पर तो अंधेरा ही अंधेरा रह जायगा।"

भारती ने कहा, "फिर भी तुम लोगों को कितना कष्ट है। सोचकर देखो। जब तब अपराध के बिना ही साहब लोग तुम लोगों पर लात-जूते मारकर बाहर निकाल देते हैं। इस पास के घर की हालत देख लो। काम करते समय पंचकौड़ी का हाथ टूट गया। जिसके कारण उसे खाना नहीं मिल रहा। उसके लड़के-लड़की दवा न मिलने के कारण मौत के मुंह में जा रहे हैं। बड़ा साहब उसे मकान से भी निकाल देना चाहता है। यह जो लाखों-करोड़ों रुपयों का लाभ ये लोग कर रहे हैं, यह किसकी बदौलत

हो रहा है। और तुम लोगों को मिलता क्या है? अभी उस दिन की घटना है—श्यामलाल को छोटे साहब ने धकेल दिया, वह आज तक अस्पताल में पड़ा हुआ। इस बात को तुम लोग क्यों सहोगे? एक बार सब लोग एक होकर ऊंची आवाज में कह दो कि यह अत्याचार हम लोग अब नहीं सहेंगे। फिर देखूंगी कि वे लोग तुम लोगों के शरीर पर हाथ लगाने का साहस करते हैं। केवल एक बार ही तुम लोग अपनी शक्ति को ध्यान से देखना सीख लो। हम तुम लोगों से और कुछ नहीं चाहते काला चांद।"

एक शराबी इतनी देर तक अवाक्-सा होकर सुन रहा था। उसने कहा, "भैया हम क्या नहीं कर सकते? हम सब ऐसा पेच ढीला करके रख दे सकते हैं कि धड़-धड़-धड़ाम बस आधा कारखाना साफ हो जाएगा।"

भारती ने भयभीत होकर कहा, "नहीं, नहीं दुलाल, ऐसा काम कभी मत करना। इससे तो तुम्हीं लोगों की हानि होगी। हो सकता है कितने ही लोग मर जायें। हो सकता है—नहीं, नहीं—यह बात सपने में भी मत सोचना दुलाल। इससे बढ़कर भयानक पाप दूसरा नहीं है।"

दुलाल मतवाली हंसी हंसकर बोला, "नहीं, यह क्या मैं जानता नहीं। यह तो केवल बातचीत के सिलसिले में कह रहा हूं कि हम लोग क्या नहीं कर सकते।"

भारती बोली, "तुम लोगों को सुमार्ग में, सच्चे मार्ग में खड़ा होना चाहिए, तभी तुम कुछ कर पाओगे। तुम लोगों का बहुत रुपया पावना है। वह कौड़ी-कौड़ी करके वसूल करना होगा।"

इसी बात को लेकर वे सब हल्ला-गुल्ला करने लगे। तब भारती बोली, "सांझ हो रही है। अभी एक जगह और जाना है। अब हम लाग जा रहे हैं। लेकिन कल की बात मत भूल जाना।" कहकर वह खड़ी हो गई।

काला चांद के इस अड्डे के सभी व्यवहार अपूर्व को अशोभन दिखाई दिए। लेकिन अन्तिम समय में जिन बातों की चर्चा हुई उस से उसका विरक्ति की सीमा नहीं रही। बाहर आते ही उसने अत्यधिक अप्रसन्न होकर कहा, "तुम यह सब बातें उन लोगों से क्यों कहने गईं।"

"कौन सब बात?"

"वह नालायक तो हरामज़ादा शराबी है। दुलाल ने क्या कहा तुमने सुना तो?" मान लो अगर यह बात साहब लोगों के कानों तक पहुंच जाए?

"उनके कानों तक कैसे पहुंचेगी ?"

"अरे, ये लोग ही कह देंगे ? ये लोग क्या युधिष्ठिर हैं ? शराब के नशे में कब क्या कर डालें, इसका कोई ठिकाना नहीं है। तब तुम्हारे ऊपर ही सारा दोष आयेगा। ये कहेंगे कि तुमने ही सिखाया है।"

"लेकिन यह तो झूठी बात होगी।"

अपूर्व ने व्याकुल होकर कहा, "झूठी बात ? अरे, अंग्रेजों के राज्य में झूठी बात के लिए क्या कभी किसी को जेल की सजा नहीं मिली ? यह राज्य तो झूठ के आधार पर ही खड़ा है।"

"सम्भवतः मुझे भी जेल हो सकती है।"

"तुमने तो झट कह दिया जेल हो सकती है। नहीं, नहीं, यह सब कुछ नहीं होगा। और तुम यहां कभी आओगी भी नहीं।"

एक आदमी से मिलना था लेकिन उसके द्वार पर ताला लगा था। दोनों लौट पड़े। काला चांद के मकान में शराबियों का तर्क-वितर्क अभी तक चल रहा था। लोग यह कहकर झगड़ रहे थे कि ईसाई लड़कियां कारखाने में हड़ताल करा देना चाहती हैं। हड़ताल में उन्हें बड़ा कष्ट होगा। उन लोगों को लाइन के घरों में नहीं आने देना चाहिए। काला चांद मिस्त्री ने कहा कि वह मूर्ख नहीं है। वह उन लोगों की दौड़-धूप परख रहा है। एक सतर्क महिला ने सलाह दी कि बड़े साहब को पहले ही सावधान कर देना ठीक होगा।

वहां से भारती को जबर्दस्ती दूर ले जाकर अपूर्व तीखे स्वर में बोला, "इन लोगों की भलाई और करोगी ? हरामज़ादे, पाजी, बदमाश। पास वाले कमरे में दो बच्चे मर रहे हैं उनकी ओर आंख उठाकर कोई देखता। इससे बढ़कर नरक और कहां है ?"

"भारती बोली, "आपको यह क्या हो गया है ?"

"मुझे कुछ नहीं हुआ, लेकिन तुमने कुछ सुना है या नहीं ?"

"ये तो पुरानी बातें हैं। रोजाना ही सुनती हूं।"

अपूर्व गरज कर बोला, "ऐसी कृतघ्नता ! इन्हीं को तुम अपने दल में लाना चाहती हो। यूनियन बनाना चाहती हो ? इनकी भलाई चाहती हो ?"

भारती हल्की-सी हंसी के साथ बोली, "ये लोग भी तो हम लोगों में से ही हैं अपूर्व बाबू। इस छोटी-सी बात को भूलकर आप संकट में पड़ रहे हैं। और भलाई ? भलाई तो डाक्टर साहब की भी नहीं की जा सकती अपूर्व बाबू।"

अपूर्व निरुत्तर हो गया।

दोनों चुपचाप फाटक पार करके घूमते हुए बड़ी सड़क पर पहुंच गए बस्ती के छोर पर जहां से दलदल आरम्भ होती थी वहीं तिमुहानी पर पहुंचकर भारती बोली, "अगर आप घर जाना चाहें तो शहर जाने के लिए यह दायीं ओर का रास्ता है।"

अपूर्व ने खोए-खोए से स्वर में पूछा, "आप क्या कहतीं हैं।"

भारती बोली, "अब आपका दिमाग ठंडा हो गया है और यथोचित सम्बोधन की भाषा याद आ गई है।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि क्रोध के कारण अब तक आप और तुम का भेद नहीं था। वह फिर लौट आया है।"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "आप नाराज तो नहीं हुईं ?"

भारती हंसकर बोली, "हुई भी हूं तो क्या हर्ज है ? चलिए।"

"तो चलूं ?"

"चलोगे नहीं तो क्या मैं अंधेरे रास्ते में अकेली जाऊंगी ?"

अपूर्व चल दिया। उसके अन्तर में एक ज्वाला-सी धधक रही थी। उन शराबियों की बातों को वह किसी भी तरह भूल नहीं पा रहा था। सहसा कड़े स्वर में बोला, "यह सब तो सुमित्रा का काम है। आपको वहां नेतृत्व करने के लिए जाने की क्या ज़रूरत है ? न जाने कौन कहां क्या कर डालें। और आपको लेकर खींचातानी आरम्भ हो जाए।"

भारती बोली, "हो जाने दीजिए।"

अपूर्व बोला, "वाह रे—हो जाने दीजिए। असल बात यह है कि नेतागीरी करना आपका स्वभाव है। लेकिन और भी तो बहुत से स्थान हैं ?"

"कोई दिखा दीजिए न ?"

"मुझे गरज़ नहीं।"

भारती ने हाथ बढ़ाकर अपूर्व का दायां हाथ जोर से पकड़कर कहा, "मेरा स्वभाव बदलेगा नहीं अपूर्व बाबू। लेकिन आप जैसे आदमी पर नेतृत्व कर पाऊं तो और सब छोड़ सकती हूं।"

पन्द्रह

अगले दिन सुमित्रा की अध्यक्षता में फायर मैदान में जो सभा हुई

उसमें उपस्थिति कम थी। जिन लोगों ने भाषण देने का वचन दिया था उनमें से भी अधिक लोग नहीं आ सके। सभा की कारवाई देर से आरम्भ हुई। रोशनी का प्रबन्ध न होने के कारण सांझ होने से पहले ही समाप्त कर दी गई। सुमित्रा के भाषण के अतिरिक्त सभा में और कुछ उल्लेखनीय नहीं हुआ। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि पथ के दावेदारों के इस प्रथम प्रयास को व्यर्थ कह दिया जाए। मजदूरों में इस बात को फैलने में जिस प्रकार देर नहीं हुई उसी प्रकार मिल और कारखाने के मालिकों के कानों तक भी उक्त बातों के पहुंचने में विलम्ब नहीं हुआ। चारों ओर यह बात फैल गई कि एक बंगाली महिला विश्व-भ्रमण करती हुई बर्मा में आई है। वह जितनी रूपमयी हैं उतनी ही शक्तिमयी भी हैं। किसी की मजाल नहीं जो उनके कामों में बाधा डाल सके। साहबों का कान पकड़कर वे किस प्रकार मजदूरों के लिए सब प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध करा लेंगी और उनकी मजदूरी दो गुनी करा देंगी—इन बातों को उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा है। जिन लोगों को इस सभा की खबर थी और जो लोग उस दिन उनका भाषण नहीं सुन पाए उन्होंने निश्चय किया कि वे आगामी शनिवार की सभा में अवश्य भाग लेंगे।

बीस-पच्चीस कोस के दायरे में जितने भी कारखाने थे उनमें यह खबर दावाग्नि की भांति फैल गई।

सुमित्रा को बहुतों ने अभी तक नहीं देखा है, लेकिन उसके रूप और शक्ति की ख्याति जब उन लोगों तक पहुंची तब अशिक्षित मजदूरों में भी सहसा एक जागृति सी दिखाई देने लगी। यह निश्चय हो गया कि एक दिन का नागा करके शनिवार को फायर मैदान में एक-एक मजदूर उपस्थित होगा। उसकी वाणी और उपदेशों में यदि ऐसा कोई पारस पत्थर हो जिससे गरीब मजदूरों का दुखी जीवन रातोरात एकाएक अतिशबाजी के तमाशे की तरह चमक उठे। तो फिर जिस तरह हो सके वह दुर्लभ वस्तु उन्हें प्राप्त कर लेनी चाहिए।

उस दिन भाषण कर्ताओं के अभाव में अपूर्व को भी बाध्य होकर दो-चार बातें कहनी पड़ी थीं। बोलने की आदत तो थी नहीं और जो कुछ कहा भी उसको ठीक तरह से न कह सका। इसके लिए वह मन ही मन लज्जित हुआ।

लेकिन आज अचानक खबर मिली कि उस दिन की सभा निष्फल नहीं हुई। बल्कि उसका फल यह हुआ कि अगली सभा में सभी कारखानों में काम बन्द करके कारीगरों मजदूरों के दलों ने उपस्थित होने का संकल्प कर लिया है—तब गर्व तथा आतम प्रशंसा के आनन्द से उसका हृदय रह

रहकर फूल उठने लगा। उस दिन वह अच्छी तरह भाषण न दे सका था। लेकिन प्रशंसा के साथ आगामी सभा में भाषण देने का निमन्त्रण पाकर वह चंचल हो उठा।

दोपहर के भोजन पर उसने रामदास को यह बात बता दी। एक दिन अपूर्व के लिए रामदास ने भारती का अपमान किया था, उस दिन से भारती के सम्बन्ध में उससे बात करते हुए अपूर्व को संकोच होता था। इन दिनों अपूर्व उस गृहहीन लड़की से चुपके-चुपके जीवन में कितने बड़े काव्य, कितने बड़े सुख-दुख के इतिहास का निर्माण कर चुका था इसकी उसे कोई सूचना नहीं दी थी। आज पुलक और रोमांच की अधिकता से अपूर्व ने सारी बातें बतायीं। भारती, सुमित्रा, डाक्टर साहब, नवतारा। यहां तक कि उस शराबी का भी उल्लेख कर दिया। अपने पथ के दावेदार के कार्यक्रमों और उपदेशों का वर्णन करते हुए उस दिन लाइन वाले कमरे के अभियान का विवरण भी दे दिया।

रामदास ने कोई प्रश्न नहीं किया। एक दिन देश के इस व्यक्ति को जेल जाना पड़ा है। बेंतों की मार खानी पड़ी है। और न जाने क्या-क्या दुख भोगने पड़े हैं। केवल एक दिन के अतिरिक्त और किसी दिन रामदास ने कोई बात नहीं बताई। आज सुमित्रा के पत्र को रामदास के सामने रखकर स्वयं को पथ के दावेदारों का एक विशिष्ट सदस्य बताकर उसने देश के काम के लिए नियोजित अपने जीवन का वर्णन किया।

पत्र पढ़कर तलवलकर बोला, "बाबूजी, ये सारी बातें आपने पहले मुझ से कभी नहीं कहीं?"

"कहने से क्या आप हमारा साथ देंगे?"

"कैसी बातें कर रहे हैं? मुझे तो आपने सहयोग के लिए आमन्त्रित किया नहीं।"

"उसके स्वर में आहत अभिमान की झंकार, अत्यंत स्पष्ट होकर उसके कानों में गूंज उठी। जल्दी से बोला, "इसका कारण है रामदास बाबू। इन कामों में कितना बड़ा दायित्व है और कितनी आशंकाएं यह आप जानते हैं। आप विवाहित हैं। एक पुत्री के पिता हैं, इसीलिए इस आग में मैंने आपको बुलाना उचित नहीं समझा।"

"गृहस्थों को क्या देश सेवा का अधिकार नहीं? जन्मभूमि क्या आप लोगों की ही है?"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "मैंने तो ऐसा नहीं कहा। मैंने तो केवल यह कहा है कि दूसरी जगह आपकी जिम्मेदारियां अधिक हैं, इसलिए विदेश में इतनी बड़ी विपत्ति में पड़ना उचित नहीं।"

"शायद यही हो। लेकिन पराधीन देश की सेवा करने को तो विपत्ति नहीं कहते अपूर्व बाबू। हिन्दुओं में विवाह एक धर्म है मातृ भूमि की सेवा करना उससे बड़ा धर्म है। एक धर्म दूसरे में बाधा देगा, अगर मैं यह जानता तो कभी विवाह न करता।"

उसके चेहरे की ओर देख कर अपूर्व ने प्रतिवाद नहीं किया। मौन हो गया। लेकिन उसने इस तर्क का समर्थन भी नहीं किया। देश के काम में इस व्यक्ति ने अनेक कष्ट सहे हैं। आज भी उसके भीतर का तेज एकदम बुझा नहीं है। सामान्य प्रसंग से ही वह एकदम उत्तेजित हो उठा है। यह सोचते ही अपूर्व श्रद्धा से झुक गया।

लेकिन उसे यह आशा नहीं थी कि बुलाने से ही वह पत्नी-पुत्री की माया छोड़कर पथ के दावेदार का सदस्य बन जायेगा। देश सेवा के अधिकार की उसकी स्पर्द्धा इन कई दिनों से बहुत ऊंची हो गई थी। सहसा इस प्रसंग को बन्द करते हुए उसने आगामी सभा के कारण और उद्देश्यों का वर्णन न करते हुए बताया कि उस दिन को छोड़कर जीवन में और कभी उसने भाषण नहीं दिया। सुमित्रा के निमन्त्रण की वह उपेक्षा नहीं कर सकता। लेकिन एक ही बात बहुत से लोगों को सुना सके ऐसी भाषा का उसे अभ्यास नहीं था।

तलवलकर ने पूछा, "तो फिर क्या कीजिएगा ?"

अपूर्व ने कहा, "जीवन में कारखाना देखने का मुझे एक बार ही अवसर मिला था जिस पर भाषण दिया जा सकता है। उस कारखाने के अधिकांश मजदूर जानवरों जैसी जिन्दगी बिताते हैं। यह मैं स्वयं अनुभव कर आया हूं। लेकिन न जाने क्यों, इस विषय में मैं तो कुछ भी नहीं जानता।"

रामदास ने हंसते हुए कहा, "फिर भी क्या आपको बोलना जरूरी है? न बोलें तो क्या कोई हानि है ?"

अपूर्व मौन रहा।

रामदास बोला, "लेकिन मैं इन लोगों की बातें जानता हूं।"

"कैसे जाना ?"

"इन लोगों के बीच में बहुत दिनों तक रह चुका हूं अपूर्व बाबू। मेरी नौकरी के प्रमाण पत्रों को देखते ही समझ जायेंगे कि मैं देश के कल-कारखानों और कुली-मजदूरों के बीच ही जीवन बिताता रहा हूं। अगर आज्ञा हो तो वह करुण कहानी आपको सुना सकता हूं। वास्तव में इन लोगों को देखे बिना देश की वास्तविक स्थिति का ज्ञान हो ही नहीं सकता।"

अपूर्व ने कहा, "सुमित्रा भी ठीक यही बात कहती हैं।"

"बिना कहे उपाय नहीं है। और जानते हैं, इसीलिए तो वे पथ को दावेदारों की अध्यक्षा हैं। बाबूजी, आत्मत्याग का आरम्भ यहीं से है। देश की नींव इन्हीं पर आधारित है। उनकी पूरी जानकारी रहने से आपका सारा उद्यम, सारी इच्छाएं, मरुभूमि की भांति दो दिन में सूख जायेंगी।"

ये बातें अपूर्व के लिए नई नहीं थीं। लेकिन रामदास के हृदय से निकलने वाले शब्द उसके हृदय पर गहरा आघात करने लगे।

रामदास और न जाने क्या कहने जा रहा था कि तभी पर्दा हटाकर साहब के प्रवेश करते ही दोनों चकित होकर खड़े हो गये। साहब ने अपूर्व की ओर देखते हुए कहा, "मैं जा रहा हूं। आपकी मेज पर एक पत्र रख आया हूं। ले लीजिएगा।"

सोलह

साहब के जाने के बाद आफिस जल्दी ही बन्द करके दोनों फायर मैदान की ओर चल दिए। उस ओर गाड़ी नहीं जाती थी इसलिए कुछ तेज चलना पड़ा। रास्ते में अपूर्व ने कोई बात नहीं कही। उसके जीवन का आज एक विशेष दिन था। वह आशंका और आनन्द की उत्तेजना दोनों के बीच बहा जा रहा है। कारीगरों और कुली मजदूरों के सम्बन्ध में कुछ तो एक पुस्तक से और कुछ रामदास से उसने मसाला इकट्ठा कर लिया था। उन सबको मन-ही-मन बटोरते-सजाते हुए अपूर्व चुपचाप चलने लगा।

सन 1763 में बम्बई में किसी स्थान पर पहले-पहल रुई का कारखाना खुला था। उसके बाद से उनकी संख्या बढ़ते-बढ़ते आज कितनी हो गई है। उस समय कुली-मजदूरों की कितनी शोचनीय दशा थी। उन्हें रात दिन मेहनत करनी पड़ती थी। उसके कारण विलायत के मिल मालिकों के साथ भारत के मिल मालिक का विवाद कब आरम्भ हुआ था और कारखाने का कानून किस किस सन में, किस तारीख को कौन-कौन सी बाधाओं का सामना करते हुए पास हुआ, इस देश में पहले-पहल प्रचलित हुआ और इस समय वह कानून परिवर्तित होकर किस स्थिति में

है। उस समय और अब विलायत और भारत में मजदूरी की दर क्या है। उन सबकी यूनियन बनाने की कल्पना कब और किसने प्रस्तुत की थी और उसका फल क्या हुआ था, उस देश के और इस देश के मजदूरों के बीच भले-बुरे व्यवहारों की तुलना करने से क्या पता चलता है और लाभ तथा हानि का परिणाम उसमें कहां पर निर्दिष्ट हुआ है—आदि—उसने जो विवरण इकट्ठे किए हों वे कहीं छूट न जाएं इस भय से उसने स्वयं को सतर्क कर लिया।

सुमित्रा की दूरगामी दृष्टि उसे स्पष्ट दिखाई देने लगी। और भारती—इतने थोड़े से समय में इतना ज्ञान, और इतनी जानकारी उसने कैसे प्राप्त कर ली। हर्ष भरे विस्मय से उसका चेहरा चमक उठा, आंखें भीग गयीं।

मैदान में पहुंचकर उन लोगों ने देखा, वहां तिल रखने के लिए भी स्थान नहीं है। कितने लोग इकट्ठे हुए हैं, कोई सीमा नहीं है। उस दिन जिन लोगों ने अपूर्व को वक्ता के रूप में देखा था उन लोगों ने उसे रास्ता दे दिया था। जो लोग नहीं पहचानते थे वे भी उनकी देखा-देखी हट गए।

अपार जन समूह के बीचोंबीच मंच बना हुआ था। आज भी डाक्टर लौटे नहीं थे। उनके अतिरिक्त पथ के दावेदार के सभी सदस्य उपस्थित थे। मित्र को साथ लेकर किसी प्रकार भीड़ को ठेलता हुआ अपूर्व वहां पहुंचा। अच्छे वक्ता से जनता युक्ति और तर्क नहीं चाहती। जो बुरा है, वह बुरा क्यों है, इससे उसे कोई सरोकार नहीं होता। उसे बस इतना सुन-कर ही सन्तुष्टि हो जाती है कि जो बुरा है वह कितना बुरा हो सकता है। पंजाबी मिस्त्री के भयंकर भाषण में यही गुण अधिक मात्रा में था। इसी-लिए श्रोता अत्यधिक उत्तेजित हो उठे थे।

उसी समय हंगामा मच गया। एक कोने में बहुत से लोग एक दूसरे के साथ धक्का-मुक्की करते हुए भागने की कोशिश करने लगे। भीड़ को कुचलते-रौंदते बीस-पच्चीस गोरे पुलिस घुड़सवार तेजी से चले आ रहे थे। सभी के एक हाथ में लगाम थी, दूसरे हाथ में चाबुक और कमर में पिस्तौल। जो व्यक्ति भाषण दे रहा था उसकी गरजती आवाज कब थम गई और वह मंच के नीचे भीड़ में धंसकर कहां गुम हो गया कुछ भी समझ में नहीं आया।

गोरे घुड़सवारों का नायक मंच के निकट आया। चीखकर बोला, "मीटिंग बन्द करो।"

सुमित्रा अभी तक पूरी तरह स्वस्थ नहीं हो पाई थी। उसके दुर्बल

उदास चेहरे पर एक पीली छाया डोल गई। उसने जल्दी से उठकर पूछा, "क्यों ?"

"आज्ञा है ?"

"किस की ?"

"सरकार की।"

"किसलिए ?"

"हड़ताल करने के लिए मज़दूरों को भड़काना मना है।"

सुमित्रा बोली, "मजदूरों को बेकार भड़काकर तमाशा देखने के लिए हमारे पास समय नहीं है। यूरोप आदि देशों की तरह इन लोगों को संगठित होने की आवश्यकता को समझाना ही इस संस्था का उद्देश्य है।"

साहब चकित होकर बोला, "संगठित करना ? काम के विरुद्ध ? यह तो इस देश के लिए भयानक गैर कानूनी काम होगा इससे तो निश्चित रूप से शान्ति भंग हो जायगी।"

सुमित्रा बोली, "हां हो सकती है। जिस देश में सरकार का अर्थ ही अंग्रेजी उद्योगपति हो और सारे देश के खून को चूसने के लिए जिन्होंने यह भयंकर यन्त्र खड़ा किया हो—?"

बात पूरी भी न हो पाई थी कि गोरे की लाल आंखों से आग बरसने लगी। कड़ककर बोला, "फिर ऐसी बातें अगर मुंह से निकालीं तो मुझे आपको गिरफ्तार करना पड़ेगा।"

सुमित्रा उसकी ओर देखकर हंसकर बोली, "साहब, मैं बीमार और कमजोर हूं। नहीं तो केवल दूसरी बार ही नहीं इस बात को एक सौ बार चिल्ला-चिल्लाकर इन लोगों को सुना देती। लेकिन आज मुझमें वह ताकत नहीं है।" इतना कहकर वह फिर हंस पड़ी।

उस बीमार और दुर्बल नारी की सरल-शान्त हंसी के सामने साहब मन ही मन लज्जित हो उठा। बोला, "आलराइट, आपको सावधान किए देता हूं। मुझे मीटिंग बन्द करने का आदेश है, भंग करने का नहीं। दस मिनट में इन सबको शान्तिपूर्वक चले जाने को कहिए। और फिर कभी ऐसा न कीजिए।"

कई दिनों से सुमित्रा ने कुछ खाया नहीं था। सब लोगों के मना करने पर भी बुखार में ही सभा में चली आई थी। उसने अपूर्व से कहा, "अपूर्व बाबू, केवल दस मिनट का समय और है। चिल्ला-चिल्लाकर सबको बता दीजिए कि एकजुट होने के सिवा इसका और कोई उपाय नहीं है। कारखाने के लोगों ने आज हम लोगों का जैसा अपमान किया है, अगर तुम अपने आपको इन्सान समझते हो तो इसका बदला जरूर लेना।"

कहते-कहते उसकी कमजोर आवाज फट सी गई।

लेकिन सभा की अध्यक्षा का ऐसा उपदेश सुनकर अपूर्व का चेहरा सूख गया। बेचैनी से सुमित्रा की ओर ताकते हुए बोला, "उत्तेजित करना गैर-कानूनी नहीं होगा ?"

सुमित्रा विस्मित होकर मधुर स्वर में बोली, "पिस्तौल के बल पर सभा को भंग कर देना क्या कानून-संगत है ? बेकार खून-खराबा मैं नहीं चाहती। लेकिन इस बात की आप पूरी शक्ति से घोषणा कर दें कि आज के अपमान को मजदूर बिल्कुल न भूलें।"

पथ के दावेदार के जो चार-पांच पुरुष सदस्य मंच पर बैठे थे, उनके चेहरों से ही पता चल रहा था कि वे बहुत ही मामूली और निम्न श्रेणी के लोग हैं। शायद कारीगर या इसी प्रकार के लोग थे। अपूर्व नया होते हुए भी समिति का शिक्षित तथा विशिष्ट सदस्य था। इतनी बड़ी भीड़ को सम्बोधित करने का भार इसीलिए उस पर आ पड़ा था। उसने सूखे गले से कहा, "मैं तो हिन्दी अच्छी तरह बोल नहीं सकता।"

सुमित्रा बोल नहीं सकती थी। विवश होकर कहने लगी, "जो कुछ भी जानते हैं वही दो शब्दों में कह दीजिए अपूर्व बाबू। समय बर्बाद मत कीजिए।"

अपूर्व ने सबकी ओर देखा। भारती मुंह फेरे खड़ी थी। इसलिए उसका अभिमत समझ में नहीं आया। लेकिन गोरे नायक के मन का भाव समझ में आ गया। अपूर्व बोलने के लिए उठ खड़ा हुआ। उसके होंठ कांप उठे। लेकिन उन कांपते होठों से बंगला, अंग्रजी या हिन्दी किसी भी भाषा का एक भी शब्द नहीं निकला।

तलवलकर उठ खड़ा हुआ। सुमित्रा की ओर देखकर बोला, "मैं बाबू जी का मित्र हूं और हिन्दी जानता हूं। यदि आज्ञा हो तो मैं उनका वक्तव्य चिल्ला-चिल्लाकर सबको सुना दूं।"

भारती ने मुंह घुमा कर देखा। सुमित्रा आश्चर्य से देखती चुपचाप बैठी रहीं। और उन दोनों नारियों की घूरती आंखों के सामने लज्जित, अभिभूत, वाक्यहीन अपूर्व स्तब्ध, मुंह नीचा किए जड़वत बैठ गया।

रामदास ने ऊंची आवाज में कहा, "भाइयो, मुझे बहुत सी बातें कहनी थीं। लेकिन इन सबने बलपूर्वक हम लोगों का मुंह बन्द कर दिया है।" इतना कहकर उसने पुलिस के घुड़सवारों की ओर संकेत किया, "इन विलायती कुत्तों को, जिन्होंने हमारे और तुम्हारे विरुद्ध ललकारा है, वे तुम्हारे कारखानों के मालिक हैं, वे नहीं चाहते कि कोई तुम्हें तुम्हारी दुःख-दुर्दशा के बारे में बताए। तुम उनके कारखाने चलाने और बोझा

ढोने वाले जानवर हो। लेकिन तुम भी उन्हीं जैसे मनुष्य हो। उसी प्रकार पेट भर भोजन करने का, उसी प्रकार आनन्द करने का अधिकार भगवान ने तुम्हें भी दिया है। अगर इस सत्य को समझ सको कि तुम लोग भी मनुष्य हो, तुम भले ही कितने ही दुखी, कितने ही दरिद्र और कितने ही अनपढ़ क्यों न हो, फिर भी मनुष्य हो—तुम्हारी मनुष्यता के दावे को कोई भी किसी भी बहाने नकार नहीं सकता। ये चन्द कारखानों के मालिक तुम्हारे सामने कुछ भी नहीं है। यह पूंजीपतियों के विरुद्ध गरीबों की आत्मरक्षा की लड़ाई है। इसमें देश नहीं है, जाति नहीं है, धर्म नहीं है, मतवाद नहीं है, हिन्दू नहीं है, मुसलमान नहीं है। जैन, सिख कुछ भी नहीं है—केवल है धन में उन्मत्त मालिक और मजदूर! तुम्हारी शारीरिक शक्ति से वे डरते हैं। तुम्हारी शिक्षा की शक्ति को वे संशय की नजर से देखते हैं। तुम लोगों के ज्ञान पाने की आशंका से उनका खून सूख जाता है। अक्षय, दुर्बल, मूर्ख—तुम लोग ही तो उनके विलास-व्यसन के एक मात्र सहारे हो। इस सत्य को गांठ बांधना क्या तुम लोगों के लिए कठिन काम है? और इन्हीं बातों को स्पष्ट शब्दों में कहने के अपराध में, क्या आज इन गोरों के सामने हमारे अपमान की कोई सीमा रहेगी? गरीबों की आत्मरक्षा की लड़ाई में क्या तुम लोग अपनी पूरी शक्ति न जुटा सकोगे?"

गोरा नायक भाषण का अर्थ नहीं समझा, लेकिन श्रोताओं के चेहरों और आंखों में मचलती उत्तेजना देखकर उत्तेजित हो उठा। अपनी रिस्ट-वाच की ओर वक्ता का ध्यान आकर्षित करते हुए बोला, "और पांच मिनट का समय है। जल्दी खत्म कीजिए।"

तलवलकर ने कहा, "केवल पांच मिनट—इससे जरा भी अधिक नहीं मेरे वंचित भाइयो। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं कि हम लोगों पर कभी अविश्वास मत करना। पढ़ा-लिखा कहकर, उच्च वंश का कहकर—कारखाने में मजदूरी नहीं करता—इन बातों से हम लोगों पर सन्देह करके तुम अपना ही सर्वनाश कर बैठोगे। तुम लोगों को नींद से जगाने के लिए पहली शंखध्वनि सभी देशों में और प्रत्येक काल में हम लोग ही करते आए हैं। आज शायद इस बात को न भी समझ सको। लेकिन इतना निश्चय समझो कि इन पथ के दावेदारों से बढ़कर तुम लोगों का मित्र इस देश में और कोई नहीं है।"

उसकी आवाज सूखी और कठोर होती जा रही थी। फिर भी जीजान से चिल्लाकर कहने लगा, "मैं बहुत दिनों तक तुम लोगों के बीच रहकर काम कर चुका हूं। हम लोगों को तुम लोग नहीं पहचानते लेकिन मैं तुम

सबको पहचानता हूं । जिनको तुम लोग मालिक कहते हो, एक दिन मैं भी उन्हीं में से एक था । ये मालिक किसी भी तरह तुम्हें इन्सानों की तरह नहीं रहने देंगे । तुम्हें पशुओं की तरह रखकर ही वे तुम्हारे मनुष्यत्व के अधिकार को रोक सकते हैं । और किसी दशा में नहीं । तुम लोग बदमाश हो, उच्छृंखल हो, चरित्रहीन हो, उनके मुंह से ये गालियां ही तुम हमेशा से सुनते आ रहे हो इसलिए जब कभी तुम लोगों ने अपने दावे को प्रगट किया तभी तुम लोगों के सभी प्रकार के दुख और कष्टों की जड़ में तुम लोगों के असंयत चरित्र को ही जिम्मेदार ठहराते हुए वे तुम्हारी हर प्रकार की उन्नति को रोकते आए हैं । केवल इस झूठ को ही वे हमेशा तुमको समझाते आए हैं कि स्वयं भला न बनने पर किसी भी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती । लेकिन आज मैं तुम लोगों से निस्संकोच और साफ-साफ कह देना चाहता हूं कि उनका यह कहना सम्पूर्ण सत्य नहीं है । केवल तुम लोगों का चरित्र ही तुम्हारी अवस्था के लिए दोषी नहीं है । उनके असत्य का आज तुम लोगों को निर्भीक बन कर विरोध करना ही पड़ेगा । ऊंची आवाज़ से तुम लोगों को यह घोषणा करनी ही पड़ेगी कि रुपया ही सब कुछ नहीं है ।"

कहते-कहते उसकी नीरस आवाज़ तेज हो उठी । फिर कहने लगा, "बिना मेहनत के संसार में कुछ पैदा नहीं होता । इसलिए मजदूर भी तुम लोगों की तरह मालिक है ।—ठीक तुम लोगों की तरह सभी चीजों और सभी कारखानों का अधिकारी है ।"

तभी एक पंजाबी के गोरे नायक के कान में कुछ कहते ही उसकी लाल-लाल आंखें अंगारों की तरह जल उठीं । उसने गरजते हुए कहा, "स्टाप, नहीं चलेगा । इससे शान्ति भंग होगी ।"

अपूर्व चौंक पड़ा । रामदास के कुर्ते को पकड़कर खींचातानी करने लगा, "ठहरो रामदास, ठहरो । इस निस्सहाय मित्रहीन पराये देश में तुम्हारी पत्नी है, एक छोटी बेटी है ।"

रामदास ने कुछ भी नहीं सुना । चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा, "ये लोग अन्यायी हैं, डरपोक हैं । किसी भी दशा में सत्य को तुम लोगों को सुनने देना नहीं चाहते । लेकिन ये लोग नहीं जानते कि सत्य का गला घोंटकर भी उसकी हत्या नहीं की जा सकती । वह अमर होता है । कभी नहीं मरता ।"

गोरे ने इसका अर्थ नहीं समझा । लेकिन अचानक सैकड़ों लोगों के सर्वांग से छिटककर तीक्ष्ण उत्तेजना की भभक उसके मुंह पर लगी । हुंकार कर बोला, "यह नहीं चलेगा । यह राजद्रोह है ।"

पलक मारते ही, पांच-छै घुड़सवार घोड़ों से कूदकर रामदास के

दोनों हाथों को पकड़कर जोर से खींचते हुए नीचे ले गए। उसका दीर्घ शरीर घोड़ों और घुड़सवारों के बीच देखते-देखते ओझल हो गया। लेकिन उसकी तेज़ और ऊंची आवाज़ बन्द नहीं हुई। आवाज़ उत्तेजित अपार भीड़ के एक छोर से दूसरे छोर तक गूंजने लगी, "भाइयो अब मुझसे आप लोगों की भेंट कभी नहीं होगी। लेकिन मनुष्य होकर जन्म लेने की मर्यादा अगर अपने मालिकों के पैरों की नीचे न कुचलवा चुके होंगे तो इतने बड़े उत्पीड़न, इतने बड़े अपमान को कभी बर्दाश्त मत करना।"

लेकिन उसकी बातें समाप्त होते-न-होते मानो दक्ष यज्ञ आरम्भ हो गया। घोड़े दौड़ने लगे। चाबुक कसने लगे। अपमानित, अभिभूत और अस्त-व्यस्त मजदूर जान बचाकर भाग खड़े हुए। कौन किस पर गिरा और कौन किसके पैरों के नीचे कुचल गया कोई ठिकाना नहीं रहा।

कुछ घायल चोट खाए व्यक्तियों को छोड़कर सारा मैदान सूना होने में देर नहीं लगी। किसी तरह लंगड़ाते हुए जो लोग इस समय भी इधर-उधर भागे जा रहे थे स्तब्ध बैठी सुमित्रा उनकी ओर एकटक देख रही थी। उनसे कुछ ही दूरी पर अपूर्व बैठा था। एक ओर महिला इसी तरह सिर झुकाए विमूढ़-सी बैठी थी।

जो व्यक्ति गाड़ी लाने गया था। दस मिनट बाद गाड़ी लेकर आ गया। सुमित्रा भारती का हाथ पकड़कर धीरे-धीरे जाकर उसमें बैठ गई। आज वह बहुत ही अस्वस्थ, उत्पीड़ित और थकी हुई दिखाई दे रही थी।

भारती ने कहा, "चलिए।"

अपूर्व ने अपना मुंह ऊपर उठाकर कुछ देर तक न जाने क्या सोचकर पूछा, "मुझे कहां चलने को कह रही हो?"

भारती ने कहा, "मेरे घर।"

अपूर्व कुछ देर चुप रहा। फिर धीरे से बोला, "आप लोग तो जानती हैं कि मैं समिति के लिए कितना अयोग्य हूं। वहां मेरे लिए कोई स्थान नहीं हो सकता।"

भारती ने पूछा, "तो फिर इस समय कहां जायेंगे, डेरे पर?"

"डेरे पर? एक बार जाना होगा," इतना कहते ही अपूर्व की आंखें सजल हो उठीं। किसी तरह आंसुओं को संभालते हुए बोला, "लेकिन इस विदेश में और कहां जाऊं, समझ नहीं पा रहा भारती।"

गाड़ी में से सुमित्रा ने कहा, "तुम लोग आओ।"

भारती ने फिर कहा, "चलिए।"

अपूर्व बोला, "पथ के दावेदारों में मेरे लिए स्थान नहीं है।"

भारती उसका हाथ पकड़ने जा रही थी लेकिन अपने आपको संभाल

कर एक पल उसके चेहरे पर आंखें टिकाकर धीमे से बोली, "पथ के दावेदारों में स्थान भले ही न हो लेकिन और एक दावे से आपको वंचित कर सके संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है अपूर्व बाबू।"

गाड़ी में से सुमित्रा ने झल्लाकर पूछा, "तुम लोगों के आने में क्या देर होगी भारती ?"

भारती ने हाथ हिलाकर गाड़ीवान को जाने का इशारा करते हुए कहा, "आप जाइए। हम लोग पैदल जायेंगे।"

रास्ते में चलते-चलते अपूर्व ने अचानक कहा, "भारती तुम मेरे साथ चलो न।"

भारती ने कहा, "साथ ही तो चल रही हूं।"

अपूर्व बोला, "यह बात नहीं, तलवलकर की पत्नी से जाकर क्या कहूंगा ? मेरी समझ में नहीं आ रहा। रामदास को यहां लाने की दुर्बुद्धि क्यों हुई ?"

भारती चुप रही।

अपूर्व कहता गया, "अचानक कितना बड़ा अनर्थ हो गया। अब अपना कर्तव्य मेरी समझ में नहीं आ रहा।"

भारती फिर भी मौन रही।

कुछ देर बाद बेचैन होकर अपूर्व गरज उठा, "मेरा क्या दोष है। बार-बार सावधान करने पर भी कोई गले में डोरी बांधकर झूले तो उसे मैं किस तरह बचाऊंगा ? पत्नी है, लड़की है, घर-गृहस्थी है—जिसे यह होश नहीं, वह मरेगा नहीं तो और कौन मरेगा ? और दो वर्ष की सजा भुगतने दो।"

"आप क्या उनकी पत्नी के पास इस समय नहीं जायेंगे!"

अपूर्व बोला, "जाऊंगा क्यों नहीं। लेकिन कल साहब को क्या उत्तर दूंगा। मैं कहे देता हूं भारती, साहब ने एक बात भी कही तो मैं नौकरी छोड़ दूंगा।"

"नौकरी छोड़कर क्या कीजिएगा ?"

"घर चला जाऊंगा। इस देश में इन्सान नहीं रहते।"

"उनके उद्धार का प्रयत्न नहीं करेंगे ?"

अपूर्व झट बोल उठा, "चलो किसी अच्छे बैरिस्टर के पास चलें भारती। मेरे पास एक हजार रुपए हैं। क्या इनसे काम न चलेगा ? मेरी घड़ी आदि जो चीजें हैं उनसे बेचने पर पांच छै सौ रुपये मिल सकते हैं।"

भारती बोली, "लेकिन सबसे पहली आवश्यकता है उनकी पत्नी के पास जाने की। मेरे साथ मत चलिए। यहीं से गाड़ी लेकर स्टेशन चले

जाइए। उनको क्या चाहिए, क्या अभाव है कम से कम पूछने की ज़रूरत तो है।" मैं अकेली चली जाऊंगी। आप चले जाइए।"

अपूर्व कुछ हिचककर बोला, "मैं अकेला न जा सकूंगा।"

भारती बोली, "डेरे से तिवारी को साथ ले लेना।"

"नहीं तुम मेरे साथ चलो।"

"मुझे ज़रूरी काम है।"

"काम रहने दो। मेरे साथ चलो।"

"लेकिन मुझे इस मामले में क्यों डाल रहे हैं अपूर्व बाबू।"

अपूर्व चुप रहा।

भारती हंस पड़ी। बोली, "अच्छा, चलिए मेरे साथ। पहले अपना काम पूरा कर लूं।"

रास्ते में अचानक भारती बोली, "जिसने आपको नौकरी करने के लिए विदेश में भेजा है उसमें आपको पहचानने की बुद्धि नहीं है। वे अगर आपकी मां ही क्यों न हों। तिवारी देश जा रहा है। कोशिश करके आपको भी उसके साथ भेज दूंगी।"

अपूर्व मौन ही रहा।

"आपने उत्तर नहीं दिया।"

"उत्तर देने की आवश्यकता ही नहीं है। मैं गृहस्थी में न रहता तो मैं संन्यासी हो जाता।"

भारती बोली, "संन्यासी ? लेकिन मां तो जीवित है ?"

अपूर्व बोला, "हां, देश के एक छोटे से गांव में हम लोगों का एक छोटा-सा मकान है। मां को वहीं ले जाऊंगा।"

"उसके बाद ?"

"मेरे पास जो हज़ार रुपए हैं उन्हीं से छोटी-सी दुकान खोल लूंगा। उसी से हम दोनों का खर्च चल जायगा।"

भारती बोली, "खर्च तो चल सकता है। लेकिन अचानक इसकी आवश्यकता कैसे आ पड़ी ?"

अपूर्व बोला, "आज मैं अपने को पहचान सका हूं। मां के अतिरिक्त इस संसार में मेरा कहीं कोई मूल्य नहीं है।"

भारती ने एक पल उसके मुंह की ओर देखकर पूछा, "मां शायद आप को बहुत प्यार करती है ?"

अपूर्व बोला, "हां। हमेशा से मां का जीवन दुख ही दुख में बीता है। मैं डरता हूं कहीं यह दुख और न बढ़ जाए। मेरा आधार मां है। इसीलिए

मैं डरपोक हूं। सभी की अश्रद्धा का पात्र हूं।" यह कहकर उसके मुंह से लम्बी सांस निकल गई।

भारती ने कोई उत्तर नहीं दिया। अपूर्व का हाथ पकड़े चुपचाप चलती रही।

अपूर्व ने चिन्तित होकर पूछा, "रामदास के परिवार का क्या उपाय करोगी?"

भारती स्वयं कुछ नहीं समझ सकी थी। फिर भी साहस बढ़ाने के लिए बोली, "चलिए तो, जाकर देखेंगे। कुछ न कुछ उपाय तो किया ही जायगा।"

"तुमको शायद वहां रहना पड़े।"

"लेकिन मैं तो ईसाई हूं। उन लोगों के किस काम आऊंगी?"

भारती की यह बात अपूर्व को चुभी।

दोनों जब घर पहुंचे शाम ढल चुकी थी। इस रात किस तरह क्या करना होगा, यह सोचकर उन लोगों के भय की सीमा नहीं थी। अन्दर कदम रखते ही भारती ने देखा, उस ओर की खिड़की के पास कोई आराम कुर्सी पर लेटा हुआ है। देखते ही भारती पहचानकर उल्लसित स्वर में बोल उठी, "डाक्टर साहब, आप कब आए? सुमित्राजी से भेंट हुई?"

"नहीं।"

अपूर्व ने कहा, "आज भयंकर कांड हो गया डाक्टर साहब। हमारे एकाउन्टेंट तलवलकर बाबू को पुलिस पकड़ ले गई।"

भारती बोली, "इनसिन में उनका घर है। वहीं उनकी पत्नी है, बेटी है। अभी तक उन्हें समाचार तक नहीं मिला।"

अपूर्व ने कहा, "यह कैसी भयानक आपत्ति आ पड़ी डाक्टर साहब—?"

डाक्टर हंसकर बोले, "भारती, मैं बहुत ही थका हुआ हूं। मुझे चाय बनाकर पिला सकती हो बहिन?"

"क्यों नहीं? लेकिन हम लोगों को अभी बाहर जाना है।"

"कहां?"

"इनसिन। तलवलकर बाबू के घर।"

"कोई ज़रूरत नहीं।"

अपूर्व ने आश्चर्य से कहा, "जरूरत कैसे नहीं डाक्टर साहब?"

डाक्टर हंसकर बोले, "लेकिन इसका भार तो मेरे ऊपर है। आप बैठिए। तब तक भारती चाय बनाकर लाए, होटल का ब्राह्मण रसोइया पवित्रता के साथ खाने की कुछ चीज तैयार करके दे जाए। खा-पीकर

आप आराम कीजिए।"

अपूर्व बोला, "इस रात को तो कष्ट उठाने से तुम बच गईं भारती, लेकिन मेरी जिम्मेदारी—कैसी ही रात क्यों न हो, गए बिना पूरी नहीं होगी।"

भारती ठिठक कर खड़ी हो गई। लेकिन तभी डाक्टर के मुंह की ओर देखकर वह फिर अपना काम करने के लिए चली गई।

डाक्टर साहब मोमबत्ती जलाकर पत्र लिखने लगे।

दस मिनट तक प्रतीक्षा करके अपूर्व झुंझलाकर उत्कंठित हो उठा। उसने पूछा, "क्या ये पत्र बहुत ही आवश्यक है?"

डाक्टर ने कहा, "हां।"

अपूर्व बोला, "उधर की कुछ व्यवस्था हो जाना भी तो कम आवश्यक नहीं है। क्या आप उनके घर किसी को न भेजिएगा?"

डाक्टर ने कहा, "इतनी रात को वहां जाने के लिए कोई आदमी नहीं मिलेगा।"

अपूर्व बोला, "तब उसके लिए आप चिन्ता न करें। सबेरे मैं खुद ही चला जाऊंगा। आप भारती को मना न करते तो हम अभी चले जाते।"

डाक्टर लिखते-लिखते बोले, "इसकी आवश्यकता नहीं थी।"

अपूर्व ने कहा, "आवश्यकता की धारणा इस विषय में मेरी और आपकी एक नहीं है। वह मेरा मित्र है।"

चाय का सामान लेकर भारती नीचे उतर आई और चाय बनाकर पास बैठ गई। डाक्टर का पत्र लिखना और चाय पीना, दोनों काम साथ-साथ चलने लगे।

दो-तीन मिनट बाद भारती रूठने के अन्दाज में बोली, "आप हमेशा व्यस्त रहते हैं। दो-चार मिनट आपके पास बैठकर बातचीत कर सकूं। इसके लिए आप मुझे समय ही नहीं देते।"

डाक्टर ने चाय के प्याले से मुंह हटाकर हंसते हुए कहा, "क्या करूं बहिन। इस दो बजे की ट्रेन से मुझे जाना है।"

भारती चौंक पड़ी। और अपूर्व के मन में अपने मित्र के प्रति संशय और भी बढ़ गया। भारती ने पूछा, "क्या एक रात के लिए भी आपको विश्राम नहीं मिलेगा?

डाक्टर बोला, "मुझे केवल एक दिन छुट्टी मिलेगी भारती, लेकिन वह दिन आज नहीं है।"

भारती समझ न सकी। इसलिए उसने पूछा, "वह समय कब आयेगा?"

डाक्टर ने इसका उत्तर नहीं दिया।

अपूर्व बोला, "समिति का सदस्य न होते हुए भी रामदास सज़ा भुगतने जा रहा है। उचित नहीं है यह।"

डाक्टर ने कहा, "सजा नहीं भी हो सकती है।"

अपूर्व ने कहा, "न हो तो उसका भाग्य है। लेकिन अगर हो गई तो वह अपराध मेरा होगा। इस संकट में मैं ही उसे लाया था।"

डाक्टर केवल मुस्करा दिए।

अपूर्व बोला, "देश के लिए जिसने दो वर्ष की सजा भोगी है। असंख्य बेंतों के दाग जिसकी पीठ से आज भी नहीं मिटे। इस विदेश में जिसके बच्चे केवल उसी का मुंह ताककर जी रहे हैं। उसका इतना बड़ा साहस असाधारण है। इसकी तुलना नहीं।"

डाक्टर ने कहा, "इसमें सन्देह क्या है अपूर्व बाबू। पराधीनता की आग जिसके हृदय में रात-दिन जल रही है। उसके लिए इसके अतिरिक्त और तो कोई उपाय है नहीं। साहब की फर्म की इतनी बड़ी नौकरी या इनसिन का कोई भी व्यक्ति उसे रोक नहीं सकता। यह उसका एकमात्र पथ है।"

डाक्टर की बातों को व्यंग्य समझ कर वह जैसे एकदम पागल हो उठा। बोला, "आप उसके महत्व को भले ही अनुभव न कर सके लेकिन साहब की फर्म की नौकरी तलवलकर जैसे मनुष्य को छोटा नहीं बना सकती। जितनी भी इच्छा हो आप मुझपर व्यंग्य कीजिए। लेकिन रामदास किसी भी बात में आप से छोटा नहीं है। यह बात आप निश्चित रूप से जान जायेंगे।"

डाक्टर बोले, "मैं यह जानता हूं। मैंने उनको छोटा नहीं कहा।"

अपूर्व बोला, "आपने कहा है। उन पर और मुझ पर आपने व्यंग्य किया है। लेकिन मैं जानता हूं जन्मभूमि उन्हें प्राणों से अधिक प्यारी है। वे निडर है। आपकी तरह लुक-छिपकर नहीं घूमते।"

आश्चर्य से भारती बोली, "आप किसको क्या कह रहे हैं। अपूर्व बाबू? आप पागल तो नहीं हो गए?"

अपूर्व ने कहा, "नहीं, पागल नहीं हूं। यह जो भी क्यों न हों। लेकिन रामदास तलवलकर की पद धूलि के बराबर नहीं हैं। यह बात मैं स्पष्ट शब्दों में कह सकता हूं। उसके तेज, उसकी निर्भीकता से ये मन ही मन ईर्ष्या करते हैं। इसीलिए तुम्हें जाने नहीं दिया और मुझे भी चतुराई से रोक दिया।"

भारती उठकर बोली, "मैं आपका अपमान नहीं कर सकती, लेकिन

आप यहां से चले जाइए अपूर्व बाबू। हम लोगों ने आपको गलत समझा था। भय के कारण जिसे हित-अहित का ज्ञान नहीं रहता। उनके पागलपने के लिए यहां स्थान नहीं है। आपका कहना सच है—पथ के दावेदारों में आपको स्थान नहीं मिलेगा। आज के बाद किसी भी बहाने मेरे घर आने का कष्ट मत कीजिएगा।"

अपूर्व निरुत्तर होकर उठ खड़ा हुआ। लेकिन डाक्टर ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "जरा बैठिए अपूर्व बाबू, इस अंधेरे में अकेले मत जाइए। मैं स्टेशन जाते हुए आपको डेरे पर पहुंचाता जाऊंगा।"

अपूर्व की चेतना लौट रही थी। वह सिर झुकाकर बैठ गया।

चाय पीने के बाद जो बिस्कुट बचे थे उनको डाक्टर साहब जेब में डाल रहे हैं, यह देखकर भारती ने पूछा, "यह आप क्या कर रहे हैं ?"

"खुराक जुटाकर रख रहा हूं बहन।"

"क्या सचमुच ही आज रात को चले जाइएगा ?"

"तो क्या मैंने अपूर्व बाबू को बेकार ही रोका है ? सभी एक साथ मिलकर अविश्वास करेंगे तो मैं कैसे जीऊंगा भारती।" यह कहकर उन्होंने बनावटी क्रोध दिखाया।

भारती ने अभिमान के साथ कहा, "नहीं, आज आपका जाना नहीं होगा। आप बहुत थक गए हैं। इसके अतिरिक्त सुमित्रा दीदी अस्वस्थ हैं। आप तो बराबर ही न मालूम कहां चले जाते हैं। मैं आपकी एक बात नहीं सुन सकती, 'पथ के दावेदार' को मैं अकेली कैसे चलाऊं ? इस दशा में मेरी जहां तबियत होगी चली जाऊंगी।"

लिखे हुए पत्र उसके हाथ में देते हुए डाक्टर ने हंसकर कहा। इनमें एक तुम्हारे लिए है, एक सुमित्रा के लिए और तीसरा तुम दोनों के पथ के लिए है। मेरा उपदेश कहां, आदेश कहो, सब कुछ यही है।"

भारती बोली, "इस बार क्या आप बहुत दिनों के लिए जा रहे हैं ?"

"देवः न जानन्ति।" कह करके मुस्करा दिए।

भारती बोली, हम लोगों की कठिनाई बढ़ गई है। इसीलिए ठीक-ठीक बता जाइएगा कि आप कब लौटेंगे ?"

"यही तो कहता हूं कि देव, न जानन्ति—"

"नहीं, ऐसा नहीं होगा। सच-सच बताइए, कब लौटिएगा ?"

"इतना आग्रह क्यों है ?"

भारती बोली, "इस बार न मालूम क्यों डर लग रहा है। मानो सब कुछ टूट-फूटकर छिन्न-भिन्न हो जाएगा।"

उसके सिर पर हाथ रखकर डाक्टर बोले, "ऐसा नहीं होगा। सब ठीक होगा।" यह कहकर वह हंस पड़े। बोले, "लेकिन इस व्यक्ति के साथ इस प्रकार झूठ-मूठ झगड़ा करने पर सचमुच ही रोना पड़ेगा। अपूर्व बाबू क्रोध अवश्य करते हैं लेकिन जिसे प्यार करते हैं उसे प्यार करना भी जानते हैं।"

भारती कुछ उत्तर देने जा रही थी लेकिन अचानक अपूर्व के मुंह उठाते ही उसके मुंह की ओर देखकर चुप हो गई।

उसी समय दरवाजे के पास आकर एक घोड़ा गाड़ी रुकी और जल्दी ही दो आदमियों ने प्रवेश किया। एक ऊपर से नीचे तक अंग्रेजी पोशाक में था जिसे डाक्टर के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता था। दूसरा था रामदास तलवलकर।

अपूर्व का चेहरा चमक उठा। रामदास ने आगे बढ़कर डाक्टर के चरणों की धूल माथे पर चढ़ाई।

अंग्रेजी ड्रेस वाला व्यक्ति बोला, "जमानत में इतनी देर हो गई। शायद गवर्नमेन्ट मुकदमा नहीं चलायेगी।"

डाक्टर बोले, "इसका अर्थ यह है कि तुम गवर्नमेंट को नहीं पहचानते।"

रामदास ने कहा, "मैदान से आने तक आपको साथ-साथ देखा था। लेकिन फिर कब अन्तर्ध्यान हो गए पता ही नहीं चला।

डाक्टर ने हंसकर कहा, "अन्तर्ध्यान होना जरूरी हो गया था। रामदास बाबू। यहां तक कि रातों-रात यहां से भी अन्तर्ध्यान होना पड़ेगा।"

रामदास बोला, "उस दिन स्टेशन पर मैंने आपको पहचान लिया था।"

"जानता हूं। लेकिन सीधे घर न जाकर इतनी रात गए यहां क्यों?"

"आपको प्रणाम करने के लिए। मेरे पूना सेन्ट्रल जेल में जाने के बाद ही आप चले गए थे। तब अवसर नहीं मिला। नीलकान्त जोशी का क्या हुआ, जानते हैं? वह तो आपके साथ ही था।"

डाक्टर ने कहा, "बैरक की चारदीवारी लांघ नहीं पाए, पकड़े गए और फांसी हो गई।"

अपूर्व ने पूछा, "उस दशा में क्या आप को भी फांसी हो जाती?"

डाक्टर हंस पड़े।

उस हंसी को सुनकर अपूर्व सिहर उठा।"

रामदास ने पूछा, "इसके बाद ?"

डाक्टर बोले, "एक बार सिंगापुर में ही मुझे तीन वर्ष तक नजरबन्द रहना पड़ा था। अधिकारी मुझे पहचानते थे। इसीलिए सीधा रास्ता छोड़कर बैंकाक के रास्ते पहाड़ लांघकर मेवाद पहुंच गया। भाग्य अच्छा था। एक हाथी का बच्चा भाग्य से मुझे मिल गया। हाथी के उस बच्चे को बेचकर एक जहाज में नारियल के चालान के साथ अपना चालान कराकर मैं अराकान पहुंच गया। अचानक थाने में एक परम मित्र के साथ आमना-सामना हो गया। उनका नाम है बी०ए० चेलिया। मुझे बहुत प्यार करते हैं। बहुत दिनों से दर्शन न होने पर मुझे खोजते हुए सिंगापुर से बर्मा आ गए। भीड़ में अच्छी तरह नजर नहीं रख सके। नहीं तो पैतृक गले का—!" यह कहकर वे हंस पड़े। लेकिन सहसा अपूर्व के चेहरे पर नज़र पड़ते ही चौंककर बोला, यह क्या अपूर्व बाबू ? आपको क्या हो गया ?

अपूर्व स्वयं का संभालने का प्रयत्न कर रहा था। उनकी बात पूरी होते न होते दोनों हाथों से मुंह ढककर तेजी से दौड़ता हुआ कमरे से निकल गया।

सत्रह

अपूर्व के इस तरह बाहर चले जाने पर सभी आश्चर्य में पड़ गए। बैरिस्टर कृष्ण अय्यर ने पूछा, "यह कौन हैं डाक्टर ? बहुत ही भावुक।"

उसकी बात में स्पष्ट उलाहना था कि ऐसे लोगों का यहां क्या काम है ?"

डाक्टर थोड़ा हंस पड़े।

प्रश्न का उत्तर दिया तलवलकर ने, "यह हैं मिस्टर अपूर्व हालदार। हमारे आफिस में मेरे सुपीरियर अफसर हैं। लेकिन बहुत अन्तरंग हैं। मेरे घनिष्ट मित्र हैं। और भावुक ? डाक्टर साहब, आपने शायद हालदार के रंगून के प्रथम परिचय की कहानी नहीं सुनी। यह एक…"

सहसा भारती पर नज़र पड़ते ही रुककर उसने कहा, "वह जो कुछ भी हो, प्रथम परिचय के दिन से ही हम लोग मित्र हैं।"

डाक्टर हंसकर बोले, "भावुकता नाम की वस्तु सर्वदा बुरी नहीं होती कृष्णा अय्यर। और तुम्हारी तरह सभी का कठोर पत्थर न बन जाने से काम नहीं चलेगा। ऐसा सोचना भी ठीक नहीं है।"

कृष्ण अय्यर बोले, "ऐसा मैं भी नहीं सोचता। लेकिन कमरे को छोड़ कर उनके विचरने के लिए संसार में स्थान तो कम हैं नहीं।"

तलवलकर मन ही मन क्रोधित हो उठा। जिसे बार-बार अपना परम मित्र बता रहा है उसे उसी के सामने अवांछित व्यक्ति सिद्ध करने की चेष्टा से उसने अपना अपमान समझकर कहा, "मिस्टर अय्यर, अपूर्व बाबू को मैं पहचानता हूं। यह सच है कि हम लोगों के मन्त्र की दीक्षा लिए उन्हें बहुत दिन नहीं हुए। लेकिन मित्र की अकलिपत मृत्यु से थोड़ा-सा विचलित हो जाना, हम लोगों के लिए भी कोई भयानक अपराध नहीं है। संसार में चलने-फिरने के लिए अपूर्व बाबू को स्थान की कमी नहीं है। और मुझे आशा है कि इस मकान में भी उनके लिए स्थान की कमी नहीं पड़ेगी।"

डाक्टर बोले, "अवश्य नहीं पड़ेगी तलवलकर, अवश्य नहीं पड़ेगी।" फिर वे विशेष रूप से भारती को लक्ष्य करके बोले, "लेकिन यह मित्रता नाम की वस्तु संसार में कितनी क्षण भंगुर है भारती। एक दिन जिसके सम्बन्ध में सोचा भी नहीं जा सकता दूसरे ही दिन जरा-सा कारण पैदा हो जाने पर हमेशा के लिए विछोह हो जाता है। यह भी संसार में कोई अस्वाभाविक नहीं है तलवलकर। इसके लिए भी तैयार रहना चाहिए। मनुष्य बहुत-ही दुर्बल प्राणी है। संसार के धक्के संभालने के लिए इसी भावुकता की आवश्यकता पड़ती है।"

इन सब बातों का उत्तर नहीं, प्रतिवाद भी नहीं। सब मौन रहे। लेकिन भारती का चेहरा उदास हो उठा। भारती जानती है कि अकारण कुछ कहना डाक्टर का स्वभाव नहीं है।

डाक्टर ने घड़ी देखकर कहा, "मेरा तो जाने का समय हो रहा है भारती। रात की गाड़ी से जा रहा हूं तलवलकर।"

कहां और किसलिए ? अपने आप बताए बिना अनावश्यक कौतूहल प्रगट करने का नियम इन लोगों में नहीं है।"

तलवलकर ने पूछा, "मेरे लिए आपका आदेश ?"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "आदेश तो है, लेकिन एक बात है, बर्मा में स्थान का अभाव हो ही जाए तो अपने देश में नहीं होगा। यह निश्चित है। मजदूरों पर ज़रा नज़र रखना।"

तलवलकर ने गर्दन हिलाकर कहा, "अच्छा। फिर कब भेंट होगी ?"

डाक्टर ने कहा, "नीलकान्त जोशी के शिष्य हो तुम, फिर यह प्रश्न कैसे कर बैठे ?"

तलवलकर चुप हो रहा। डाक्टर ने कहा, "अब देर मत करो, जाओ। घर पहुंचते-पहुंचते भोर हो जाएगी।—और अय्यर, क्या यहीं प्रैक्टिस करने का निश्चय कर लिया है ?"

कृष्ण अय्यर ने सिर हिलाकर सम्मति प्रगट की। किराए की गाड़ी बाहर खड़ी प्रतीक्षा कर रही थी। दोनों बाहर जाने लगे तो तलवलकर ने कहा, "अंधेरे में अपूर्व बाबू कहां चले गए। भेंट नहीं हुई—"

लेकिन इस बात का उत्तर देना किसी ने आवश्यक नहीं समझा। कुछ ही देर बाद गाड़ी की आवाज़ से मालूम हो गया कि वे लोग चले गए।

"तुम क्या समझती हो अपूर्व चला गया ?" डाक्टर ने कहा।

भारती बोली, "नहीं, सम्भव है आस-पास खोजने से मिल जायेंगे। आपसे बिना भेंट किए वे नहीं जायेंगे।"

डाक्टर बोले, "तुम यही काम करो। अधिक नहीं ठहर सकता बहिन"

"नहीं। वे इसी बीच आ जायेंगे," यह कहकर दरवाजे के बाहर भारती ने नज़रें दौड़ाई और परिचित पैरों की आवाज की प्रतीक्षा में बेचैन हो उठी। जी चाहा दौड़कर कहीं आस-पास से उसे पलभर में खोज लाए। लेकिन इतनी व्याकुलता दिखाने में उसे आज लज्जा मालूम हुई। डाक्टर ने घड़ी की ओर देखा। भारती ने घड़ी पर नजर डाली। पांच-छै मिनट से अधिक समय नहीं था।

"आप क्या पैदल ही जायेंगे ?"

"नहीं। दो वजकर बीस मिनट पर बड़ी सड़क से एक घोड़ा गाड़ी गुजरेगी। छै-सात आने में स्टेशन पहुंचा देगी।"

"पैसा न देने पर भी पहुंचा देगी। लेकिन जाने से पहले क्या सुमित्रा जीजी को देखने नहीं जायेंगे ? वे सचमुच बीमार हैं।"

डाक्टर ने कहा, "मैंने कब कहा कि बीमार नहीं है ? लेकिन डाक्टर को दिखाए बिना बीमारी कैसे अच्छी होगी ?"

भारती बोली, "आपसे अच्छा डाक्टर कौन मिलेगा ?"

डाक्टर ने मजाक में उत्तर दिया, "तब तो हो चुकी अच्छी। अभ्यास छूटे बहुत दिन बीत चुके हैं। फिर बैठा-बैठा किसी का इलाज करता रहूं इतना समय कहां है मेरे पास ?"

भारती बोल उठी, "आपके पास भला समय कहां है। कोई मर भी जाए तो भी आपको समय नहीं मिलेगा। क्या देश का काम ऐसा ही होता है ?"

डाक्टर का हंसता हुआ चेहरा पलभर को गम्भीर होकर फिर पहले जैसा हो गया। भारती यह देखते ही अपनी गलती समझ गई। सुमित्रा कौन है? डाक्टर के साथ उसका सम्बन्ध क्या है? और किस तरह वह इस दल में शामिल हुई, भारती को इस सम्बन्ध में कुछ भी मालूम नहीं था। इन लोगों की संस्था में व्यक्तिगत परिचय के प्रति जिज्ञासा निषिद्ध माना जाता है। इसीलिए अनुमान के सिवा ठीक तौर से कुछ भी जान लेने का उपाय नहीं था। केवल स्त्री होने के नाते ही उसने सुमित्रा का मनोभाव कुछ-कुछ जान लिया था। लेकिन अपनी उसी अनुभूति को आधार मानकर अचानक इतना बड़ा इशारा कर बैठने से वह केवल संकोच में ही नहीं पड़ गई बल्कि भयभीत भी हो उठी। भयभीत वह डाक्टर से नहीं सुमित्रा से हुई। यह बात किसी भी तरह उसके कान तक पहुंच जाने से काम बिगड़ जाएगा। उनका और परिचय मालूम न होने पर भी पहले से ही उस शान्त, तीक्ष्ण विद्या-बुद्धिशालिनी रमणी के दुर्भेद्य गम्भीरता के परिचय से कोई भी अपरिचित नहीं था। उनके स्वरूप और भाषण से उनके प्रखर सौन्दर्य के हर पदक्षेप से, उनके संयम-गम्भीर वार्तालाप से, उनके अचंचल आचरण की गम्भीरता से, इस दल में रहते हुए भी उनकी असीम दूरी को सब लोग भली-भांति अनुभव करते थे। यहां तक कि उनकी बीमारी के सम्बन्ध में भी अपने आप किसी प्रकार की आलोचना करने का भी किसी को साहस नहीं होता था। लेकिन एक दिन इस न बेधी जाने वाली कठोरता को बेधकर उनकी अत्यन्त गुप्त दुर्बलता, उस दिन अपूर्व और भारती के सामने प्रगट हो गई थी जिस दिन एक आदमी को विदा करते समय सुमित्रा स्वयं को संभाल नहीं सकी थी। और उसीसे वह माने अपने को सबसे अलग—बहुत दूर हटा ले गई है। वह विशाल व्यवधान, दूसरे की बिन मांगी सहानुभूति के आकर्षण से संकुचित होने का थोड़ा भी आभास मिलते ही उसकी अपने जीवन के प्रति अन्तर में छिपी गूढ़ वेदना सहसा भड़क उठेगी, इस बात का अनुभव करके भारती का क्षुब्ध चित्त आशंका से भर जाता था।

डाक्टर ने आराम कुर्सी पर अच्छी तरह लेटकर अपने दोनों पैर मेज पर फैला दिए और फिर आराम की सांस छोड़कर बोल उठे. "ओह—"

भारती आश्चर्य से बोली, "आप तो खूब सो लिए?"

डाक्टर नाराज होकर बोले, "क्यों, क्या मैं घोड़ा हूं जो जरा-सा लेटते ही नींद आ जाएगी? मुझे नींद आ रही है। तुम लोगों की तरह खड़े-खड़े मैं नहीं सो सकता।"

"खड़ें-खड़े हम लोग भी नहीं सो सकतीं। लेकिन अगर कोई यह कहे

कहे कि आप दौड़ते-दौड़ते सो सकते हैं तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। आपके इस शरीर से क्या कुछ नहीं हो सकता कोई नहीं जानता। लेकिन समय हो गया। इसी समय न चल पड़ने से गाड़ी नहीं मिलेगी। चली जाएगी।"

"चली जाने दो, बड़ी जोर की नींद आ रही है भारती। आंखें नहीं खोल सकता," यह कहकर डाक्टर ने आंखें मूंद ली।"

यह सुनकर भारती ने पुलकित मन से अनुभव किया कि केवल मेरे अनुरोध से ही आज उनका जाना स्थगित हो गया है। नहीं तो नींद तो दूर; बिजली गिरने की दुहाई देकर भी उनके संकल्प में वाधा नहीं डाली जा सकती। उसने कहा, "अगर सचमुच ही नींद आ रही हो तो ऊपर जाकर सो जाइए न।"

डाक्टर ने आंखें बन्द किए ही पूछा, "तुम क्या अपूर्व की बाट देखती हुई सारी रात जागकर बिताओगी ?"

भारती बोली, "मुझे क्या गरज ? कोठरी में सो जाऊंगी।"

डाक्टर बोले, "क्रोध करके लेटा तो जा सकता है लेकिन सोया नहीं जा सकता। बिछौने पर पड़कर छटपटाते रहने से बढ़कर दूसरी कोई सजा नहीं होती। इससे तो यही अच्छा होगा कि तुम उसे खोज लाओ। मैं किसी से नहीं कहूंगा।"

भारती का चेहरा लाल पड़ गया। कुछ देर मौन रहने के वाद स्वयं को संभाल कर बोली, "अच्छा डाक्टर साहब, बिस्तर पर पड़कर छटपटाते रहने से वढ़कर और कोई सजा नहीं होती—यह बात आप कैसे जान गए ?"

"लोग कहते हैं। वही सुनकर।"

"अपने अनुभव से नहीं जानते ?"

डाक्टर बोले, "बहिन, हम अभागों को तो सोने के लिए बिस्तर भी नसीब नहीं होते। फिर छटपटाना कैसा। इतनी बाबू गीरी के लिए फुर्सत कहां ?"

भारती बोली, "अच्छा डाक्टर साहब, सब लोग कहते हैं कि आप में क्रोध है ही नहीं। क्या यह बात सच है ?"

"लोग झूठ कहते हैं। वे मुझे देख नहीं सकते।"

भारती हंसकर बोली, "या अत्यधिक प्यार करते हैं ? वे तो यह भी कहते हैं कि आप में न मान है न अभिमान। न दया-माया है। हृदय आदि से अन्त तक पत्थर बन गया है।"

डाक्टर ने कहा, "यह भी अत्यधिक प्यार की बात है। इसके बाद ?"

भारती बोली, "इसके बाद, उस प्रस्तर मूर्ति पर केवल एक प्रतिमा खुदी हुई है—जन्मभूमि की प्रतिमा। उसका न आदि है, न अन्त है और न क्षय है। वह प्रतिमा हमें दिखाई नहीं देती। इसीलिए हम लोग आपके पास रह पाते हैं। नहीं तो—" कहते-कहते सहसा वह रुक गई। फिर बोली, "कैसे बताऊं डाक्टर साहब, एक दिन जब मैं सुमित्रा बहिन के साथ बर्मा आयरन कम्पनी के कारखाने के पास से जा रही थी उस दिन वहां कारखाने के नए बायलर की परीक्षा हो रही थी। लोग खड़े-खड़े तमाशा देख रहे थे। काले पर्वत के समान वह एक विशाल जड़-पिंड से अधिक और कुछ भी नहीं था। सहसा उसका दरवाजा खुल जाने पर ऐसा लगा मानो उसके भीतर आग का तूफान उठ रहा है। अगर उसमें इस पृथ्वी को भी उठाकर डाल दिया जाए तो वह इसे भी भस्म कर देगा। मैंने सुना है कि वह अकेला ही उस विशाल कारखाने को जला सकता है। दरवाजा बन्द हो गया तो वह पूर्ववत शान्त जड़-पिंड बन गया। उसके भीतर का रत्ती भर भी प्रकाश बाहर नहीं रहा। सुमित्रा बहिन के मुंह से गहरी सांस निकल गई। मैंने आश्चर्य से पूछा, "क्या बात है जीजी! सुमित्रा ने कहा, 'इस भयंकर यन्त्र को याद रखना भारती। इससे तुम अपने डाक्टर साहब को पहचान सकोगी। यही है उनकी यथार्थ प्रतिमूर्ति'।"

डाक्टर ने अयन्मनस्क की तरह मुस्कराते हुए कहा, "सभी लोग क्या मुझे प्यार ही करते हैं? लेकिन नींद के मारे तो आंखों से अब कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा भारती। कुछ उपाय करो। लेकिन इससे पहले—वह आदमी कहां चला गया, क्या एकबार पता नहीं लगाओगी?"

"लेकिन आप यह बात किसी से कह नहीं सकते।"

"नहीं। लेकिन मुझ से लज्जा करने की आवश्यकता नहीं है।"

"नहीं। मनुष्य से ही मनुष्य को लज्जा होती है," यह कहकर वह लालटेन लेकर बाहर चली गई।

लगभग पन्द्रह मिनट बाद आकर बोली, "अपूर्व बाबू चले गए।"

आश्चर्य से डाक्टर बोले, "इतने अंधेरे में अकेले?"

"ऐसा ही लगता है।"

"आश्चर्य है।"

"मैंने आपके लिए बिस्तर ठीक कर दिया है।"

"और तुम?"

"मैं फर्श पर कम्बल बिछाकर सो जाऊंगी।"

डाक्टर बोले, "अच्छा चलो। लज्जा मनुष्य मनुष्य से करता है। मैं तो पत्थर रहा।"

ऊपर के कमरे में डाक्टर लेट गए। भारती ने फर्श पर बिस्तर बिछा दिया।

डाक्टर ने उसे देखकर कहा, "सब लोग मिलकर इस तरह मेरी उपेक्षा करते हैं तो मेरे आत्म सम्मान को चोट लगती है। यानी मुझसे कोई भय नहीं है।"

भारती बोली, "रत्ती भर भी नहीं। आपसे किसी का लेशमात्र भी अकल्याण नहीं हो सकता।"

डाक्टर हंसकर बोले, "अच्छा, किसी दिन पता चल जायगा।"

बिछौने पर लेटकर भारती ने पूछा, "आपका सव्यसाची नाम किसने रखा था डाक्टर साहब ?"

डाक्टर हंसकर बोले, "यह नाम दिया था पाठशाला में पंडितजी ने। उनके यहां आम का एक बहुत ऊंचा पेड़ था। केवल मैं ही ढेले भरकर उस पर लगे आमों को तोड़ सकता था। एक छत पर से कूदने पर मेरा दायां हाथ मोच खा गया। डाक्टर ने उस पर पट्टी बांधकर मेरे गले से लटका दिया। यह देखकर सभी हाय-हाय करने लगे। लेकिन पंडितजी से प्रसन्न होकर कहा, 'जाने दो, ढेले की चोट खाने से मेरे आम तो बच गए। पकने पर शायद दो-चार मुंह में डाल सकूंगा'।"

भारती बोली, "आप बड़े दुष्ट थे।"

डाक्टर बोले, दूसरे दिन फिर आम गिराने लगा। पंडित जी को पता चल गया। उन्होंने मुझे पकड़ लिया। कुछ देर मेरी ओर देखकर बोले, "गलती हुई बेटा सव्यसाची। आम की आशा अब नहीं करता। दायां हाथ तोड़ चुके हो, बांया हाथ चल रहा है। बांया हाथ टूट जाने पर संभव है दोनों पैर चलेंगे। अब कष्ट मत करो। जो आम बचे हैं उन्हें मैं तुड़वा देता हूं।"

भारती बोली, "पंडित जी का दिया हुआ नाम है यह ?"

डाक्टर बोले, "हां, मेरा असली नाम तभी से लोग भूल गए।"

भारती फिर बोली, "अच्छा, सभी लोग जो कहते हैं कि देश और आप मिलकर एकाकार हो गए हैं। यह कसे हुआ ?"

डाक्टर बोले, "यह भी बचपन की घटना है। इस बीच में क्या-क्या आया और चला गया। लेकिन वह दिन आज भी याद है। हमारे गांव के पास वैष्णवों का एक मठ था। एक दिन रात के समय डाकुओं ने उस मठ पर आक्रमण किया। रोने-धोने की आवाज़ से लोग इकट्ठे हो गए। लेकिन डाकुओं के पास एक देशी बन्दूक थी, जिससे वे लोग गोलियां चलाने लगे। यह देखकर कोई उनके पास न जा सका। मेरे एक चचेरे भाई थे।

अत्यन्त साहसी और परोपकारी। वे जाने के लिए छटपटाने लगे। लेकिन जाने पर निश्चय ही मृत्यु होगी यह सोचकर सब ने उनको पकड़ लिया। अपने को किसी तरह न छुड़ा सकने पर वे वहीं से निष्फल उछल-कूद मचाने लगे। और डाकुओं को गाली देने लगे लेकिन उसका कोई फल नहीं हुआ। डाकुओं ने केवल एक बन्दूक के जोर से दो-तीन सौ आदमियों के सामने बाबाजी को खूंटे में बांधकर जला डाला। मैं उस समय बालक था भारती। लेकिन आज भी मरते हुए बाबाजी की चीखें सुनाई पड़ती हैं। ओह, कितना हृदय विदारक आर्तनाद था वह।"

भारती ने पूछा, "इसके बाद ?"

डाक्टर बोले, "इसके वाद ?"

डाक्टर बोले, "बाबा जी को समूचे गांव वालों के सामने मार डाला गया। डाकुओं ने लूटपाट का काम बड़ी आसानी से पूरा कर लिया। जाते समय डाकुओं के सरदार ने अपने पिता की सौगन्ध खाकर बड़े भैया को सुनाकर कहा, 'आज तो हम लोग थक गए हैं। पर एक महीने के अन्दर ही लौटकर हम इसका बदला लेंगे।' बड़े भैया जिला मजिस्ट्रेट के पास जाकर रोए-धोए कि मुझे एक बन्दूक चाहिए। लेकिन पुलिस ने कहा, नहीं मिल सकती। क्योंकि दो साल पहले किसी अत्याचारी पुलिस इंस्पेक्टर के कान मल देने के अपराध में उन्हें दो महीने की जेल की सजा मिल चुकी थी। भैया ने मजिस्ट्रेट से कहा, 'तो क्या हम लोग मारे जायें ?' साहब ने हंसकर कहा, "जो इतना डरता है वह घर द्वार बेचकर मेरे जिले से किसी दूसरे जिले में चला जाए'।"

भारती उत्तेजित होकर बोली, "नहीं दी ?"

डाक्टर ने कहा, "नहीं। और यही नहीं, बड़े भैया ने जब धनुष बाण और बरछा बनवाया तो पुलिस उन्हें भी छीन ले गई।"

'इसके बाद ?"

"इसके बाद की घटना बहुत संक्षिप्त है। उसी महीने में सरदार ने अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर ली। इस बार उसके पास एक बन्दूक और थी। घर के सभी लोग भाग गये। पर बड़े भैया को कोई भी डिगा न सका। डाकू की गोली खाकर उन्होंने प्राण त्याग दिए।"

"प्राण त्याग दिए ?"

"हां, गोली लगने के बाद चार घण्टे तक जीवित रहे। गांव भर इकट्ठा हो कर हो हल्ला मचाने लगा। कोई डाकुओं को गाली देने लगा। कोई साहब को। केवल भैया चुपचाप पड़े रहे। देहाती गांव ही तो था। अस्पताल दस-बारह कोस दूर था। रात के समय डाक्टर पट्टी बांधने के

लिए आया तो भैया ने उसका हाथ हटाकर कहा, "रहने दो, मैं जीना नहीं चाहता।" यह कहते कहते पत्थर के उस देवता की आवाज ज़रा-सी कांप उठी। वड़े भैया मुझे बहुत ही प्यार करते थे। मुझे रोते देखकर उन्होंने मेरी ओर देखा और फिर धीरे-धीरे बोले, 'छिः लड़कियों की तरह इस गाय, भेड़, बकरियों के सुर में सुर मिलाकर तू मत रो शैल। लेकिन राज्य करने के लोभ से जिन लोगों ने समूचे देश में मनुष्य कहलाने योग्य एक भी प्राणी बाकी नहीं छोड़ा उन लोगों को अपने जीवन में कभी क्षमा मत करना ?' घृणा से उसके मुंह से उफ़ आह तक भी नहीं निकली और इस अभिशप्त पराधीन देश को चिरकाल के लिए वे छोड़कर चले गए। केवल मैं ही जानता हूं भारती—कितना बड़ा और विशाल हृदय उस दिन संसार से विदा हो गया।"

भारती चुपचाप बैठी रही। किसी समय एक छोटे से गांव में हुई दुर्घटना की कहानी ही तो है। डाका पड़ने पर दो-चार अज्ञात, अप्रसिद्ध आदमियों के प्राण नष्ट हुए, इतना ही तो। जगत के बड़े-बड़े विरोधों के असहनीय दुखों के मुकाबले में यह है क्या चीज ? फिर भी इस पत्थर पर कितना गहरा घाव कर गई है। तुलना और गणना की दृष्टि से दुर्बलों के दुखद इतिहास में हत्या की यह निर्ममता बहुत ही तुच्छ है। इस बंगदेश में ही रोजाना न जाने कितने लोग चोर-डाकुओं के हाथों मरते रहते हैं। लेकिन इसमें क्या इतनी ही सी बात है ? क्या यह पत्थर इतने से आघात से ही विदीर्ण हो गया है ? भारती को सहसा लगा जैसे समूची बलि की दुस्सह लांछना और अपमान की ग्लानि से उस पत्थर के चेहरे पर काली स्याही की मोटी तह पोत दी है।

वेदना से भारती बोल उठी, "भैया—?"

डाक्टर ने गर्दन उठाकर पूछा, "मुझे बुला रही हो ?"

भारती बोली, "हां—क्या अंग्रेजों से तुम्हारी सन्धि नहीं हो सकती ?"

"नहीं। मुझसे बढ़कर उनका शत्रु और कोई नहीं है।"

भारती मन ही मन दुखी होकर बोली, "किसी से दुश्मनी या किसी का अहित करने की तुम कामना कर सकते हो, यह बात मैं सोच भी नहीं सकती भैया।"

डाक्टर बोले, "भारती, यह बात तुम्हारे मुंह से ही शोभा दे सकती है। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि तुम सुखी होओ।" यह कहकर वे जरा हंस पड़े। लेकिन भारती जानती थी कि इस हंसी का कोई मूल्य नहीं है। शायद यह कुछ और ही हो।

डाक्टर ने कहा, "भारती, हमारा देश उनके हाथों में चला गया है। इसी कारण मैं उनका शत्रु नहीं हूं। कभी यह देश मुसलमानों के हाथों में भी चला गया था। लेकिन समस्त संसार में मानवता की इतनी बड़ी शत्रु जाति और कोई नहीं है। यही इन लोगों का व्यवसाय है। यही इनका मूलधन है। यदि तुमसे बन सके तो देश के सभी लोगों को, भले ही वे पुरुष हों या स्त्री, इस सत्य को समझा देना।"

भारती मौन बैठी न जाने क्या सोचने लगी। लेकिन एक समूची जाति के विरुद्ध इतने बड़े अभियोग को सत्य मानकर उस पर विश्वास न कर पाई।

अठारह

भारती के दल के एक आदमी ने आकर उसे एक पत्र दिया। पत्र सुमित्रा के हाथ का लिखा हुआ था। पत्र में उसने लिखा था कि जैसी अवस्था में हो तत्काल पत्र वाहक के साथ चली आओ।

नीचे उतर कर देखा, दरवाजे के सामने परिचित गाड़ी खड़ी है। लेकिन गाड़ीवान बदल गया है। लेकिन गाड़ी क्यों आई है? सुमित्रा के घर तक जाने में तीन-चार मिनट से अधिक समय नहीं लगता। उसने पूछा, "क्या बात है हीरासिंह, सुमित्रा कहां है?"

हीरासिंह पथ के दावेदार का सदस्य न होते हुए भी विश्वासपात्र है पंजाबी सिख है। पहले हांग-कांग-पुलिस में सर्विस करता था। अब रंगून के तार घर में प्यून का काम करता है।

उसने धीरे से कहा, "चार-पांच मील दूर, बहुत ही गुप्त और आवश्यक सभा हो रही है। आपके न जाने से काम नहीं चलेगा।"

भारती ने और प्रश्न नहीं किया। सांझ के अंधेरे में गाड़ी की खिड़कियां बन्द करके चल पड़ी। हीरासिंह सरकारी प्यून की यूनीफार्म में सरकारी साइकिल पर सवार होकर दूसरे रास्ते से चल पड़ा।

रात के लगभग दस बजे गाड़ी एक बगीचे में पहुंचकर रुक गई। हीरासिंह पहले ही पहुंच चुका था। उसने गाड़ी का दरवाजा खोल दिया। सिर के ऊपर बड़े-बड़े पेड़ छाए हुए थे। जिनके कारण अन्धकार इतना दुर्भेद्य हो गया था कि हाथ को हाथ सुझाई नहीं दे रहा था। लम्बी-लम्बी

और बहुत ही घनी घास के बीच एक पगडण्डी का चिह्न मात्र दिखाई दे रहा था। इसी भयानक रास्ते पर हीरासिंह अपनी साइकिल की छोटी सी लालटेन की रोशनी से रास्ता दिखाते हुए आगे-आगे चलने लगा।

उस पगडण्डी पर चलते ही भारती के मन में रह-रहकर यह विचार आने लगा कि इस भयंकर स्थान में आकर मैंने अच्छा नहीं किया।

थोड़ी देर बाद वे लोग एक टूटी-फूटी पुरानी इमारत के सामने पहुंच गए। बड़े हाल के कोने में ऊपर चढ़ने की सीढ़ियां हैं। सीढ़ियां काठ की बनी हुई हैं। बीच-बीच में सीढ़ियों के कुछ तख्ते नहीं हैं। भारती हीरासिंह का हाथ पकड़कर दूसरी मंजिल पर पहुंच गई। और फिर सामने का बरामदा पार करके बड़ी कठिनाई से निश्चित स्थान पर पहुंच गई। कमरे में एक चटाई बिछी थी। एक ओर दो मोमबत्तियां जल रही थीं। उन्हीं के पास सामने आसन पर सुमित्रा बैठी थी। दूसरे छोर पर डाक्टर बैठे थे। उन्होंने स्नेह भरे स्वर में कहा, "आओ भारती, मेरे पास आकर बैठो।"

भारती जल्दी से डाक्टर के पास जा बैठी। उसके कन्धे पर बांया हाथ रखकर डाक्टर ने जैसे चुपचाप उसे ढाढस बंधाया। हीरासिंह अन्दर नहीं आया। दरवाजे के पास ही खड़ा रहा। भारती ने चारों ओर नजर डाली। जो लोग बैठे थे उनमें से पांच-छः को तो वह बिल्कुल ही नहीं पहचानती थी। परिचितों में से डाक्टर, और सुमित्रा के अतिरिक्त रामदास तलवलकर और कृष्ण अय्यर थे।

अपरिचितों पर नजर डालते ही सबसे पहले उसकी नजर एक भयानक चेहरे वाले आदमी पर पड़ी। वह गेरुए रंग का लम्बा चोला पहने था। सिर पर बहुत बड़ी पगड़ी थी। उसका मुंह बड़ी हांडी की तरह गोलाकार और शरीर गैंडे के समान स्थूल-मांसल और सूखा था। बड़ी-बड़ी आंखों के ऊपर भौंहों का चिह्न तक नहीं। कड़ी-कड़ी सींकों की तरह खड़ी मूंछें शायद दूर से गिनी जा सकती थीं। रंग तांबे जैसा। उसे देखते ही स्पष्ट मालूम हो जाता था कि वह अनार्य मंगोलिया जाति का है। उस वीभत्स भयानक आदमी की ओर भारती आंख उठाकर नहीं देख सकी। दो मिनट तक समूचे कमरे में सन्नाटा छाया रहा। फिर सुमित्रा ने पुकार कर कहा, "भारती, मैं तुम्हारे मन की बात जानती हूं ? इसलिए मेरी इच्छा नहीं थी कि तुम्हें यहां बुलाकर दुखी करूं। लेकिन डाक्टर ने ऐसा नहीं करने दिया। जानती हो अपूर्व बाबू ने क्या किया है।"

भारती मौन देखती रह गई।

सुमित्रा बोली, "बोथा कम्पनी ने रामदास को बर्खास्त कर दिया

है। अपूर्व की भी यही दशा होती। लेकिन कमिश्नर के सामने हम लोगों की सारी बातें सचसच कह देने से उसकी नौकरी बच गई। वेतन कम नहीं था। पांच-छह सौ के लगभग होगा।"

रामदास बोला, "हां।"

सुमित्रा बोली, " 'पथ के दावेदार' विद्रोहियों का दल है और हम लोग छिपकर रिवाल्वर रखते हैं—ये सारी बातें भी उन्होंने बता दीं। इसके लिए क्या दण्ड है भारती ?"

भयंकर आकृति वाला आदमी गरज कर बोला, "डेथ।"

भारती चुप थी।

रामदास बोला, "सव्यसाची ही डाक्टर बने हैं। यह समाचार उन्हें मिल चुका है। अपूर्व बाबू ने यह बात बता देने में कसर नहीं रखी है। होटल के कमरे में ही उन्हें पकड़ा जा सकता है। इसके पहले मैं राजनैतिक अपराध में दो वर्ष जेल काट चुका हूं, यह भी बता दिया।"

सुमित्रा ने कहा, "भारती, तुम जानती हो कि डाक्टर पकड़े जाएंगे तो उसका परिणाम क्या होगा ? फांसी हो जायगी। अगर उससे बच भी गये तो 'ट्रान्सोप्रोट्रेशन'। सभासद गण, आप लोग इस अपराध का दंड क्या निश्चित करते हैं ?"

सभी एक साथ बोल उठे—"डैथ।"

"भारती, तुम्हें कुछ कहना है ?"

भारती ने सिर हिलाकर बताया—"कुछ नहीं।"

वह भयंकर आदमी बोला, "यह भार मैं अपने ऊपर लेता हूं—

कृष्ण अय्यर ने दरवाजे की ओर देखकर हीरासिंह से कहा, "बगीचे के कोने में एक सूखा कुंआ है। कुछ अधिक मिट्टी डालकर और फिर उसके ऊपर थोड़ी सूखी पत्तियां डाल देनी चाहिए। गन्ध न निकलने पाए।"

हीरासिंह बोला, "इस काम में कमी न होगी।"

तलवलकर बोला, "अब बाबू साहब को बुलाकर सजा सुना देनी चाहिए।"

अपूर्व के अपराध का विचार पांच मिनट में ही समाप्त हो गया। विचार करने वालों की राय जितनी संक्षिप्त थी उतनी ही स्पष्ट भी। समझ में न आने योग्य कोई जटिलता नहीं थी।

भारती ने सब कुछ सुन लिया। लेकिन उसके कानों और बुद्धि के बीच कहीं एक ऐसी दुर्भेद्य दीवार खड़ी हो गई थी कि कोई भी बाहरी वस्तु उसे बेध कर अन्दर नहीं पहुंच सकती थी। इसी से आरम्भ से अन्त तक जो कोई कुछ कहता था भारती आकुल दृष्टि से उसके मुंह की ओर

मुड़कर देखने लगती थी। केवल इतनी ही बात उसकी समझ में आ रही थी कि अपूर्व ने बहुत बड़ा अपराध किया है। इस देश में उसका जीवन संकट में है। लेकिन वह संकट इतना निकट आ पहुंचा है यह वह बिल्कुल नहीं समझ सकी।

सुमित्रा के इशारे से एक आदमी उठकर बाहर चला गया। और दो मिनट के बाद ही अपूर्व को लेकर आ गया। अपूर्व के दोनों हाथ पीठ की ओर रस्सी से मजबूती के साथ बंधे हुए थे और कमर में एक भारी पत्थर झूल रहा था।

दूसरे ही पल भारती चेतना शून्य होकर डाक्टर के शरीर पर लुढ़क-पड़ी। लेकिन इस समय सबकी नजरें अपूर्व पर टिकी हुई थीं। इसलिए डाक्टर के सिवा और कोई इस बात को नहीं जान सका।

भारती के यहां पहुंचने से पहले ही अपूर्व का बयान लिया जा चुका था। उसने कोई भी बात अस्वीकार नहीं की थी। आफिस के बड़े साहब और पुलिस के बड़े साहब दोनों ने मिलकर उससे सारी बातें जान ली थीं। लेकिन उसने इस दल और देश से इतनी बड़ी शत्रुता कैसे की, इस बात को वह अब भी नहीं जान सका था।

आज दिन के दस बजने से पहले ही रामदास ने आकर यह खबर सुमित्रा को सुना दी थी। दण्ड निश्चित हो गया। यह संक्षेप में इस प्रकार है।

आफिस की छुट्टी के बाद आज अपूर्व पैदल घर जाने का साहस न कर सकेगा। यह सोचकर इन लोगों ने किराए की गाड़ी हीरासिंह की सहायता से आफिस के पास खड़ी कर दी। इस फन्दे में अपूर्व ने सहज ही पांव रख दिये। कुछ देर चलाकर गाड़ीवान ने कहा कि एक भारी रौलर के टूट जाने के कारण गली का मोड़ बन्द हो गया है। घूमकर जाना होगा। अपूर्व ने स्वीकार किया और उसके बाद अन्यमनस्क सा हो गए। लेकिन घण्टे भर बाद जब उसे होश हुआ तो देखा हीरासिंह गाड़ी में पिस्तौल लिए खड़ा है।

सुमित्रा ने पुकार कर कहा, "अपूर्व बाबू, हम लोगों ने आपको प्राण दण्ड किया है। आपको कुछ कहना है?"

अपूर्व ने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

डाक्टर ने पूछा, "हीरासिंह तुम्हारी पिस्तौल कहां है?"

हीरासिंह ने सुमित्रा की ओर इशारा किया।

डाक्टर ने हाथ बढ़ाकर कहा, "पिस्तौल देखूं तो सुमित्रा?"

सुमित्रा ने बेल्ट से पिस्तौल खोलकर डाक्टर के हाथ में दे दी।

डाक्टर ने पूछा, "और किसी के पास रिवाल्वर है ?"

और किसी के पास नहीं है—यह बात सबने बता दी। तब सुमित्रा की पिस्तौल अपनी जेब में रख कर डाक्टर ने हल्की सी मुस्कराहट के साथ कहा, "तुमने कहा, तुम लोगों ने प्राण दण्ड दिया है। लेकिन भारती ने नहीं दिया।"

सुमित्रा ने भारती की ओर देख कर कहा, "भारती नहीं दे सकती।"

डाक्टर ने कहा, "दे पाना उचित नहीं है। क्यों भारती ?"

भारती चुप रही। इस कठिनतम प्रश्न के उत्तर में उसने औंधी लेट-कर डाक्टर की गोद में अपना मुंह छिपा लिया।

डाक्टर ने उसके सिर पर एक हाथ रख कर कहा, "अपूर्व बाबू ने जो कुछ कर डाला है वह तो लौट नहीं सकता। उसका परिणाम हम लोगों को भोगना ही पड़ेगा। दण्ड देने पर भी और न देने पर भी भोगना पड़ेगा। इसलिए इसकी आवश्यकता नहीं। भारती इनका भार अपने ऊपर ले ले।"

सुमित्रा ने कहा, "नहीं।"

सभी एक साथ बोल उठे, "नहीं।"

वह भयानक आदमी सबसे अधिक उछला। उसने अपने दोनों पंजे उठाकर भारती की ओर इशारा करके कोई बात कही।

सुमित्रा ने कहा, "हम सब का मत एक ही है। इतने बड़े अन्याय को प्रश्रय देने से हम लोगों का सारा काम टूट फूट कर समाप्त हो जाएगा?"

डाक्टर ने कहा, "अगर समाप्त हो जाए तो उसका उपाय ही क्या है ?"

सुमित्रा के साथ ही पांच-सात आदमी गरज उठे, "उपाय क्या है ? देश के लिए, स्वाधीनता के लिए हम लोग और कोई बात नहीं मानेंगे। आपके अकेले की बात से कुछ नहीं हो सकता।"

लोगों का गरजना बन्द हो जाने पर डाक्टर ने उत्तर दिया। इस बार उनकी आवाज आश्चर्यजनक रूप से शान्त और नर्म सुनाई दी। उसमें रत्ती भर भी उत्साह और उत्तेजना नहीं थी। उन्होंने कहा—"सुमित्रा, विद्रोह को प्रश्रय मत दो। तुम लोग जानते हो कि मेरे अकेले का मत तुम एक सौ आदमियों से भी अधिक कठोर है।"

फिर उस भयंकर मनुष्य को सम्बोधित करके बोले, "ब्रजेन्द्र वटा-विया में एकबार तुमने मुझे दण्ड देने के लिए विवश किया था अब दूसरी बार विवश मत करो।"

भारती ज्यों की त्यों पड़ी थी। उसका शरीर थर थर कांप रहा था।

उसकी पीठ पर प्यार से हाथ फेरते हुए डाक्टर ने स्वाभाविक स्वर में कहा, "डरो मत भारती, अपूर्व को मैं अभय देता हूं।"

भारती ने मुंह ऊपर नहीं उठाया। उसे विश्वास भी नहीं हुआ। उसके दाएं हाथ की उगलियां अपनी मुट्ठी में दबाकर उसे अपनी ओर खींचकर धीरे-धीरे कहा, "लेकिन इन लोगों ने तो अभय दिया नहीं, सहज देंगे भी नहीं। लेकिन ये लोग इस बात को नहीं समझते कि मैं जिसे अभय दे दूं उसे छुआ भी नहीं जा सकता।" फिर तनिक हंस कर बोले, "अच्छा खाना नहीं मिलता भारती। आधा पेट खाकर ही दिन कट जाते हैं। फिर भी ये लोग समझते हैं कि मैंने जिसे अभय दे दिया उसे छुआ जा सकता है। इन थोड़ी-सी दुबली-पतली उंगलियों के दबाव से आज मैं ब्रजेन्द्र जैसे बड़े से बड़े बाघ के पंजे चूर चूर हो जाएंगे। क्या कहते हो ब्रजेन्द्र।"

चटगांव का मग धुंधला मुंह लिए चुप रह गया। डाक्टर ने कहा, "लेकिन अपूर्व अब यहां न रहे तो अच्छा है। यह देश चला जाये। अपूर्व ट्रेटर नहीं है। स्वदेश को सम्पूर्ण हृदय से प्यार करता है। लेकिन बहुत ही दुर्बल है। हम लोग सदस्यों से भी अनुरोध कर सकते हैं कि अब सभा समाप्त कर दीजिए।" यह कहकर उन्होंने सुमित्रा की ओर देखा।

सुमित्रा उन्हें कभी तुम और कभी आप कहकर सम्मान के साथ सम्बोधित किया करती थी। अब भी उसी तरह बोली, "अधिकांश सदस्यों का मत जहां किसी व्यक्ति विशेष की शारीरिक शक्ति की तुलना में महत्वहीन हो, उसे और जो चाहे कहा जाए, सभा नहीं कह सकते। लेकिन इस नाटक का अभिनय कराने का ही अगर आपका इरादा था तो दोपहर के पहले ही क्यों नहीं बता दिया था?"

डाक्टर ने कहा, "अभिनय होता तो अच्छा होता। लेकिन विशेष स्थिति के कारण अगर अभिनय हो भी गया सुमित्रा तो यह तो तुम लोगों को मानना पड़ेगा कि अभिनय अच्छा ही रहा।

रामदास बोला, "ऐसा हो सकता है, मैंने सोचा भी नहीं था।"

डाक्टर बोले, "मित्रता नामक वस्तु कितनी क्षणभंगुर है इस बात को भी तुमने कभी सोचा था तलवलकर? ऐसा सत्य संसार में दुर्लभ ही है।"

कृष्ण अय्यर ने कहा, "तुम लोगों की बर्मा की एक्टिविटी समाप्त हो गई। अब भाग जाना पड़ेगा।"

डॉक्टर बोले, "पड़ेगा ही। लेकिन समय को देखते हुए स्थान छोड़ देना और एक्टिविटी छोड़ देना एक चीज नहीं है अय्यर, अगर बहुत दिनों

तक किसी स्थान पर निश्चिन्त भाव से रहने को जगह न मिले तो उसके लिए शिकायत करना हम लोगों को शोभा नहीं देता।" यह कहकर वे भारती को इशारा करके उठ खड़े हुए और बोले, "हीरासिंह, अपूर्वबाबू के बन्धन खोल दो। चलो भारती तुम लोगों को किसी निरापद स्थान पर पहुंचा दूं।"

हीरासिंह आदेश पालन करने के लिए बढ़ा तो सुमित्रा ने कठोर स्वर में कहा, "अभिनय के अन्तिम अंक में तालियां बजाने को जी चाहता है। लेकिन यह कोई बात नहीं है। बचपन में शायद कहीं किसी उपन्यास में पढ़ी थी। लेकिन यह युगल मिलन हम लोगों के सामने हो जाता तो और कहीं कोई कमी न रह जाती। क्या कहती हो भारती ?"

भारती लज्जा से मानो मर जाने की स्थिति में हो गई। डॉक्टर ने कहा, "लज्जित होने की तो इसमें कोई बात है नहीं भारती। बल्कि मैं तो चाहता हूं कि अभिनय समाप्त करने के जो मालिक हैं वे किसी दिन इसमें ज़रा सी भी कमी न रखें।" फिर जेब से सुमित्रा की पिस्तौल निकाल कर उसके पास रख कर बोले, "मैं इन लोगों को पहुंचाने जा रहा हूं। लेकिन भय की कोई बात नहीं है। मेरे पास पिस्तौल और भी है।"

डॉक्टर ने कनखिचों से ब्रजेन्द्र की ओर देखकर हंसते हुए कहा, "तुम लोग जो मज़ाक में कहा करते थे कि मैं उल्लू की तरह अंधेरे में भी देख लेता हूं। इस बात को तुम लोग आज भूल मत जाना।"

यह कहकर वे अपूर्व को अपने साथ लेकर बाहर जाने के लिए तैयार हो गए।

सहसा सुमित्रा खड़ी होकर बोली, "क्या फांसी की डोरी अपने ही हाथ से अपने गले में डाले बिना काम नहीं चल सकता ?"

डॉक्टर ने हंसते हुए कहा, "एक साधारण डोरी से डरने से कैसे काम चलेगा सुमित्रा ?"

किसी काम को हाथ में लेने से पहले मनुष्य को मृत्यु का भय दिखाना कितना अर्थहीन है। यह याद करके सुमित्रा स्वयं ही लज्जित हो गई। बोली, "सब कुछ तितर-बितर हो गया। लेकिन फिर कब भेंट होगी ?"

डॉक्टर ने कहा, "कोई आवश्यकता पड़ने पर ही होगी।"

"वह आवश्यकता कभी पड़ेगी।"

"ज़रूर पड़ेगी" यह कहकर अपूर्व और भारती को साथ लेकर वह सावधानी से नीचे उतर गए।

जो गाड़ी भारती को लेकर आई थी अभी तक खड़ी थी। गाड़ीवान को जगाकर उसमें तीनों बैठकर चल पड़े।

बहुत देर की खामोशी भंग करके भारती ने पूछा, "भैया, हम लोग कहां जा रहे हैं ?"

"अपूर्व के घर, "डॉक्टर ने उत्तर दिया।

लेकिन दो मील चलने के बाद जब गाड़ी रुकवा कर डॉक्टर उतरने लगे तो भारती ने आश्चर्य से पूछा, "यहां क्यों ?"

डॉक्टर ने कहा, "अब लौटूंगा। वे लोग प्रतीक्षा कर रहे होंगे, कुछ न कुछ निर्णय तो हो ही जाना चाहिए।"

"निर्णय ?"भारती व्याकुल होकर बोली, "यह न हो सकेगा। आप मेरे साथ चलिए।" लेकिन यह कहते ही भारती सुमित्रा की तरह उदास हो गई। फिर धीरे से बोली, "तुम्हारी मुझे बहुत जरूरत है भैया।"

"मैं जानता हूं। अपूर्व बाबू, क्या परसों जहाज से घर जा सकेंगे ?"

अपूर्व बोला, "जा सकूंगा।"

भारती बोली, "भैया मुझे घर जाना होगा।"

डॉक्टर बोले, "नहीं। तुम्हारे कागज पत्र, पथ के दावेदार का खाता, पिस्तौल-कारतूस—नवतारा सब हटा चुकी होगी। सुबह तलाशी में देशी शराब की बोतल और टूटा हुआ बेहला, पुलिस के साहब को इसके अलावा और कुछ हाथ नहीं लगेगा। कल नौ-दस बजे के लगभग घर लौटकर रसोई तैयार करके खाने-पीने के बाद तुम्हें जरा सा सो रहने के लिए भी शायद समय मिल जायगा। रात को दो-तीन बजे के लगभग फिर मिलूंगा। कुछ खाने-पीने को रखना।"

भारती चुप रही। मन-ही-मन बोली, इस तरह अत्यधिक सजग न होने पर क्या इस मरणयज्ञ में कोई साथ आना चाहता है ?

"भैया, तुम सबके हित-अहित की चिन्ता रखते हो। संसार में मेरा अपना कोई नहीं है। अपने पथ के दावेदार से मुझे विदा मत कर देना भैया।"

अंधेरे में ही डॉक्टर ने बारबार सिर हिलाकर कहा, "भगवान के काम से किसी को विदा कर देने का अधिकार किसी को नहीं है लेकिन इसकी धारा तुम्हें बदल देनी पड़ेगी।"

भारती ने कहा, "तुम्हीं बदल देना।"

डॉक्टर ने इसका उत्तर नहीं दिया। सहसा व्यग्र होकर बोले, "भारती अब मेरे पास समय नहीं है। मैं जा रहा हूं।" यह कहकर पलक झपकते ही अंधेरे में गुम हो गए।

उन्नीस

स्थान की कमी के कारण गाड़ी में दोनों एक दूसरे से सटकर बैठे थे। एक घंटे तक गाड़ी घरघराती हुई चलती रही। लेकिन दोनों में कोई बातचीत नहीं हुई। गाड़ी आकर अपूर्व के घर के दरवाजे पर रुक गई। भारती दरवाजा खोलकर अपूर्व के साथ उतर आई। उसने गाड़ीवान से पूछा, "कितना किराया हुआ?"

गाड़ीवान ने हंस कर कहा, "नाट ए पाई—गुडनाइट टू यू।" यह कह कर गाड़ी हांकता हुआ चला गया।

भारती ने पूछा, "तिवारी है?"

"हां।"

ऊपर जाकर, दरवाजा खटखटा कर अपूर्व ने तिवारी को जगाया। किवाड़ खोलकर दीपक की रोशनी में तिवारी की नजर सबसे पहले भारती पर पड़ी। अपूर्व कल आफिस गया था और आज भोर की वेला में घर लौटा है। रात बिता कर। साथ में भारती है। इसलिए तिवारी को समझने के लिए कुछ बाकी नहीं रहा। क्रोध से उसका सम्पूर्ण शरीर जलने लगा और बिना कुछ कहे ही वह तेजी से अपने बिस्तर पर जाकर चादर ओढ़ कर सो गया।

तिवारी भारती को बहुत प्यार करता था। एक दिन इसी ने उसे आसन्न मृत्यु के मुंह से बचाया था। इसलिए ईसाई होने पर भी श्रद्धा की दृष्टि से देखता था। लेकिन इधर कुछ दिनों से जो परिस्थिति उत्पन्न हुई थी उससे तिवारी के मन में अपूर्व के संबंध में तरह-तरह की संभव असंभव समझकर दुश्चिन्ताएं जग उठी थी। यहां तक कि जाति नष्ट होने तक की। सर्वनाश की वह मूर्ति आज एकदम तिवारी के मन पटल पर साकार अंकित हो उठीं।

उसे इस तरह सो जाते देखा अपूर्व ने पूछा, "किवाड़ बन्द नहीं किए तिवारी?"

भारती बोली, "मैं बन्द कर देती हूं।"

अपूर्व ने अपने सोने के कमरे में जाकर देखा, बिछौना ज्यो का त्यों पड़ा है।

भारती बोली, "आप आराम कुर्सी पर बैठिए। मैं सब ठीक कर देती हूं।"

अपूर्व ने पुकारा, "तिवारी, एक गिलास पानी ला दे ।"

पानी की सुराई और गिलास की ओर इशारा करके बिछौना बिछाती हुई भारती बोली, "सोते हुए आदमी को क्यों जगाते हैं अपूर्वबाबू, आप ही ले लीजिए ।"

एक ही सांस में गिलास खाली करके अपूर्व बैठने जा रहा था कि भारती ने कहा, "अब वहां नहीं, बिछौने पर सो जाइए ।"

अपूर्व शान्त बालक की तरह लेट गया। मसहरी डालकर भारती उसे चारों ओर से दबाने लगी तो अपूर्व ने पूछा, "तुम कहां सोओगी ?"

भारती ने आराम कुर्सी की ओर उंगली उठाकर कहा, "सवेरा होने में अब घंटा भर रह गया है । आप सो क्यों नहीं जाते ?"

अपूर्व ने उसका हाथ पकड़ कर कहा, "वहां नहीं, मेरे पास बैठो ।"

"आपके पास ?" भारती के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा । अपूर्व और चाहे जैसा भी हो, इन मामलों में वह कभी आत्म विस्मृत नहीं होता था । कितनी ही रातें उन्होंने एक कमरे में बिताई थीं । लेकिन मर्यादा के विरुद्ध उसके आचरण से कोई इशारा या बात प्रगट नहीं हुई थी ।

अपूर्व ने कहा, "यह देखो, उन लोगों ने मेरा हाथ तोड़ दिया तुम मुझे इन लोगों के बीच क्यों खींच ले गईं ।"

उसकी बात का अन्तिम अंश सहसा रुलाई से रूंध गया । भारती मसहरी को एक ओर से उठाकर उसके पास बैठ गई । जांच करके उसने देखा, कसकर बांधने के कारण हाथों में जगह-जगह काली नसें उभर कर फूल आई हैं । अपूर्व की आंखों में से आंसू गिर रहे थे । भारती ने आंचल से उन्हें पोंछ कर सान्त्वना भरे स्वर में कहा, "डर की कोई बात नहीं । मैं तोलिया भिगाकर लपेट देती हूं । दो-एक दिन में सब ठीक हो जायगा ।" यह कहकर वह उठ गई और स्नान घर से एक अंगोछा भिगो कर ले आई और उसे हाथ पर बांधकर बहुतही कोमल स्वर में बोली, "जरा सो जाने की कोशिश कीजिए, मैं आपके माथे पर हाथ फेर देती हूं ।" यह कहकर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगी ।

अपूर्व बोला, "कल जहाज मिलता तो कल ही चला जाता ।"

भारती बोली, "परसों ही चले जाइएगा ।"

"गुरुजनों की बात न मानने का यह फल है । मां ने मुझे मना किया था ।"

"मां शायद आप को आने देना नहीं चाहती थीं ।"

"लेकिन मैंने अनसुना कर दिया । उसी का यह फल हुआ । होनहार

होकर रहता है। दुर्गा-दुर्गा कहते हुए परसों जहाज पर बैठ जाऊं," कह-कर उसने लम्बी साँस ली।

लेकिन इसके साथ ही दूसरे व्यक्ति ने जो उसकी सांस की अपेक्षा सैकड़ों गुना गहरी सांस ली, वह उसे नहीं जान सका।

अपूर्व बोला, "इस मकान में पांव धरते ही तुम्हारे पिता से झगड़ा हुआ, अदालत में जुर्माना हुआ। मुझे इसी से चेत जाना चाहिए था।"

भारती चुप रही।

"तिवारी ने मुझे बार-बार सावधान किया। पांच सौ रुपए महीने की नौकरी चली गई। इस उम्र में कितने लोग पाते हैं। फिर यह हाथ मैं लोगों के सामने दिखाऊंगा कैसे?"

भारती ने धीरे-धीरे कहा, "तब तक हाथ के दाग मिट जायेंगे।"

उसके मुंह से इससे अधिक बात नहीं निकली। अपूर्व के सिर पर जो हाथ फिरा था वह हाथ अब चलना नहीं चाहता था। इस अत्यन्त साधारण और तुच्छ व्यक्ति को वह मन ही मन प्यार करने लगी है। इस बात को अनुभव करके वह अपने आप ही लाज के मारे मर सी गई। यह बात उसके दल के बहुत से लोग जान गए हैं। आज अपूर्व की जान बचाने जाकर वह उन सबके सामने अपराधिनी और सुमित्रा की नज़रों में छोटी हो गई है। लेकिन इस अत्यन्त तुच्छ व्यक्ति की हत्या करने की नीचता—और ओछे पन से वह उन लोगों को बचा सकी है। इस बात को मानकर उसे गर्व को अनुभव भी हुआ।

अपूर्व बोला, "दाग तो सहज में जायेगा नहीं। कोई पूछेगा। तो क्या उत्तर दूंगा? इसीलिए तो लोग कहा करते हैं कि बंगालियों के लड़के बी०ए—एम० ए० पास तो कर लेते हैं, लेकिन बड़ी नौकरी नहीं संभाल सकते।"

"अच्छा, अब सो जाइए" यह कहकर भारती उठ खड़ी हुई।

"माथे पर थोड़ी देर और हाथ फेर दो भारती।"

"नहीं, मैं बहुत थक गई हूं।"

"तो रहने दो, रात भी अब बाकी नहीं रही।"

भारती पास की कोठरी में डेक चेयर पर जा बैठी। अपूर्व के कमरे में अच्छी आराम कुर्सी थी। लेकिन उस तुच्छ आदमी की उपस्थिति में एक ही कमरे में रात बिताने में आज उसे अत्यन्त लज्जा महसूस हुई। उसे खयाल आया कि किस तरह और कितनी अगाध करुणा से अपूर्व सुनिश्चित और आसन्न मृत्यु से मुक्ति पा गया है।

लेकिन इतनी बड़ी बात वह जैसे एकदम भूल ही गया है। उसने अपने

घनिष्ट मित्र तलवलकर के प्रति, अपने दल के प्रति और विशेष रूप से उस डॉक्टर के प्रति कैसा जघन्य अपराध किया है, यह बात उसे याद ही नहीं है। चिन्ता है तो केवल बड़ी नौकरी और हाथों के दाग की।

जब भारती को सामने वाली खुली खिड़की से भोर का उजाला दिखाई दिया तो उसने चुपचाप द्वार खोला और तेजी से पैर बढ़ा कर सड़क पर पहुंच गई।

बीस

अगले दिन तीसरे पहर सभी बातों और सारी घटनाओं का विस्तार से एक-एककर वर्णन कर चुकने के बाद अन्त में भारती ने कहा—"अपूर्व बाबू महान पुरुष हैं, ऐसा समझने की भूल मैंने कभी नहीं की लेकिन यह भी नहीं सोचा था कि वे इतने साधारण और तुच्छ आदमी हैं।"

डाक्टर सव्यसाची उसकी ओर देखकर गम्भीर स्वर में बोले, "लेकिन मैं जानता था। वह इतना तुच्छ न होता तो क्या तुम्हारे इस अथाह प्रेम को इतने तुच्छ कारण से छोड़कर चला जाता? जाने दो। जान बच गई बहिन।"

इधर-उधर बिखरी चीजों, विशेष रूप से फर्श पर बिखरी पड़ी पुस्तकों के ढेर देखने से ही यह बात समझ में आ जाती है कि कुछ देर पहले पुलिस इस कमरे की तलाशी ले चुकी है। उन सब को संवारकर रखती हुई भारती बातचीत कर रही थी। अपने हाथ का काम बन्द करके आश्चर्य से आंखें उठाकर बोली, "तुम हंसी कर रहे हो भैया?"

"नहीं तो?"

"ज़रूर कर रहे हो।"

डाक्टर बोले, "मुझ जैसे आदमी से, जो बम पिस्तौल लिए लोगों की हत्या करता फिरे ऐसे मजाक की आशा करती हो?"

भारती बोली, "मैं तो यह नहीं कहती कि तुम मनुष्यों की हत्या करते फिरते हो। यह काम तो तुम कर ही नहीं सकते। लेकिन मज़ाक के अतिरिक्त यह और क्या हो सकता है? दो-तीन घंटे के अन्दर ही जो सब कुछ भूलकर केवल हाथ के दाग और पांच सौ रुपए की नौकरी याद रख

सका उससे बढ़कर क्षुद्र व्यक्ति तो मैं दूसरा नहीं देख पाती। तुमने कहा था कि यह मेरा मोह है। अच्छी बात है अगर ऐसा हो तो आशीर्वाद दो कि मेरा यह मोह हमेशा के लिए दूर हो जाए और मैं पूरे तन-मन के साथ तुम्हारे देश काम में लग जाऊं।"

डाक्टर हंसकर बोले, "तुम्हारे मुंह की भाषा तो मोह काटने के लिए उचित ही मालूम हो रही है। इसमें बिल्कुल संदेह नहीं। लेकिन कठिनाई यह है कि तुम्हारे गले की आवाज में इसकी हल्की-सी झलक तक नहीं है। खैर, वह चाहे जो हो भारती, हमारे देश का काम तुम तिलभर नहीं कर सकोगी। तुम से तो अपूर्व बाबू ही बहुत अच्छे हैं, तुम लोगों में एक दिन समझौता भी हो सकता है।"

भारती बोली, "इसका अर्थ है कि मैं देश को प्यार नहीं सकती ?"

"अनेक परीक्षाएं देने से पहले कुछ नहीं कहा जा सकता।"

"भैया, मैं तुम्हारी सभी परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो सकूंगी। तुम्हारे काम में इतने स्वार्थ, इतने सन्देह और इतनी क्षुद्रता के लिए स्थान नहीं है।"

उसकी उत्तेजना पर डाक्टर हंस पड़े और फिर नाटकीय मुद्रा में अपने माथे को ठोकते हुए बोले, "हाय रे मेरे दुर्भाग्य, देश का अर्थ तुमने क्या समझ लिया है ? लम्बी-चौड़ी ज़मीन, नदी और पहाड़ ? केवल एक अपूर्व के कारण ही तुम्हें जीवन से अरुचि हो गई। वैरागिन होना चाहती हो। तुम यह नहीं जानती कि यहां सैकड़ों-हजारों अपूर्व ही नहीं उनके बड़े भाई लोग भी रहते हैं। और पराधीन देश का सबसे बड़ा अभिशाप यह कृतघ्नता ही तो है। जिसकी सेवा करोगी वे ही तुम्हें सन्देह की नज़रों से देखेंगे। जिनके प्राण बचाओगी, वे ही तुम्हें बेच देना चाहेंगे। मूर्खता और कृतनघ्ता पग-पग पर सुई की तरह पांव में चुभती रहेगी, यहां न श्रद्धा है, न सहनुभूति। कोई पास तक नहीं बुलाएगा। कोई सहायता देने नहीं आयेगा। विषैला नाग समझकर लोग दूर हट जायेंगे। देश को प्यार करने का यही पुरुस्कार है भारती। यदि इससे अधिक का दावा करना हो तो वह परलोक में ही हो सकता है। इतनी भयंकर परीक्षा तुम क्यों देने जाओगी बहिन। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि अपूर्व के साथ सुख से रहो। मैं निश्चित रूप से जानता हूं कि अपनी समस्त दुविधाओं और संस्कारों को दबाकर किसी दिन वह तुम्हारे मूल्य को अवश्य जान जायगा।"

भारती की आंखें आंसुओं से भर उठीं। कुछ देर चुपचाप मुंह झुकाए रहकर उसने पूछा, "क्या तुम मुझ पर विश्वास न कर पाने के कारण किसी तरह मुझे विदाकर देना चाहते हो भैया ?"

उसके इस सरल और संकोच रहित प्रश्न का कोई ऐसा ही सीधा-सा उत्तर शायद डाक्टर के होठों पर नहीं आया। हंसकर बोले, "तुम्हारी तरह ममता, माया कोई सहज में छोड़ सकता है बहिन ? लेकिन कल तुम अपनी आंखों से ही तो देख चुकी हो कि इसमें कितनी चोरी-छिपा या कितनी हिंसा और कितना भीषण क्रोध भरा हुआ है। तुम्हारी ओर देखने से लगता है कि तुम इन कार्यों के लिए नहीं हो। तुम्हें इसमें खींच लाना उचित नहीं हुआ। तुमसे काम लेने का एक दिन है—वह दिन जिस दिन मेरे लिए छुट्टी लेने का परवाना आएगा।"

इस बार भारती अपने आंसू न रोक सकी। लेकिन फौरन हाथ से पोंछकर बोली, "तुम भी अब इन लोगों के साथ मत रहो भैया।"

उसकी बात सुनकर डाक्टर हंस पड़े, बोले, "इस बार बहुत ही मूर्खता की बात हो गई भारती।"

भारती ने विचलित हुए बिना कहा, "मैं जानती हूं। लेकिन ये सभी लोग बहुत ही भयंकर और निष्ठुर हैं।"

"और मैं ?"

"तुम भी बड े निर्दयी हो।"

"सुमित्रा कैसी लगी भारती ?"

भारती का सिर झुक गया। लज्जा के कारण उत्तर न सकी। लेकिन उत्तर मांगा भी नहीं गया।

कुछ देर दोनों चुपचाप बैठे रहे। लेकिन इस छोटी-सी खामोशी में ही उस आश्चर्यमय व्यक्ति के उससे भी अधिक आश्चर्यमय हृदय के रहस्य से आवृत अन्तस्थल में सहसा बिजली-सी कौंध उठी।

लेकिन दूसरे ही पल डाक्टर ने सब कुछ दबाकर बच्चे की तरह सिर हिलाकर स्निग्ध स्वर में कहा, "अपूर्व के साथ तुमने बहुत बड़ा अन्याय किया है। भारती। इतना भयंकर कांड इसमें छिपा है इसकी उस बेचारे ने कल्पना भी शायद नहीं की होगी। तुमसे सच कहता हूं, इतना छोटा, इतना क्षुद्र वह बिल्कुल नहीं है। नौकरी करने विदेश में आया है, घर में मां है। भाई हैं। देश में बन्धु-बांधव हैं। सांसारिक उन्नति करके दस-पांच में बड़ा आदमी बनेगा यही उसकी आशा है। लिखना-पढ़ना सीखा है। भले आदमी का लड़का है। पराधीनता की लज्जा अनुभव करता है। और वह बंगाली लड़कों की तरह वास्तव में देश का कल्याण चाहता है। इसीलिए जब तुमने कहा कि पथ के दावेदार के सदस्य बन जाओ, तब उसने कह दिया, 'बहुत अच्छा।' तुम्हारी बात मान लेने से उसका कभी कोई अहित नहीं होगा, उसे विश्वास है। इस पराए देश में, आपद-विपद में तुम्ही एक

मात्र सहारा थीं। पर तुम ही उसे अचानक मृत्यु के मुंह में धकेल दोगी, क्या वह जानता था ?"

भारती ने आंख पोंछने के लिए मुंह नीचा करके कहा, "तुम उनके लिए इतनी वकालत क्यों करते हो ? वे इसके योग्य नहीं है। सारी बातें कल उनके मुंह से ही सुन चुकी हूं। इसके बाद उनपर श्रद्धा रखना उचित नहीं है।"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "जीवन में अगर एक अनुचित काम तुम कर डालोगी तो क्या होगा ? तुमने ध्यान से नहीं देखा भारती लेकिन मैंने देखा है। उन लोगों ने जब उसे रस्सी से बांधा तो वह अवाक हो गया। उन लोगों ने पूछा, 'तुमने ये सब बातें कहीं हैं।' उसने कहा, 'हां।' उन लोगों ने कहा, 'इसका दंड है मृत्यु, तुमको मरना होगा।'—इसके उत्तर में वह टकटकी बांधे ताकता रह गया। मैं जानता हूं, उस समय उसकी विह्वल आंखें किसी को खोज रही थीं। इसीलिए मैंने तुम्हें बुलाने के लिए आदमी भेजा था बहिन। अब उसने तुमको चाहे जो भी कुछ कहा तो भारती। लेकिन इस धक्के को वह अब तक शायद सम्भाल नहीं सका है।"

भारती अपने आप पर काबू न रख सकी। आंखों से झर-झर आंसू बहाते हुए बोली, "मुझे ये सब बातें सुना रहे हो भैया ? तुम से बढ़कर अधिक विपत्ति में और कोई नहीं पड़ा। फिर भी केवल मेरा मुंह देखकर उन्हें बचाने के लिए तुमने घर बाहर दुश्मन पैदा कर लिए।"

"यह बात तो है।"

"फिर तुम उनको बचाने क्यों गए। बताओ ?"

"अपूर्व को बचाने गया ? अरे छिः—मैं बचाने गया। भगवान की इस अमूल्य कृति को, जो वस्तु तुम लोगों की तरह असाधारण नारी को ध्यान में रखकर तैयार हुई है क्या कोई मूर्ख ऐसा है जो ब्रजेन्द्र जैसे बर्बरों को उसे नष्ट कर डालने के लिए दे देता ? केवल इतनी ही बात थी भारती।—केवल इतनी है। अन्यथा मनुष्य के प्राणों का मूल्य क्या हम लोगों की दृष्टि में कुछ है ? एक काणी कौड़ी के बराबर नहीं।"—कह कर डाक्टर हंसने लगे।

भारती ने आंखें पोंछते-पोंछते कहा, "क्या हंसते हो भैया ? तुम्हारी हंसी देखकर मेरे बदन में आग लग जाती है। जी चाहता है तुम्हें आंचल में बांधकर किसी जंगल में ले जाकर सदा के लिए छिपाकर रख दूं। जो लोग तुम्हें पकड़कर फांसी देंगे, वे ही क्या तुम्हारा मूल्य जानते हैं ? उन्हें क्या यह ज्ञान हो जायगा कि उन्होंने संसार का कितना बड़ा सर्वनाश कर

डाला है ? अपने देश के ही आदमी तुमको हत्यारा डाकू, खून का प्यासा, न जाने क्या-क्या कहते हैं। लेकिन मैं सोचती हूं कि तुम्हारे हृदय में इतना स्नेह, और इतना करुणी है, कि तुम इन लोगों के साथ कैसे हो ?"

डाक्टर ने कहा, "तुम्हें एक कहानी सुनाता हूं। नीलकान्त जोशी नाम का एक मराठा युवक था। तुमने उसे नहीं देखा। लेकिन मैंने जब से तुम्हें देखा है, उसकी याद आती रहती है। वह भी ठीक तुम्हारे जैसा ही था। रास्ते में मुर्दे को ले जाते देखकर उसकी आँखों से आँसू गिरने लगते थे। एक रात हम दोनों ने कोलम्बो के एक पार्क में आश्रय लिया। पेड़ के नीचे पड़ी एक बेंच पर सोने के लिए गए तो देखा तो उस पर एक आदमी सोया पड़ा है। आदमी की आहट पाते ही वह कहने लगा—'पानी—पानी—।' चारों ओर असह्य दुर्गन्ध आ रही थी। दियासलाई जलाकर उसके मुंह की ओर देखते ही समझ में आ गया कि उसे हैज़ा हो गया है। नीलकान्त उसकी बीमारी में लग गया। पौ फटने लगी तो मैंने कहा, 'जोशी, यह आदमी सांझ के अंधेरे में नौकरों की नज़र से बचकर इस पार्क में रह गया है। लेकिन सबेरा होने पर यह यहां नहीं रहने पायेगा। हम लोग वारन्ट शुदा मुजरिम है। यह तो मरेगा ही साथ ही हम लोग भी फंस जायेंगे चलो, यहां से खिसक चलें।'—नीलकान्त रोने लगा। बोला, 'इस हालत में इसे छोड़कर कैसे चला जाऊं भाई। तुम जाओ। मैं यहीं रह जाता हूं।" मैंने बहुत समझाया, लेकिन जोशी को वहाँ से नहीं हिला सका।"

भारती ने भयभीत होकर पूछा, "इसके बाद क्या हुआ ?"

डाक्टर ने कहा, "समझदार आदमी था। सबेरा होने से पहले ही उसने आंखें मूंद लीं। तब मैं नीलकांत को वहां से हटा सका। पलभर मौन रहकर, लम्बी सांस भरकरवे बोले, "सिंगापुर में जोशी को फांसी हो गई। सेना के सैनिकों के नाम बता देने पर उसे क्षमा किया जा सकता था गवर्नमेंट ने बहुत कोशिशें कीं। लेकिन जोशी ने जो एक बार मना किया तो फिर उसमें कोई अन्तर नहीं हुआ। अन्त में उसे फांसी दे दी गई। जिनके लिए उसने प्राण दिए, उन्हें वह अच्छी तरह पहचानता भी नहीं था अब भी ऐसे लड़के इस देश में जन्म लेते हैं भारती। नहीं तो मैं भी शेष जीवन तुम्हारे आँचल के नीचे छिपकर बिता देने को सहमत हो जाता।"

भारती ने एक लम्बी सांस ली।

डाक्टर बोले, "नर हत्या करना मेरा व्रत नहीं है वहिन।"

"लेकिन आवश्यकता पड़ने पर ?"

"लेकिन ब्रजेन्द्र की आवश्यकता और सव्यसाची की आवश्यकता एक नहीं है।"

भारती बोली, "मैं जानती हूं। लेकिन मैं तुम्हारी ही आवश्यकता की बात पूछ रही हूं भैया।"

डाक्टर ने यह सुनकर धीरे-धीरे कहा, "मेरी उस आवश्यकता का दिन कब आयेगा कौन जानता है? लेकिन भारती तुम यह जानना मत चाहो। उसके स्वरूप को तुम कल्पना में भी सहन न कर पाओगी।"

"इसके अतिरिक्त क्या और कोई मार्ग नहीं है?"

"नहीं।"

भारती हत बुद्धि सी हो गई। व्याकुल होकर बोली, "इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं हो सकता भैया?"

"नहीं, मार्ग अवश्य है। स्वयं को भुलावे में डालने के अनेक मार्ग हैं लेकिन सत्य तक पहुंचने के लिए और कोई दूसरा मार्ग नहीं है।"

भारती स्वीकार न कर सकी। मधुर स्वर में बोली, "भैया, तुम ज्ञानी हो। इस एकमात्र लक्ष्य को सामने रखकर तुम संसार भर में घूम आए हो। तुम्हारी जानकारियों की सीमा नहीं है। मैंने तुम जैसा महान व्यक्ति और कोई नहीं देखा। मुझे तो ऐसा लगता है कि तुम्हारी सेवा करते हुए मैं सारा जीवन बिता सकती हू। तुम्हारे साथ मेरा तर्क करना शोभा नहीं देता। बोलो, मेरे अपराध क्षमा कर दोगे?"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "भला तुमने क्या अपराध किया है?"

भारती उसी स्निग्ध विनय से बोली, "मैं ईसाई हूं। बचपन से ही अंग्रेजों को अपना आत्मीय समझकर इतनी बड़ी हुई हूं। आज उनके प्रति मन में घृणा पैदा करते हुए बहुत कष्ट होता है। लेकिन यह बात तुम्हारे अतिरिक्त और किसी के सामने नहीं कह सकती। फिर भी तुम लोगों की तरह ही मैं भारतवर्ष के बंग देश की लड़की हूं। मुझ पर अविश्वास मत करो।"

उसकी बात सुनकर डाक्टर ने स्नेहपूर्वक अपना दायां हाथ उसके माथे पर रखकर कहा, "यह आशंका क्यों करती हो भारती, तुम जानती हो तुम पर मेरा कितना विश्वास है। तुम्हें कितना स्नेह करता हूं।"

भारती बोली, "जानती हूं। और क्या मेरी ओर से ठीक यही बात तुम नहीं जानते भैया? तुम्हें भय नहीं है। तुमको भय दिखाया भी नहीं जा सकता। केवल इसीलिए तुमसे नहीं कह सकती कि तुम अब इस मकान में मत आना। लेकिन यह भी जानती हूं कि आज रात के बाद फिर कभी—नहीं नहीं, सो नहीं। शायद बहुत दिनों तक फिर भेंट न हो। उस दिन जब तुमने सारी अंग्रेज जाति पर भीषण आरोप लगाया था, मैंने प्रतिवाद नहीं किया था। लेकिन ईश्वर से निरन्तर यही प्रार्थना करती रही

हूं कि इतना बड़ा विद्वेष कहीं तुम्हारे अन्तर के सम्पूर्ण सत्य को ढक न दे। भैया, फिर भी मैं तुम लोगों की ही हूं।"

डाक्टर बोले, "मैं जानता हूं तुम हमारी हो।"

"तो इस मार्ग को तुम त्याग दो।"

डाक्टर चौंक पड़े, "कौन सा मार्ग ?"

"विप्लववादियों का यह मार्ग।"

"छोड़ने को क्यों कहती हो ?"

भारती ने कहा, "तुमको मैं मरने नहीं दे सकती। सुमित्रा मरने दे सकती है, लेकिन मैं नहीं। मैं भारत की मुक्ति चाहती हूं—निष्कपट और निस्संकोच भाव से। दुर्बल, पीड़ित और भूखे-नंगे भारतवासियों के लिए अन्न-वस्त्र चाहती हूं। स्वाधीनता के आनन्द का उपभोग करना चाहती हूं। इतने बड़े सत्य तक पहुंचने के लिए इस निर्मम कार्य के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है, मैं ऐसा सोच भी नहीं सकती। विश्व भ्रमण करके तुमने केवल इसी मार्ग को जाना है। सृष्टि के आरम्भ से आज तक के स्वाधीनता के सैकड़ों तीर्थयात्रियों के पद चिह्न ही तुम्हारी दृष्टि में स्पष्ट हो उठे हैं। लेकिन विश्व मानव की एकान्त सदबुद्धि की धारा क्या इस प्रकार समाप्त हो गई है कि इस रक्त रेखा के अतिरिक्त किसी मार्ग का चिह्न कभी दिखाई ही नहीं देगा ? ऐसा निष्ठुर विधान किसी प्रकार भी सत्य नहीं हो सकता। भैया, मानव की इतनी बड़ी परिपूर्णता तुम्हारे अतिरिक्त मैंने और कहीं भी नहीं देखी। निष्ठुरता के बहु प्रचलित मार्ग पर अब तुम मत चलो। वह द्वार शायद आज भी बन्द है। उसे हम लोगों के लिए खोल दो। विश्व के समस्त प्राणियों को प्यार करते हुए हम तुम्हारा अनुसरण करते हुए बढ़ते रहें।"

भारती के सिर पर हाथ रखकर, दो-चार बार थपकियां देकर डाक्टर बोले, "अब समय नहीं है बहिन, मैं जा रहा हूं।"

"कोई उत्तर नहीं दोगे भैया ?"

"भगवान तुम्हारा भला करें," उत्तर में बस इतना कहकर डाक्टर धीरे-धीरे बाहर निकल गए।

इक्कीस

जलमार्ग से आने वाले शत्रु के जलयानों को रोकने के लिए नगर के

अन्तिम छोर पर नदी के किनारे मिट्टी का एक छोटा-सा किला है। उसमें सन्तरी अधिक नहीं रहते। केवल तोपें चलाने के लिए कुछ गोरे गोलादाज रहते हैं। अंग्रेजों के इस विघ्नहीन शान्तिकाल में यहां विशेष कड़ाई नहीं थी। प्रवेश की मनाही है। लेकिन अगर कोई भूला-भटका व्यक्ति सीमा के अन्दर पहुंच जाता है तो उसे भगा देते हैं। बस इतना ही। भारती कभी-कभी अकेली यहां आ बैठती थी। जिन लोगों पर किले की रक्षा का भार था उन लोगों ने उसे देखा न हो ऐसी बात नहीं थी। लेकिन शायद भले घर की महिला समझ कर वे लोग आपत्ति नहीं करते थे।

सूर्य अभी-अभी अस्त हुआ था। अंधेरा होने में अभी कुछ देर थी। पक्षियों की आवाजें इधर-उधर मंडला रही थीं।

सहसा नदी के दायीं ओर के मोड़ से एक छोटी-सी शेम्पेन नाव सामने आ गई। नाव में मल्लाह के अतिरिक्त और कोई नहीं था। भारती के चेहरे की ओर देखकर उसने अपनी बंगला भाषा में कहा, "मां, उस पार जाओगी? एक आना देने से ही उस पार पहुंचा दूंगा।"

भारती बोली, "नहीं।"

मल्लाह ने कहा, "अच्छा दो पैसे ही दे दो—चलो।"

भारती बोली, "नहीं भैया, मेरा घर इसी पार है।"

मल्लाह गया नहीं। जरा हंसकर बोला, "पैसा न हो तो न दो। चलो तुम्हें घुमा लाऊं," यह कहकर उसने नाव घाट पर लगा दी।

भारती भयभीत हो उठी। अन्धेरा और निर्जन स्थान। वह जानती थी कि चटगांव के मुसलमान मल्लाह बहुत ही दुष्ट होते हैं। खड़ी होकर क्रुद्ध स्वर में बोली, "चले जाओ। वरना पुलिस बुला लूंगी।"

मल्लाह डर कर रुक गया। उसकी उम्र पचास से ऊपर पहुंच चुकी है लेकिन अभी तक शौक नहीं गया। वेल-बूटेदार लुंगी पहने है। लेकिन तेल और मैल से वह बहुत ही गंदी हो गई है। शरीर पर कीमती फ्राक कोट है जिसमें जरी की पाढ़ है लेकिन जैसा वह गन्दा है वैसा ही फटा भी है। शायद किसी पुराने कपड़ों की दुकान से खरीदा गया है। सिर पर वेलदार चिथेड़ की टोपी है।

सहसा पहचानकर भारती बोली, "भैया, आपका चेहरा चाहे जैसा ही क्यों न हो, आप तो गले की आवाज तक को बदल कर उसे मुसलमान बना चुके हो।"

मल्लाह बोला, "जाऊं या पुलिस को बुला रही हो।"

भारती बोली, "पुलिस को बुलाकर तुमको गिरफ्तार करा देना ही उचित होगा। अपूर्व बाबू की इच्छा को अपूर्ण क्यों रहने दूं।"

मल्लाह बोला, "उसी की बात कर रहा हूं। आओ। ज्वार अब अधिक देर तक नहीं रहेगा। अभी दो कोस रास्ता चलना है।"

भारती नाव पर जा बैठी। उसे ठेलकर डाक्टर साहब पक्के मल्लाह की तरह आगे बढ़े। जैसे दोनों हाथों से पतवार चलाना ही उनका पेशा हो।

"लामा जहाज चला गया, देख लिया ?" उन्होंने पूछा।

"हां।"

"अपूर्व उस ओर के फर्स्ट क्लास वाले डेक पर थे।"

"नहीं।"

डाक्टर बोले, "उनके डेरे पर या आफिस में जाने का कोई उपाय नहीं था। इसलिए जेटी के एक ओर शेम्पेन लगाकर मैं ऊपर खड़ा था। हाथ उठाकर सलाम करते ही—?"

भारती ने बेचन होकर कहा, "किसके लिए ?—किसके कारण इतना बड़ा और भयानक काम तुम करने गए थे भैया ?"

डाक्टर ने सिर हिलाकर कहा, "मैं ठीक उसी कारण से गया था जिस कारण तुम यहां अकेली बैठी हो बहिन।"

भारती रोती हुई बोली, "नहीं, बिल्कुल नहीं। यहां तो मैं अक्सर ही आती रहती हूं। किसी के लिए नहीं आती। क्या उन्होंने तुम्हें पहचान लिया ?"

"नहीं।" डाक्टर ने कहा, "दाढ़ी-मूंछें बढ़ाना सहज काम नहीं है। लेकिन मैं चाहता था कि अपूर्वबाबू मुझे पहचान लेते। पर वे इतने व्यस्त थे कि मुझे देखने की उन्हें फुर्सत ही नहीं थी।"

"इसके बाद क्या हुआ ?"

"विशेष कुछ नहीं।"

"विशेष कुछ नहीं हुआ, यह तो मेरे भाग्य की बात है। पहचान लेने पर वे तुम्हें गिरफ्तार करा देते। और इस अपमान से बचने के लिए मुझे आत्महत्या करनी पड़ती। नौकरी चली गई, लेकिन प्राण तो बच गए।"

डाक्टर चुपचाप नाव खेने लगे। कुछ देर मौन रहकर भारती ने पूछा, "क्या सोच रहे हो भैया ?"

"बताओ तो जानूं।"

"बताऊं ?—तुम सोच रहे हो कि भारती लड़की होकर भी मनुष्य को मेरी अपेक्षा अधिक पहचान सकती है अपनी प्राण रक्षा के लिए कोई भी पढ़ा-लिखा आदमी इतनी नीचता कर सकता है—लज्जा नहीं, कृतज्ञता नहीं, मोह, ममता नहीं—खबर नहीं दी, खबर लेने की कोशिश नहीं

की। भय के कारण जानवर की तरह भाग गए। मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। लेकिन भारती असंदिग्ध रूप से जान गई थी—'यही सोच रहे हो न भैया'?"

डाक्टर ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"मेरी ओर एक बार देखो न भैया?"

डाक्टर ने ज्यों ही भारती की ओर देखा, उसके होठ थर-थर कांपने लगे। बोली, "मनुष्य होकर मनुष्यता की कहीं भी कोई बात नहीं, यह कैसे हो सकता है भैया?"

यह कहकर उसने दोनों दांतों को भींचकर अपने होठों का कांपना रोक लिया। लेकिन आँखों की कोरों से आँसू बहने लगे।

डाक्टर ने न तो सहमति प्रगट की, न प्रतिवाद किया। सान्त्वना तक की कोई बात उसके मुंह से नहीं निकली। केवल क्षण भर के लिए ऐसा लगा जैसे उसकी सुरमा लगी आंखों की दीप्ति कुछ फीकी पड़ गई हो।

इरावती की यह छोटी शाखा कम गहरी और कम चौड़ी होने के कारण इसमें स्टीमर और बड़ी नावें नहीं चलती थीं। नाव कहाँ जा रही है भारती को पता नहीं था।

अचानक एक बहुत बड़े वृक्ष की ओट में वेलों और वृक्षों से भरे नाले में नाव घुसने लगी तो यह देखकर उसने चकित होकर पूछा, "मुझे कहाँ ले जा रहे हो भैया?"

"अपने डेरे पर।"

"वहाँ और कौन रहता है?"

"कोई नहीं।"

"मुझे मेरे डेरे पर कब पहुँचाओगे?"

"पहुँचा दूंगा। आज रात या कल सवेरे।"

भारती बोली, "नहीं भैया, यह नहीं हो सकता। मुझे जहाँ से लाए हो वहीं पहुँचा दो।"

"लेकिन मुझे तुमसे बहुत-सी बातें कहनी हैं भारती।"

भारती ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसी तरह सिर हिलाकर आपत्ति प्रगट करती हुई बोली, "नहीं, मुझे वापस पहुँचा आओ।"

"लेकिन क्यों? क्या तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं?"

भारती सिर झुकाए चुप बैठी रही।

डाक्टर ने कहा, "तुमने इस प्रकार कितनी ही रातें अपूर्व के साथ बिताई हैं। क्या वह मुझसे भी बढ़कर विश्वासपात्र था तुम्हारा?"

भारती चुप रही। उसने हां ना, कुछ भी नहीं कहा।

नाले में जितना अंधेरा था उतना ही वह तंग भी था। दोनों किनारों पर खड़े पेड़ों की डालियाँ बीच-बीच में उनके शरीर पर आकर लगने लगीं।

डाक्टर ने कहा, "भारती, आज मैं तुम्हें जहाँ ले जा रहा हूँ वहाँ से तुम्हारा उद्धार कर सके, संसार में ऐसा कोई नहीं है। लेकिन मेरे मन की बात समझने में शायद अब कुछ शेष न रहा होगा।"

यह कहकर वे ज़ोर से हँसने लगे। अंधेरे में उनके चेहरे को भारती न देख सकी। लेकिन उनकी हँसी ने जैसे उसे धिक्कारा। मुंह ऊपर उठाकर शंकारहित स्वर में बोली, "तुम्हारे मन की बात समझ सकूं इतनी बुद्धि मुझ में नहीं है। लेकिन मैं तुम्हारे चरित्र से परिचित हूं। अकेली रहना मेरे लिए उचित नहीं है इसीलिए कह रही हूं भैया, मुझे क्षमा करो।

डाक्टर ने कुछ देर चुप रहकर स्वाभाविक शान्त स्वर में कहा, "भारती, तुम्हें छोड़कर आने में मुझे कष्ट होता है। तुम मेरी बहिन हो, मेरी माँ हो—यदि स्वयं पर यह विश्वास न होता तो मैं इस रास्ते में नहीं आता। लेकिन तुम्हारा मूल्य दे सके ऐसा मनुष्य मेरे अतिरिक्त संसार में और कोई नहीं है। इसके सौवें अंश का भी एक अंश अगर अपूर्व समझ जाता तो उसका जीवन सार्थक हो जाता। तुम संसार में लौट जाओ दीदी। हम लोगों के बीच अब मत रहो। केवल तुम्हारी बात कहने के लिए ही मैं अपूर्व से मिलने गया था।"

भारती चुप रही। आज एक बात तक न कहकर अपूर्व चला गया। नौकरी करने बर्मा आया था। थोड़े दिनों का ही तो परिचय था।

वह ब्राह्मण का सदाचारी लड़का है। उसका देश है, समाज है, घर-द्वार है, आत्मीय-स्वजन हैं। और भी क्या-क्या हैं। और भारती ईसाई की लड़की है। उसका देश नहीं। घर नहीं। माता-पिता नहीं। अपना कहने के लिए कोई भी नहीं है।

पास ही पेड़-पौधों के बीच हल्की-सी रोशनी दिखाई देने लगी। डाक्टर ने इशारा करके कहा, "यहीं मेरा डेरा है। खूब आजाद था। पता नहीं कैसी माया में जकड़ गया हूँ। तुम्हारे लिए ही चिन्ता में पड़ा हूँ। तुम्हें एक निरापद आश्रय मिल गया है, काश जाने से पहले इतना ही देख लेता।"

भारती आँसू पोंछकर बोली, "मैं तो अच्छी हूँ भैया।"

डाक्टर ने एक लम्बी साँस लेकर कहा, "कहाँ अच्छी तरह हो बहिन। मेरे एक आदमी ने आकर बताया कि तुम घर में नहीं हो। सोचा,

तुम्हें जेटी पर पा सकूंगा। वहां जाने पर तुम से भेंट न हो सकी। अभागा तुम्हारा चैन लेकर ही नहीं। भागा, तुम्हारा साहस भी छीन ले गया है।"

इस बात बात का पूरा अर्थ न समझकर भारती चुप ही रही।

डाक्टर ने कहा, "उस दिन रात को निश्चिन्त मन से मेरे लिए बिछौना छोड़कर तुम नीचे सो गई थीं। तुमने हँसकर कहा था—'भैया, तुम क्या इन्सान हो जो तुमसे डर लगेगा। तुम सो जाओ। लेकिन आज वह साहस नहीं रहा। अपूर्व निर्भर करने योग्य मनुष्य नहीं है। फिर भी वह पास ही था। इसलिए शायद ऐसी आशंका तुम्हारे मन में कल भी पैदा नहीं हुई। आश्चर्य तो यह है कि तुम जैसी लड़की की भय मुक्त स्वाधीनता को भी उस जैसा असमर्थ मनुष्य इतनी आसानी से तोड़कर जा सकता है।"

भारती मीठे स्वर में बोली, "लेकिन उपाय क्या है भैया ?"

"उपाय शायद न हो। लेकिन बहिन, तुम्हारे चरित्र पर सन्देह करने वाला आज कोई नहीं है। फिर अगर तुम्हारा ही मन रात-दिन स्वयं पर सन्देह करता रहे तो तुम जीओगी कैसे ?"

इस तरह अपने हृदय का विश्लेषण करके देखने का समय भारती के पास नहीं था। उसकी श्रद्धा और आश्चर्य की सीमा न रही, लकिन वह मौन ही रही।

डाक्टर बोले, मैं एक और लड़की को जानता हूँ। वह रूसी है लेकिन उसकी बात जाने दो। कब तुम लोगों की भेंट होगी नहीं जानता। लेकिन लगता है एक दिन ज़रूर होगी। भगवान करे कि न हो। तुम्हारे प्रेम की तुलना नहीं है। वहां से अपूर्व को कोई हटा नहीं सकेगा। लेकिन स्वयं को उसके ग्रहण करने योग्य बनाए रखने की आज से जो अत्यन्त सतर्कतापूर्ण जीवनव्यापी साधना आरम्भ होगी, उसकी प्रतिदिन के असम्मान की ग्लानि तुम्हारे मनुष्यत्व को एकदम छोटा बना देगी भारती। जहाँ ऐसे शुद्ध-पवित्र हृदय का मूल्य नहीं वहां मन को इसी तरह बहलाना पड़ता है। कौन जाने भाग्य में उतने दिनों तक जीवित रहने का समय मेरे लिए है या नहीं। लेकिन यदि हो दीदी तो बहिन कहकर गर्व करने के लिए सव्यसाची के पास कुछ भी शेष नहीं रहेगा।"

भारती ने पूछा, "तो तुम मुझे क्या करने को कहते हो ? तुमने ही तो मुझसे बार-बार संसार में लौट जाने को कहा था।"

"लेकिन सिर नीचा करके जाने को नहीं कहा था।"

"लेकिन स्त्रियों का ऊँचा सिर तो कोई भी पसन्द नहीं करता।"

"तब मत जाना।"

भारती ने हंसकर कहा, "तुम निश्चिन्त रहना भैया मेरा जाना नहीं हो सकेगा। सारे रास्तों को अपने हाथ से बन्द करके केवल एक रास्ता खोल रखा था, वह भी आज बन्द हो गया। यह तुम देख आए हो। अब जो रास्ता तुम मुझे दिखा दोगे उसी रास्ते से चलूंगी। मेरी केवल इतनी-सी प्रार्थना स्वीकार कर लेना कि अपने भयंकर रास्ते पर मुझे मत बुलाना। भगवान के समान अप्राप्य वस्तु को पाने के भी जब इतने मार्ग हैं तब तुम्हारे लक्ष्य तक पहुंचने के लिए रक्तपात के अतिरिक्त क्या दूसरा मार्ग नहीं है? मेरा दृढ़ विश्वास है कि मानव की बुद्धि बिलकुल समाप्त नहीं हो गई है। कहीं न कहीं दूसरा मार्ग अवश्य ही है। आज से मैं उसी पथ की खोज में निकलूंगी। भीषण दुख क्या है—उस रात को मुझे उसका पता लग गया था जिस रात तुम लोग उनकी हत्या करने के लिए तैयार हो गए थे।"

डाक्टर ने कहा, "यही मेरा डेरा है," यह कहकर छोटी नाव को किनारे पर ठेलकर वे उतर पड़े। फिर हाथ में लालटेन लेकर रास्ता दिखाते हुए बोले, "जूते उतारकर आओ। पैरों में कीचड़ लगेगी।"

भारती चुपचाप उतर आई। सागौन के चार-पांच मोटे-मोटे खूंटों पर पुराने और बेकार तख्तों से काठ का एक मकान बना था। टूटी-फूटी लकड़ी की सीढ़ी से रस्सी पकड़कर ऊपर पहुंचने पर जब सात-आठ वर्ष के लड़के ने आकर दरवाजा खोला तो भारती आश्चर्य से अवाक रह गई। अंदर पांव रखते ही देखा फर्श पर चटाई बिछाए कम उम्र की एक बर्मी स्त्री सो रही है। तीन-चार बच्चे जहां-तहां पड़े हुए हैं। एक असहनीय दुर्गन्ध से कमरे का वायुमंडल विषाक्त हो उठा है। फर्श पर चारों ओर भात, मछली के कांटे और प्याज-लहसुन के छिलके पड़े हैं, पास ही दो-तीन कालिख लगी मिट्टी की छोटी-छोटी हंडिया पड़ी हैं।

डाक्टर के पीछे-पीछे भारती दूसरे कमरे में पहुंच गई। कहीं भी किसी सामान का झमेला नहीं। फर्श पर चटाई बिछी थी। एक ओर दरी लपेटकर रखी हुई थी। डाक्टर ने दरी झाड़कर बिछाते हुए भारती से बैठने के लिए कहा। बर्मी स्त्री ने कुछ पूछा। डाक्टर ने बर्मा भाषा में ही उसका उत्तर दिया। थोड़ी देर बाद ही वह लड़का एक तस्तरी में थोड़ा-सा भात, प्याली में तरकारी और पत्ते पर थोड़ी-सी झुलसी हुई मछली रखकर चला गया। अपनी लालटेन के प्रकाश में उन खाद्य वस्तुओं को देखते ही भारती की तबियत मिचलाने लगी।

डाक्टर ने कहा, "भूख तो शायद तुम्हें भी लगी होगी। लेकिन यह सब—।"

भारती ने कहा, "नहीं, नहीं, अभी नहीं।"

यह ईसाई लड़की जात-पांत नहीं मानती लेकिन जहां से जिस प्रकार ये चीज़ें लाई गई हैं उस स्थान को वह आते समय ही देख आई थी।

डाक्टर बोले, "लेकिन मुझे बड़ी भूख लगी है बहिन। पहले पेट भर लूं," यह कहकर हाथ धोकर बडी प्रसन्न मुद्रा में खाने बैठ गए।

भारती उस ओर देख नहीं सकी। घृणा और छाती के भीतर की असीम रुलाई की वेदना से उसने मुंह फेर लिया। मानो सैकड़ों धाराओं में बहकर निकलने की इच्छा करने लगी। हाय रे देश। हाय रे स्वाधीनता की प्यास? संसार में इन लोगों ने अपना कहकर कुछ भी शेष नहीं रखा। यह घर, यह भोजन, यह घृणित सम्बन्ध, जंगली पशुओं जैसा जीवन—पल भर के लिए भारती को मृत्यु भी इससे अधिक अच्छी और सुखद दिखाई दी। मृत्यु को तो बहुतेरे सहन कर सकते हैं लेकिन यह जो तन ओर मन को निरन्तर सताते रहना, इच्छानुसार हर पल आत्महत्या की ओर ले जाना—इस सहिष्णुता की स्वर्ग या मृत्यु में क्या कहीं कोई तुलना है।

पराधीनता की पीड़ा ने क्या इन लोगों के जीवन के सभी पीड़ा बोध को पूरी तरह धोकर साफ कर दिया है? कहीं कुछ भी शेष नहीं ?

उसे अपूर्व की याद आ गई। उसे अपनी नौकरी छूट जाने का शोक, मित्र-मंडली में हाथ का काला दाग दिखाई देने की लज्जा। ये ही तो भारतमाता की सहस्र कोटि संतान हैं। खाते-पहनते, परीक्षाएं पास करके, नौकरी में सफलता पाकर, जिनका जन्म से मृत्यु तक का सारा जीवन अत्यन्त निर्विघ्न रूप से एक-सा बीतता जा रहा था—और एक है यह व्यक्ति जो अत्यन्त निर्विकार मन से अत्यन्त तृप्तिपूर्वक भात निगल रहा है। पल भर के लिए भारती को लगा कि हिमालय के हज़ारों में प्रस्तर खंडों के तिलमात्र हिस्से से भी अधिक वे लोग नहीं हैं और उन्हीं लोगों में से एक को प्यार करके, उसी के घर की गृहिणी बनने से वंचित होने के दुख से आज वह अपनी छाती फाड़-फाड़ कर मर रही है।

सहसा वह दृढ़ता भरे स्वर में बोली, "भैया तुम्हारा चुना हुआ यह खून-खराबी का मार्ग किसी भी तरह ठीक नहीं है। अतीत के भले ही कितने भी उदाहरण दो, जो अतीत है, जो बीत चुका है, वही चिरकाल तक भविष्य की छाती रौंदकर उसे नियन्त्रित करता रहेगा, यह विधान मानव जीवन के लिए किसी भी तरह सत्य नहीं माना जा सकता। तुम्हारे मार्ग को नहीं लेकिन तुम्हारी सब कुछ विसर्जित करने वाली देश सेवा को मैं आज अपने सिर पर उठा लेती हूं। अपूर्व बाबू सुख से रहें, अब मैं उनके

लिए शोक नहीं करूंगी। आज मैंने अपने जीवन का मन्त्र अपनी आंखों से देख लिया है।"

डॉक्टर ने आश्चर्य से मुंह उठाकर भात खाते-खाते अस्फुट स्वर में पूछा, "क्या हुआ भारती ?"

बाईस

हाथ-मुंह धोकर डॉक्टर बैठ गए। उसी बर्मी लड़के ने एक बहुत मोटा चुरुट पीते हुए कमरे में प्रवेश किया और कुछ देर नाक-मुंह से धुंआ निकाल कर फिर वही चुरुट डॉक्टर के हाथ में देकर चला गया।

डॉक्टर ने हंसते हुए कहा, "इसी तरह मुफ्त पा लेने पर मैं संसार में किसी भी चीज़ को छोड़ना पसन्द नहीं करता भारती। अपूर्व के चाचाजी ने जब रंगून में गिरफ्तार किया था तब मेरी जेब में से गांजे की चिलम निकल पड़ी थी। वह न होती तो शायद मुझे छुटकारा भी न मिलता।" कहकर वे मुस्कराने लगे।

भारती यह बात सुन चुकी थी। बोली, "हज़ार बार छुटकारा न मिलने पर भी तुम गांजा नहीं पीते यह मैं जानती हूं। लेकिन यह मकान "किसका है ?"

"मेरा।"

और यह बर्मी स्त्री-बच्चे ?"

डॉक्टर हंसकर बोले, "ये सब मेरे एक मुसलमान मित्र की सम्पत्ति हैं। मेरी ही तरह वे भी फांसी के मुजरिम हैं। इस समय कहीं बाहर गए हैं। परिचय न हो सकेगा।"

भारती बोली,"परिचय के लिए मैं व्याकुल नहीं हूं। लेकिन जिस तरह तुमने इस स्वर्गपुरी में आकर आश्रय लिया है, इससे तो अच्छा था कि मुझे मेरे घर पहुंचा आते भैया। यहां तो मेरा दम घुटा जा रहा है।"

डॉक्टर "यह स्वर्गपुरी तुम्हें अच्छी नहीं लगेगी, मैं जानता था। लेकिन तुमसे कहने के लिए मेरे पास जितनी बातें हैं वे किसी दूसरे स्थान पर नहीं कही जा सकती थीं भारती। थोड़ा-सा कष्ट आज तुम्हें सहना ही पड़ेगा।"

भारती बोली, "क्या तुम किसी दूसरी जगह जा रहे हो ?"

डॉक्टर बोले, "हां उत्तर और पूर्व के देशों में एक बार घूम आना होगा। लौटने में शायद दो वर्ष लग जायें। लेकिन आज की रात के बाद फिर तुमसे मिल सकूंगा, यह भरोसा नहीं।"

डॉक्टर कुछ देर चुप रहे। भारती ने समझ लिया कि इसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। इस रात की समाप्ति के साथ ही वह इस संसार में अकेली रह जाएगी।

डॉक्टर बोले, "मुझे दक्षिण चीन के केटंन के भीतर और भी आगे पैदल ही जाना पड़ेगा। उस रास्ते से काम के सिलसिले में अगर अमेरिका न पहुंच पाया तो प्रशान्त महासागर के द्वीपों में घूमकर फिर इसी देश में लौटकर आश्रय लूंगा। उसके बाद जब तक आग न लगेगी यहीं रहूंगा? और वहिन अगर लौटकर न आ सका तो खबर तो तुम्हें मिल ही जाएगी।"

इस व्यक्ति के शान्त, सहज कंठ की बातें कितनी साधारण हैं लेकिन उनका चेहरा भारती की आंखों के सामने नाच उठा। कुछ देर चुप रहकर बोली, "चीन देश में पैदल जाना कितना भयानक काम है, यह मैं सुन चुकी हूं। लेकिन मैं तुमको डर दिखालाना नहीं चाहती। अगर यहां से निकल जाना ही चाहते हो तो फिर यहीं क्यों लौट आना चाहते हो? तुम्हारी अपनी जन्म भूमि में क्या तुम्हारे लिए कोई काम नहीं है?"

"उसी के काम के लिए तो मैं इस देश को छोड़कर जा रहा हूं। इस देश में स्त्रियां स्वतन्त्र हैं। स्वतन्त्रता का मार्ग वे समझेंगी। उन लोगों की मुझे बहुत ज़रूरत है। अगर कभी इस देश में आग जलती देखी तो मेरी बात याद कर लेना, कि उस आग को स्त्रियां ही जला रही हैं। याद रहेगी यह बात?"

भारती ने कहा, "लेकिन मैं तो तुम्हारे पथ की पथिक नहीं हूं।"

डॉक्टर बोले, "यह मैं जानता हूं, लेकिन बड़े भाई की बात याद करने में तो कोई दोष नहीं है। भैया की बीच-बीच में याद तो आ जाएगी।"

भारती बोली, "बड़े भैया की याद आने के लिए मेरे पास बहुत-सी चीजें है। इसी तरह शायद तुम मनुष्यों को अपने कुमार्ग में खींच लाया करते हो भैया, लेकिन मुझे नहीं खींच सकते।"

वह सहसा उठ खड़ी हुई। समेटी दरी झाड़कर बिछा दी। फिर बांस के मचान पर कम्बल, तकिया आदि उतारकर अपने हाथ से बिस्तर बिछाते हुए बोली, "अपूर्व बाबू के जहाज के चक्के आज मुझे जिस मार्ग का संकेत दे गए हैं मेरा एकमात्र मार्ग अब वही है। फिर जिस दिन भेंट होगी उस दिन तुम भी स्वीकार करोगे।"

डॉक्टर व्यग्र होकर बोल उठे, "तुमने अचानक यह क्या शुरू कर दिया

भारती ? क्या इस फटे कम्बल को मैं खुद नहीं बिछा सकता था। इसकी तो कोई ज़रूरत थी ही नहीं।"

भारती बोली, "तुमको ज़रूरत नहीं थी, लेकिन मुझे तो थी। फिर स्त्रियों के जीवन में इसकी भी ज़रूरत न रहे तो किस बात की ज़रूरत है, बता सकोगे भैया ?"

डॉक्टर बोले, "इसका उत्तर नहीं दे सकूंगा बहिन। मैं हार मानता हूं। लेकिन तुम्हारे अतिरिक्त मुझे और किसी स्त्री से हार नहीं माननी पड़ी।"

भारती हंसती हुई बोली, "सुमित्रा जीजी से भी नहीं ?"

"नहीं।"

बिछौना बिछ जाने पर डॉक्टर उस पर आ बैठे। भारती पास बैठकर बोली, "जाने से पहले एक बात और पूछूं तो क्या छोटी बहन का अपराध क्षमा होगा ?"

"क्यों नहीं ?"

"सुमित्रा जीजी आपकी कौन हैं ?"

कुछ देर चुप रहने के बाद डॉक्टर ने मुस्कराते हुए कहा, "वह मेरी क्या है, इसका उत्तर जब तक वह स्वयं न दे तब तक जान लेने का कोई उपाय नहीं है। मैं तो जिस दिन उसे पहचानता भी नहीं था, उस दिन मैंने स्वयं अपनी पत्नी कहकर उसका परिचय दिया था। मैंने ही उसका नाम सुमित्रा रखा था। मैंने सुना है कि उसकी मां यहूदी थी लेकिन पिता थे बंगाली ब्राह्मण। पहले वे एक सर्कस पार्टी के साथ जावा गए थे, फिर सुरवाया रेल के स्टेशन पर नौकरीक रने लगे। जब तक वे जीवित रहे सुमित्रा मिशनरी स्कूल में पढ़ती रही। उनके मर जाने के बाद पांच-छै वर्ष के इतिहास को सुनने की तुम्हें कोई ज़रूरत नहीं।"

भारती बोली, "नहीं भैया, मुझे सब बताओ।"

डॉक्टर ने कहा, "मैं भी सब नहीं जानता भारती। केवल इतना ही जानता हूं कि मां, बेटी, दो मामा, एक चीनी और दो मदरासी मुसलमान मिलकर जावा में छिपे ढंग से गांजे के आयात-निर्यात का धंधा कर रहे थे। मैं नहीं जानता था कि वे लोग क्या करते हैं। बस यही देखा करता था कि वटाविया से सुरवाया तक ट्रेन द्वारा सुमित्रा अक्सर आया-जाया करती थी। अत्यन्त सुन्दर होने के कारण बहुत से लोगों की तरह मेरी नज़र भी उस पर पड़ गई थी। बस सब कुछ यहीं तक सीमित था। लेकिन एक दिन अचानक ही परिचय हो गया। तेगा स्टेशन के वेटिंग रूम में। यह बंगाली लड़की है इस बात का पता मुझे पहले-पहल नहीं चला।"

भारती ने कहा, "सुन्दरी होने के कारण सुमित्रा जीजी को आप फिर भूल नहीं सके। यही बात है न भैया ?"

डॉक्टर बोले, "एक दिन में जावा छोड़कर कहीं और चला गया और शायद उसे भूल भी गया। लेकिन एक वर्ष के बाद सहसा बेंकुलेन शहर की जेटी पर सुमित्रा से भेंट हो गई। एक बक्स में अफीम थी। और सुमित्रा को घेरे चारों ओर पुलिस खड़ी थी। मुझे देखकर उसकी आंखों से आंसू बहने लगे। मुझे सन्देह नहीं रहा कि अब मुझे उसकी रक्षा करनी पड़ेगी। अफीम के बक्स को स्पष्ट अस्वीकार करने मैंने उसे अपनी पत्नी बता कर परिचय दे दिया। उसने यह नहीं सोचा था, इसलिए वह चौंक पड़ी। घटना सुमात्रा में हुई थी इसलिए मैंने उसका नाम समित्रा रख दिया। वैसे उसका वास्तविक नाम रोज़ दाऊद था। उन दिनों बेंकुलेन के मामलों-मुकद्दमों की सुनवाई पादांग शहर में होती थी। वहां मेरे घनिष्ठ मित्र थे पाल क्रूगर। उन्हीं के पास सुमित्रा को ले गया। मुकद्दमा चला। मजिस्ट्रेट ने सुमित्रा को रिहा कर दिया। लेकिन सुमित्रा ने मुझे रिहाई नहीं दी।"

भारती हंसकर बोली, "रिहाई अब मिलेगी भी नहीं भैया।"

डॉक्टर ने कहा, "धीरे-धीरे उसके दल के लोग समाचार पाकर ताक-झांक करने लगे। मैंने देखा मेरे मित्र पाल क्रूगर भी उसके सौंदर्य पर लट्टू हो गए हैं। एक दिन उन्हीं के पास छोड़कर मैं चुपचाप खिसक गया।"

भारती बोली, "उन लोगों के बीच अकेली छोड़कर ? तुम बहुत निर्दयी हो भैया।"

डॉक्टर बोले, "हां, अपूर्व की तरह। फिर एक वर्ष बीत गया। उन दिनों मैं सोलिबस द्वीप के मैकासर नगर के छोटे से अप्रसिद्ध होटल में रह रहा था। एक दिन शाम को कमरे में घुसते ही देखा सुमित्रा बैठी है। हिन्दू स्त्रियों की तरह टसर की साड़ी पहने। उसने एक हिन्दू स्त्री की तरह झुक-कर प्रणाम किया और उठकर बोली "मैं सब छोड़कर चली आई हूं। सम्पूर्ण अतीत को धो-पोंछकर फेंक आई हूं। मुझे अपने काम में शामिल कर लो। मुझसे बढ़कर विश्वसनीय साथिन दूसरी नहीं मिलेगी।"

भारती बोली, "उसके बाद ?"

डॉक्टर ने कहा "बाद की घटना—बस इतना ही कह सकता हूं कि सुमित्रा के विरुद्ध शिकायत करने का मुझे आज तक कोई कारण नहीं मिला। जो इक्कीस वर्षों के सभी संस्कारों को धो-पोंछकर, साफ करके आ सकती है। उसके प्रति मेरे मन में श्रद्धा है लेकिन वह है बड़ी निष्ठुर।"

भारती की इच्छा हुई कि पूछे—'वे निष्ठुर हो सकती हैं लेकिन तुम उसको कितना प्यार करते हो।' लेकिन लाज के कारण पूछ न सकी। फिर

भी उस रहस्यपूर्ण युवती के हृदय के गोपनीय इतिहास का आज उसे पता लग गया। उसका ममताहीन, मौन, रहस्यपूर्ण इतिहास—किसी का भी अर्थ समझना उसके लिए शेष नहीं रहा।

सहसा डॉक्टर के मुंह से असावधानी से एक लम्बी सांस निकल गई। पल भर के लिए वे लज्जा से व्याकुल हो उठे। लेकिन उसी एक पल के लिए। दूसरे ही पल उनका शान्त और सहज हास्यपूर्ण स्वर लौट आया। बोले, "उसके बाद सुमित्रा को साथ लेकर मुझे केन्टन चला आना पड़ा।"

भारती हंसी छिपाकर बोली, "न आते भैया। तुम्हें सिर की शपथ किसने दी थी—बताओ? हम लोगों में से तो किसी ने दी नहीं थी।"

"सिर की शपथ किसी ने नहीं दी, ऐसी बात नहीं है। लेकिन मैंने सोचा था कि वह बात किसी को भी मालूम न हो सकेगी। लेकिन तुममें एक दोष यह है कि अन्त तक न सुनने से तुम्हारी जिज्ञासा शान्त नहीं होती और न सुनाने से तुम बहुत-सी ऐसी ही बातों का अनुमान करती रहोगी। इसलिए सुना देना ही अच्छा है।"

"मैं भी यही कह रही हूं भया।"

डॉक्टर बोले, "बात यह है कि सुमित्रा ने मेरे ही होटल की दूसरी मंजिल पर एक कमरा किराए पर ले लिया। मैंने बहुत मना किया। लेकिन वह नहीं मानी। तब मैंने कहा, 'ऐसी हालत में मुझे यहां से चला जाना होगा।' यह सुनकर उसकी आंखों से आंसू बहने लगे। बोली, 'आप मुझे आश्रय दीजिए।' दूसरे ही दिन मामला समझ में आ गया। दाऊद का गैंग वहां दिखाई पड़ा। उस गैंग में लगभग दस आदमी थे। उनमें से एक आधा अरब और आधा नीग्रो था। छोटे-मोटे हाथी की तरह। वह अनायास ही दावा कर बैठा कि सुमित्रा उसकी पत्नी है।"

भारती बोली, "और तुम्हारे ही सामने! उन दोनों में शायद खूब झगड़ा हुआ?"

डॉक्टर बोले, "हां। सुमित्रा ने अस्वीकार करते हुए कहा, 'सब झूठ है। एक षडयन्त्र है।'—असल में वे लोग उसे चोरी की अफीम बेचने के काम में वापस ले जाना चाहते थे। प्रशान्त महासागर के सभी द्वीपों में उनके अड्डे हैं। गैंग काफी बड़ा है जिसमें बदमाश लोग शामिल हैं। कोई भी ऐसा काम नहीं है जिसे ये लोग न कर सकते हों। मैं जान गया कि यह सस्मया आसानी से नहीं सुलझेगी। लेकिन विलम्ब उन्हें सह्य नहीं था। वे तत्काल निर्णय करके सुमित्रा को खींच ले जाना चाहते थे। मैंने उन्हें रोका। पुलिस बुलाकर गिरफ्तार कराने का डर दिखाया। तब वे लोग गए। लेकिन धमका देते गए कि उन लोगों के हाथ से आज तक कोई

नहीं बचा।"

"उसके बाद ?"

डाक्टर ने कहा, "रात को सावधान रहा। मैं जानता था कि वे लोग दल-बल के साथ लौटकर आक्रमण करेंगे।"

भारती ने पूछा, "भाग क्यों नहीं गए ? पुलिस को खबर क्यों नहीं दी ?" डच सरकार के पास क्या पुलिस नहीं है ?"

डाक्टर ने कहा, "थाना-पुलिस में जाना मेरे लिए निरापद नहीं था। लेकिन वह रात शान्तिपूर्वक बीत गई। वहाँ समुद्र के किनारे-किनारे चलने वाली व्यापारिक नावें मिलती हैं। अगले दिन एक नाव ठीक कर आया। लेकिन सुमित्रा को बुखार आ गया। वह उठ न सकी। काफी रात बीते दरवाजा खुलने की आवाज से नींद टूट गई। खिड़की से झाँक कर देखा, दरवाजा होटल वाले ने खोला है और दस आदमी होटल में घुस रहे हैं। वे यह चाहते थे कि मेरे कमरे के दरवाजे को बाहर से बंद कर दें और बगल की सीढ़ी से ऊपर सुमित्रा के कमरे में चले जायें।"

भारती सांस रोककर बोली, "उसके बाद ?

डाक्टर बोले, "मैंने दरवाजा खोलकर ऊपर जाने की सीढ़ी रोक ली।"

भारती का चेहरा पीला पड़ गया। बोली, "उसके बाद ?"

डाक्टर ने कहा, "उसके बाद की घटना अंधेरे में घटी, इसलिए ठीक ठीक नहीं बता सकूँगा। लेकिन अपनी बात मुझे मालूम है। एक गोली मेरे बाँए कन्धे में लगी, दूसरी घुटनों के बीच। सवेरा होते ही पुलिस आ गई। पहरा लग गया। गाड़ी आई और पुलिस छँ-सात आदमियों को उठा ले गई। होटल वालों ने गवाही दी कि डाकुओं ने धावा बोला था। अंग्रेजी राज्य होता तो मामला कितनी दूर पहुँचता और क्या होता, नहीं कहा जा सकता। लेकिन सेलिवरु कानून-फायदे दूसरे ही हैं। मरे हुए लोगों की जब शिनाख्त नहीं हुई तो शायद उन्हें कहीं गाड़-गूड़ दिया।"

"तुम्हारे हाथ से क्या इतने आदमी मारे गए ?"

"मैं तो नाम मात्र था। वे तो अपने हाथों ही मारे गए समझो।"

भारती चुप बैठी रही।

डाक्टर बोले, "उसके बाद कुछ दूर नाव से, कुछ दूर घोड़ा गाड़ी से, और कुछ दूर स्टीमर से हम लोग मेकडा शहर में पहुँच गए। वहाँ से नाम-धाम बदलकर एक चीनी जहाज से केन्टन चले गए। आगे शायद तुम्हें सुनने की इच्छा नहीं है। तुम्हें केवल यही लग रहा है कि भैया के हाथों में भी मनुष्य का खून लगा हुआ है।"

भारती ने कहा, 'मुझे मेरे डेरे पर पहुँच दीजिए भैया ?''

"इसी समय जाओगी ?"

"हाँ मुझे पहुँचा आओ।"

"चलो," यह कहकर उन्होंने फर्श में से एक तख्ता हटाकर कोई चीज़ चुपके से निकालकर अपनी जेब में रखली। भारती समझ गई कि यह पिस्तौल है। पिस्तौल उसके पास भी थी। सुमित्रा के आदेश के अनुसार वह उसे बाहर जाते समय अपने साथ रखती थी। यह ज्ञान उसे आज पहली बार हुआ कि यह मनुष्यों को मार डालने का यन्त्र है।

नाव पर भारती ने धीरे-धीरे कहा, "तुम जो भी क्यों न करो, तुम्हारे अतिरिक्त मेरे लिए पृथ्वी पर आश्रय नहीं है, जब तक मेरे मन की अशान्ति नहीं मिट जाती तुम तब तक मुझे छोड़ कर नहीं जा सकते भैया। बोलो, जाओगे तो नहीं ?"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "अच्छा, ऐसा ही होगा बहिन।"

तेईस

नाव पर बैठी हुई भारती मन-ही-मन न जाने कितनी बातें सोचती रही। उसके मन पर सबसे जबर्दस्त धक्का लगाया सुमित्रा के इतिहास ने। उसके प्रथम यौवन की दुर्भाग्यपूर्ण अनोखी कहानी ने। सुमित्रा को मित्र समझने का दुस्साहस कोई भी स्त्री नहीं कर सकती। भारती उसे प्यार नहीं कर सकी है। लेकिन सब बातों में उसकी असामान्य श्रेष्ठता के कारण उसने अपने हृदय की भक्ति उसे अर्पित की थी। लेकिन उस दिन, अपूर्व का अपराध कितना भी भयंकर क्यों न हो नारी होकर एकदम सहज भाव से उसकी हत्या करने का आदेश देने के कारण उसकी वह भक्ति भीषण भय में परिवर्तित हो गई। भारती अपूर्व को कितना प्यार करती है यह बात सुमित्रा से छिपी नहीं थी। प्रेम क्या है, यह बात भी उससे छिपी नहीं है फिर भी एक नारी के प्रेमी को प्राण दंड देने में नारी होकर भी उसे रत्ती भर हिचक नहीं हुई। वेदना की आग से छाती के भीतर जब इस प्रकार की ज्वाला भक-भक जलने लगती तब वह अपने को यह कहकर समझा लेती कि कर्तव्य के प्रति इस तरह निर्मम निष्ठा न होने पर पथ के दावेदारों की अध्यक्षा कौन बनती ?"

नाव के घाट पर पहुंचते ही एक आदमी पेड़ की आड़ से निकल कर सामने आ खड़ा हुआ। उसे देखते ही भारती के पांव भय से काँप उठे।

डाक्टर ने बड़ी नर्मी से कहा, "यह तो अपना हीरासिंह है। तुमको पहुंचा देने के लिए खड़ा है। क्यों हीरासिंह जी, सब ठीक है न ?"

हीरासिंह ने कहा, "सब ठीक है।"

"क्या मैं भी चल सकता हूं ?"

हीरासिंह बोला, "आपके जाने में क्या कोई रुकावट डाल सकता है ?"

समझ में आ गया कि पुलिस वाले भारती के मकान पर निगाह रख रहे हैं। डाक्टर का जाना निरापद नहीं है।

भारती चुपके से बोली, "मैं नहीं जाऊंगी भैया।"

"लेकिन तुम्हें भाग कर छिपने की ज़रूरत नहीं भारती।"

"जरूरत पड़ने पर भाग सकूंगी। लेकिन इनके साथ नहीं जाऊंगी।"

डाक्टर इस आपत्ति का कारण समझ गए। अपूर्व के मामले के विचार के दिन हीरासिंह ही उसे धोखे से ले आया था। कुछ सोचकर बोले, "तुम तो जानती हो भारती, कितना खराब है मुहल्ला। इतनी रात गए तुम्हारा अकेली जाना ठीक नहीं है। और मैं—।"

व्याकुल स्वर में भारती बोली, "नहीं भैया, तुम मुझे पहुंचा दो। मैं पागल नहीं हूं जो—?"

हाथ छोड़कर भारती को नाव से उतरते न देखकर डाक्टर ने स्नेहिल स्वर में कहा, "वहाँ तुम्हें वापस ले जाते हुए मुझे भी लज्जा मालूम होती है। क्या दूसरी जगह चलोगी, जहाँ हमारे कवि जी रहते हैं ? वे नदी के उस पार रहते हैं।"

भारती ने पूछा, "कौन कवि भैया ?"

"हमारे उस्ताद जी, वेहला बजाने वाले—!"

भारती ने प्रसन्न होकर कहा, "वे क्या घर पर मिलेंगे ? अगर अधिक शराब पी गए होंगे तो कहीं बेहोश पड़े होंगे।"

डाक्टर बोले, "इसमें आश्चर्य नही। लेकिन मेरी आवाज सुनते ही उनका नशा हिरन हो जाता है। नवतारा उनके पास ही रहती है। सम्भव है तुम्हें कुछ खिलवा भी सकूं।"

भारती बोली, "इस ढलती रात में मुझे खिलाने की चेष्टा मत करो, चलो, वहां चलें। सवेरा होते ही लौट आयंगे।"

डाक्टर नाव चलाने लगे तो हीरासिंह अंधेरे में गुम हो गया। भारती ने आश्चर्य से पूछा, "भैया, क्या पुलिस इस आदमी पर

सन्देह नहीं करती ?"

डाक्टर बोले, "नहीं। यह तारघर का चपरासी है। लोगों के जरूरी तार उनके घर पहुंचाया करता है। इसलिए दिन हो या रात किसी भी समय उसका आना जाना सन्देहजनक नहीं होता।"

ज्वार अभी-अभी शुरू हुआ है। धीरे-धीरे बड़ी सावधानी से लग्गी ठेलते हुए नाव ले जाने के परिश्रम का अनुमान करके भारती ने जल्दी से कहा, "वहां जाने की जरूरत नहीं। चलिए आप के घर लौट चलें। ज्वार के खिचाव में आधा घंटा भी नहीं लगेगा।"

डाक्टर ने कहा, "केवल इसी काम से नहीं भारती, एक और विशेष काम से उससे मिलना चाहता हूं।"

भारती व्यंग्य भरी हंसी के साथ बोली, "उनसे किसी आदमी को कोई काम हो सकता है, इसपर मुझे विश्वास नहीं होता।"

डाक्टर कहने लगे, "तुम उसे नहीं जानतीं भारती, उस जैसा सच्चा गुणवान आदमी तुम्हें कहीं नहीं मिल सकता। अपने टूटे बहले की ही पूंजी बल पर कोई ऐसा स्थान नहीं जहां वह न पहुंचा हो। इसके अतिरिक्त वह बहुत बड़ा विद्वान है। किस पुस्तक में कहां क्या लिखा है—बताने वाला मेरे परिचितों में उस जैसा दूसरा कोई भी नहीं है उसे मैं वास्तव में प्यार करता हूं।"

भारती मन ही मन अप्रतिम होकर बोली, "तब तुम उसकी शराब पीने की आदत छुड़ाने की कोशिश क्यों नहीं करते ?"

डाक्टर ने कहा, "मैं किसी से कुछ छुड़वाने की कोशिश नहीं करता भारती। वे कवि हैं, गुणवान हैं। उन लोगों की जाति ही अलग होती है। उनके भले-बुरे काम हम लोगों से मेल नहीं खाते लेकिन इस कारण संसार के भले-बुरे कामों के लिए बने कानून उन्हें क्षमा नहीं करते। उनके गुणों का तो सभी लोग मिलकर उपभोग करते हैं लेकिन अपने दोषों के लिए वे अकेले ही दंड भोगते हैं। इसलिए कभी-कभी जब वह बेचारा बहुत कष्ट पाता है, जब ऐसा व्यक्ति जो उसके दुख का मन ही मन सहयोगी होता है, वह मैं हूं।"

भारती बोली, "तुम सभी के लिए दुख अनुभव करते हो भैया। तुम्हारा मन तो स्त्रियों के मन से भी कोमल है। लेकिन अपने उस गुणवान पर विश्वास कैसे करते हो ? शराब के नशे में वे सब कुछ प्रगट भी तो कर सकते हैं ?"

डाक्टर बोले, "केवल इतना ज्ञान ही तो उसमें बचा है। फिर उसकी बातों पर कोई अधिक विश्वास भी तो नहीं करता ?"

भारती ने पूछा, उनका नाम क्या है भया ?"

डाक्टर ने कहा, "अतुल, सुरेन, धीरेन—जब जो नाम मन में आ जाए।—वास्तविक नाम है—शशिपद भौमिक।"

"शायद वे नवतारा के कहने पर चलते हैं ?

डाक्टर मुस्कराकर बोले, "मुझे भी यही जान पड़ता है।"

यह कहकर डाक्टर ने नाव घुमा दी। पानी के तेज वहाव के कारण छोटी सी नाव बहुत तेजी से चलने लगी और देखते ही देखते उस पार जा लगी। भारती का हाथ पड़ककर डाक्टर नाव से उतर पड़े। आगे बढ़ने पर एक तंग रास्ता मिला। उसके आस-पास पानी से भरे छोटे-बड़े गड्ढे थे। उनके बीच से वह रास्ता अंधेरे में चला गया था।

भारती ने कहा, "भैया, फिर वैसी ही भयानक जगह में ले आए। बाघ-भालुओं की तरह ऐसे स्थान के अतिरिक्त तुम लोग और कहीं भी रहना नहीं जानते ? और किसी से भले ही न डरो, सांपों से तो डरो।"

डाक्टर हंसकर बोले, "सांप तो विलायत से नहीं आए बहिन। उनमें धर्म ज्ञान है। अपराध न करने वाले को वे नहीं काटते।"

यह सुनकर भारती को एक दिन की बात याद आ गई। उस दिन उनके ऐसे ही हास्य पूर्ण स्वर में यूरोप के विरुद्ध कितनी असीम घृणा प्रगट हो गई थी। उन्होंने फिर कहा, "बाघ भालुओं की बात कहती हो बहिन। मैं अक्सर ही सोचा करता हूं कि इन्सान न रहकर अगर यहाँ बाघ-भालू ही रहते होते तो सम्भव है ये लोग शिकार करने विलायत से यहाँ आया करते। और रात-दिन खून चूसने के लिए यहाँ चिपक कर न पड़े रहते।"

भारती मौन रही। सारी जाति के विरुद्ध इतना बड़ा विद्वेष उसे व्यथित कर देता था। मन ही मन कह उठती थी—यह कभी भी सच नहीं हो सकता। ऐसा हो ही नहीं सकता।

सहसा डाक्टर ठिठककर खड़े हो गए, बोले, "हमारे उस्ताद जी जाग रहे हैं, और होश में है। ऐसा बेहला तुमने कभी नहीं सुना होगा भारती।"

कुछ आगे बढ़कर भारती रुक गई। उसकी उत्सुकता निरन्तर बढ़ती चली जा रही थी। उसका न कोई आदि था न अन्त। इस संसार में उसकी तुलना नहीं हो सकती। दो मिनट के लिए मानो भारती को होश ही नहीं रहा।

डाक्टर ने उसके हाथों को जरा सा दबाकर कहा, "चलो।"

भारती बोली, "चलो। मैंने ऐसा कभी नहीं सुना था।"

डाक्टर बोले, "मैंने भी इससे अच्छा कभी नहीं सुना। लेकिन इस पागल के हाथों में पड़कर इस बेचारे वेहला की दुर्दशा का अन्त नहीं है। मैंने ही शायद दसियों बार उसका उद्धार किया होगा। सुना है अपूर्व के पास पांच रुपऐ में गिरवी रखा हुआ था।"

भारती बोली, "मैं उनके नाम रुपए भज दूंगी।"

पेड़ों की ओट में एक दोमंजिला मकान है। नीचे की मंजिल पर कीचड़, ज्वार के पानी और जगली पौधों ने अधिकार कर रखा है। सामने काठ की एक सीढ़ी है। और उसी के सबसे ऊंचे स्थान पर एक तोरण सावना हुआ है। उसी पर एक बहुत बड़ी रंगीन चीनी लालटेन लटकी है। जो झूलती दिखाई दे रही है। उसकी रोशनी में स्पष्ट दिखाई दिया, उसके ऊपर बड़े-बड़े काले अंग्रेजी अक्षरों में लिखा हुआ है—"शशितारा लॉज।"

भारती ने कहा, "मकान का नाम रखा है 'शशितारा लॉज', लॉज तो समझ गई। लेकिन शशितारा का क्या अर्थ है?"

डाक्टर मुस्कराकर बोले, "शायद शशिपद का शशि और नवतारा का तारा मिलकर शशितारा बन गया है।"

भारती बोली, "यह अन्याय है। अन्याय को तुम प्रश्रय क्यों देते हो?"

डाक्टर हंसकर बोले, "तुम क्या अपने भैया को सबसे शक्तिमान समझती हो? कोई अपने लॉज का नाम शशितारा रखे या कोई अपने पैलेस का नाम अपूर्व भारती रखे—मैं कैसे रोक सकूंगा।"

भारती क्रोधित होकर बोली, "नहीं भैया, इन सब गन्दे कामों के लिए उन्हें मना कर दो। वरना मैं उनके घर नहीं जाऊंगी।"

डाक्टर बोले, "सुना है दोनों का विवाह होने वाला है। भाग्य प्रसन्न हो तो मरने में कितनी देर लगती है बहिन। सुना है पन्द्रह दिन हुए वह मर गया।"

दुखी होते हुए भी भारती हंस पड़ी, "शायद यह खबर झूठी है। अगर सच भी है तो कम-से-कम एक वर्ष तक तो उन्हें रुकना ही चाहिए। नहीं तो यह काम बहुत ही अशोभनीय होगा।"

डाक्टर बोले, "अच्छी बात है, कहकर देखूंगा। लेकिन रुकने से अशोभनीय दिखाई देगा या न रुकने से—यह सोचने की बात है।

इस संकेत से भारती लज्जित होकर चुप हो गई। सीढ़ी पर चढ़ते हुए डाक्टर बोले, "इस पागल के लिए ही मुझे कष्ट होता है। सुना है उस स्त्री को बहुत प्यार करता है। लेकिन संसार के भले बुरे की फरमाइश,

मित्रों की अभिरुचि—ये सब बातें अत्यन्त तुच्छ हैं भारती। मैं तो केवल इतनी ही कामना करता हूं कि उसके प्रेम में यदि सचाई हो तो यह सचाई ही उसका उद्धार करे।"

भारती ने चौंककर पूछा, "संसार में क्या ऐसा भी होता है भैया।"

तभी वे दोनों बन्द दरवाज़े के सामने पहुंचकर रुक गए।

बेहला बजना बंद हो गया। थोड़ी देर बाद दरवाज़ा खोलकर शशिपद बाहर आए तो सहज ही डाक्टर को पहचान लिया। फिर भारती को पहचानते ही एकाएक उछलकर बोले, "आप?—भारती?—आइए, आइए।"

यह कहकर उन्हें अंदर ले गए। उनके आनन्द से चमकते चेहरे की कपट रहित अभ्यर्थना से, उनके अकृत्रिम उत्साह भरे स्वागत से भारती का सारा क्रोध हवा हो गया। शशि ने बिस्तर के किसी कोने से एक बड़ा सा लिफाफा निकाल भारती के हाथ में देकर कहा, "खोलकर पढ़िए। परसों दस हज़ार रुपए का ड्राफ्ट आ रहा है—नाट ए पाई लैस – मैं कहा करता था कि मैं जुआरी हूं, झूठा हूं, शराबी हूं। कैसे हो गया यह? दस हज़ार! नाट ए पाई लैस।"

इस दस हज़ार रुपय के ड्राफ्ट के सम्बन्ध में एक पुराना इतिहास है जिसे यहां बता देना ज़रूरी है। कोई इस पर विश्वास नहीं करता था। सब मज़ाक ही उड़ाते रहते थे। उस्ताद जी का मूलधन यही था। इसी का उल्लेख करके एकदम संकोचहीन होकर वह लोगों से रुपया उधार मांगा करता था। और जल्दी ही ब्याज-मूलधन पूरा चुका देने की सौगन्ध भी खा लेता था। पाँच-सात वर्ष पहले उसके धनवान नाना की जब मृत्यु हुई तो उसे अपने ममेरे भाइयों के साथ सम्पत्ति का एक हिस्सा मिला था। उसे बेचने की बात एक महीने पहले हो गई थी। कलकत्ते के एक अटार्नी ने लिखा था कि रुपए दो-एक दिन में मिल जायेंगे।

पत्र समाप्त करके डाक्टर ने पूछा, "बीस हज़ार रुपए की बात चली थी न शशि?"

शशि बोले, "दस हज़ार ही क्या कम हैं? मेरे ममेरे भाई हैं, सम्पत्ति तो अपने घर में ही रही।"

डाक्टर ने भारती से कहा, "इसी तरह का एक पागल ममेरा भाई हम लोगों का भी कोई होता—" कहकर वे हंसने लगे।

शशि को प्रसन्नता नहीं हुई। प्राणपण से यही सिद्ध करने लगा कि सम्पत्ति को बेचे बिना ही इतना रुपया मिल गया। इसलिए कि उसके भाई के समान आदर्श पुरुष संसार में और कोई नहीं है।"

भारती मुस्कराकर बोली, "ठीक है अतुल बाबू। तुम्हारे उन भैया को देखे बिना ही उनके देव तुल्य चरित्र को मैंने स्वीकार कर लिया।"

शशि बोले, "लेकिन कल मुझे और दस रुपए देने होंगे, तब उस दिन के दस, कल के दस और अपूर्व बाबू के साढ़े आठ—कुल मिलाकर तीस रुपए परसों-तरसों चुका दूंगा। देने ही पड़ेंगे।"

भारती हंसने लगी। शशि कहने लगा, "ड्राफ्ट आते ही बैंक में जमा कर दूंगा। जुआरी, शराबी, स्पेथिस्ट—जो भी जी में आता रहा है लोग कहते रहे हैं। लेकिन इस बार दिखा दूंगा। केवल ब्याज से ही गृहस्थी का खर्च चलाऊंगा। उसमें से भी बच जायगा डाकघर में एकाउन्ट खोलना पड़ेगा। घर में रखना ठीक नहीं, पांच-छै साल में ही एक मकान खरीद लूंगा। खरीदना तो पड़ेगा ही गृहस्थी गर्दन पर आ पड़ी है।"

डाक्टर भारती के मुंह की ओर ताकते हुए हंसने लगे। लेकिन वह गम्भीर मुंह किए दूसरी ओर देखती रही।

शशि ने कहा, "मैंने शराब छोड़ दी है। शायद आपने सुना हो।"

डाक्टर बोले, "नहीं।"

"एकदम। नव तारा ने प्रतिज्ञा करा ली।"

डाक्टर बोले, "शशि, जान पड़ता है अब शीघ्र यहां से हिल नहीं सकोगे?"

शशि बोले, "हिलना असम्भव है।"

डाक्टर ने कहा, "अच्छी बात है। ऐसी दशा में हम लोगों का यहाँ एक स्थायी अड्डा रहेगा।"

शशि बोले, "यह बात कैसे हो सकती है? अब मैं आप लोगों के साथ सम्बन्ध न रख सकूंगा। लाइफ को अब रिस्क में नहीं डाला जा सकता।"

डाक्टर ने भारती की ओर मुड़कर मुस्कराते हुए कहा, "हमारे उस्तादजी में और चाहे जो भी दोष हो—लेकिन आंखों का लिहाज इनमें है, ऐसा अपवाद तो बड़े से बड़ा शत्रु भी नहीं लगा सकता। यदि सीख सको तो यह विद्या तुम इनसे सीख लो।"

प्रत्युत्तर में शशि का पक्ष लेकर भारती ने बहुत ही भली लड़की की तरह कहा, "लेकिन झूठी आशा देने की अपेक्षा स्पष्ट कह देना ही अच्छा है। यह बात मुझसे नहीं होती। अगर अतुल बाबू से मैं यह विद्या सीख पाती तो आज मुझे छुट्टी मिल जाती भैया।"

उसके कंठ स्वर का अन्तिम अंश भारी-सा हो गया। शशि ने ध्यान नहीं दिया। ध्यान देने पर उसका तात्पर्य शायद समझ भी नहीं पाता।

लेकिन इसमें निहित अर्थ जिसे समझना चाहिए था उन्हें समझने में देर नहीं लगी।

दो मिनट तक सभी मौन रहे।

डाक्टर ने बात शुरू की। बोले, "शशि, दो दिन के भीतर ही मैं जा रहा हूं। पैदल के रास्ते से। पैसिफिक के सारे आइलैंड एक बार फिर घूम आऊं। कब लौटूंगा—नहीं जानता। लौटूंगा भी या नहीं, यह कौन जानता है। लेकिन यदि कभी लौटूं शशि तो तुम्हारे घर में शायद मुझे स्थान नहीं मिलेगा।"

शशि पल भर उनके मुंह की ओर टकटकी लगाकर देखता रहा। फिर उसका चेहरा और स्वर आश्चर्यजनक रूप से बदल गया। गर्दन हिलाकर बोला, "मेरे घर पर आपको सदा स्थान मिलता रहेगा।"

डाक्टर ने कहा, "यह क्या कहते हो शशि? मुझे स्थान देने से बड़ी विपत्ति मनुष्य के लिए और क्या हो सकती है?"

शशि ने कहा, "यह तो मैं जानता हूं कि मुझे जेल की सजा मिलेगी। मिलने दो।" कहकर वह चुप हो गया। फिर पलभर बाद भारती को सम्बोधित करके धीरे-धीरे कहने लगा, "मेरा ऐसा मित्र और कोई नहीं है। सन् 1911 में जापान के टोकियो शहर में बम गिरने के कारण जब कोटकू के समूचे गिरोह को फाँसी की सज़ा मिली थी तब डाक्टर उनके अखबार के उपसम्पादक थे। मकान के सामने के हिस्से को पुलिस ने घेर लिया था। मैं रोने लगा तो इन्होंने कहा, डरने से काम नहीं चलेगा शशि। हम लोगों को भाग जाना चाहिए। पीछे की खिड़की से रस्सी लटका कर इन्होंने मुझे उतार दिया फिर स्वयं उतर गए—ओह, याद है आपको डाक्टर साहब? यह कहकर वह अतीत की यादों से रोमांचित हो उठा।"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "याद तो जरूर है।"

शशि ने कहा, "याद रहने की तो बात ही है। आप सहायता न करते तो उस दिन हम लोगों की जीवन लीला समाप्त हो जाती। शंघाई बोट में फिर कदम न रखना पड़ता। वहां जैसे नाटे लुच्चे-बदमाश भारत में कहीं भी नहीं मिलेंगे। मैं तो आप लोगों के बमबाज़ दस्ते में शामिल नहीं था। बस डेरे पर रहता था। वेहला सिखाया करता था। लेकिन इस बात को क्या कोई सुनने वाला था? शैतानों के न तो कानून होते हैं न अदालत। पकड़ पाते तो मुझे ज़रूर जिबह कर डालते। आज जो ये सब बातें कह रहा हूं, केवल आपकी उसी कृपा से। ऐसा मित्र संसार में दूसरा नहीं है। ऐसी दया भी संसार में कहीं नहीं देखी।"

भारती की आँखों में आँसू भर आए। बोली; "अपनी पूरी कहानी

किसी दिन हम लोगों को सुना दो न भैया। भगवान ने तुमको इतनी बुद्धि दी थी तो क्या केवल इस अमूल्य प्राण का मूल्य समझने की बुद्धि देना ही भूल गए ? जापानियों के देश में ही अब फिर जाना चाहते हो ?"

शशि ने कहा, "मैं भी ठीक यही बात कहता हूं भारती। कहता हूं, इतनी बड़ी स्वार्थी, लोभी और नीच जाति से कुछ आशा मत करो। वे लोग किसी भी दिन आपकी कोई सहायता नहीं कर सकते।"

डाक्टर ने हंसते हुए कहा, "कमर में रस्सी बांधने की घटना भी शशि भूल नहीं सका। न इस जीवन में वह जापानियों को ही क्षमा कर सका। लेकिन इतना ही उनका सब कुछ नहीं है भारती। इतनी आश्चर्यजनक जाति भी संसार में और कोई नहीं है। केवल आज की बात नहीं है। प्रथम दृष्टि में ही जिस जाति ने यह कानून बना दिया कि जब तक सूर्य-चन्द्र रहेंगे उस राज्य में ईसाइयों का प्रवेश नहीं होगा। और अगर प्रवेश करे तो उन्हें कठोर दंड दिया जाए। ऐसी जाति भले ही कुछ भी क्यों न करे हमारे लिए अभिनन्दनीय है।"

कहने वाले की दोनों आँखें पलभर में प्रदीप्त दीपशिखा की भांति दमक उठीं। उस वज्र जैसी कठोर-भयंकर दृष्टि के सामने शशि उद्भ्रान्त सा हो उठा। भयभीत होकर बार-बार सिर हिलाते हुए बोला, "यह तो ठीक है। बिल्कुल ठीक है।"

भारती के मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला। उसका हृदय इस अभूत-पूर्व आवेग से थर-थर कांप उठा। उसे लगा जैसे इस गहरी आधी रात में, आसन्न विदाई से ठीक पहले पलभर के लिए उसने उस मनुष्य का स्वरूप देख लिया।

डाक्टर ने अपनी छाती की ओर उंगली दिखाकर कहा, "तुम क्या कह रही थीं भारती कि इस जीवन का मूल्य समझने योग्य बुद्धि भगवान ने मुझे नहीं दी है ? झूठ है। सुनोगी मेरा सारा इतिहास ? केन्टन की एक गुप्त सभा में सनयाल सेन ने मुझसे कहा था—।"

सहसा भारती भयभीत होकर बोल उठी. "लगता है कुछ लोग सीढ़ी से ऊपर चढ़ रहे हैं।"

डाक्टर ने धीरे से पिस्तौल जेब से निकालकर कहा, इस अंधकार में मुझे बांध पाने वाला कोई आदमी इस संसार में नहीं है।"

शशि ने कहा, "आज नवतारा आदि आने वाली थीं, शायद—।"

डाक्टर हंसकर बोले, "शायद वे ही है। बहुत हल्के कदम हैं। लेकिन उनके साथ 'आदि' कौन लोग हैं ?

शशि ने कहा, आपको मालूम नहीं ? हम लोगों की प्रेसीडेन्ट साहिब

आ रही हैं। शायद—।"

भारती ने विस्मित होकर पूछा, "कौन प्रेसीडेन्ट ? सुमित्रा जीजी ?"

शशि ने सिर हिलाकर कहा, "हां।"

यह कहकर वह तेजी से कदम बढ़ाकर द्वार खोलने लगा।

भारती डाक्टर के मुंह की ओर ताकती रही। उसके मन में यह बात आ गई कि वह अपने यहां आने का कारण समझ चुकी है। आज की रात बेकार नहीं जायेगी। सम्भावित विघ्न बाधाओं के बीच पथ के दावेदारों की अन्तिम मीमांसा आज होनी आवश्यक है। हो सकता है। अय्यर हो, तलवलकर हो। और कौन जाने निरापद समझकर ब्रजेन्द्र ने ही शहर छोड़कर इस जंगल में आश्रय लिया हो। डाक्टर ने अपने स्वभाव और नियम के अनुसार पिस्तौल छिपाया नहीं। उसे बांये हाथ में उसी तरह पकड़े रहे। उनके शान्त चेहरे से कोई भी बात जानी नहीं जा सकी। लेकिन भारती का चेहरा एकदम पीला पड़ गया था।

चौबीस

जिन-जिन लोगों ने कमरे में प्रवेश किया वे सभी अच्छी तरह जाने-पहचाने लोग थे।

डाक्टर ने कहा, "आओ।" लेकिन उनके चेहरे का भाव देखते ही भारती समझ गई कि कम से कम आज वे इसके लिए तैयार नहीं थे।

सुमित्रा के आने के बारे में उन्हें पता था। लेकिन सभी लोग उनके पीछे-पीछे चलते हुए इस पार आ इकट्ठे हुए हैं, इसकी जानकारी उन्हें नहीं थी। किसी भी तरह की कोई आकस्मिक घटना नहीं हुई है इसलिए उनकी जानकारी के बिना ही किसी तरह का गहन परामर्श हो चुका है। इसमें सन्देह नहीं है। आगन्तुक लोग आकर चुपचाप फर्श पर बैठ गए। किसी के आचरण से रत्ती भर भी आश्चर्य या उत्तेजना प्रगट नहीं हुई। यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आ गई कि डाक्टर के सम्बन्ध में भले न हो लेकिन डाक्टर के आने के सम्बन्ध में वे पहले ही जान गए थे। अपूर्व के मामले को लेकर दल में इस प्रकार मतभेद पैदा हो जायगा यह आशंका भारती के

मन में थी। शायद आज ही इसका निश्चित निर्णय हो जायगा। यह सोचकर भारती के हृदय में कंपकंपी होने लगी।

सुमित्रा के चेहरे पर उदासी थी। उसने भारती से कोई भी बात नहीं की। उसकी ओर अच्छी तरह देखा तक नहीं। ब्रजेन्द्र ने अपनी गेरुआ पंगड़ी उतार कर अपनी मोटी लाठी से दबा कर पास रख ली और अपने विशाल शरीर को काठ की दीवार से टिकाकर आराम से बैठ गया। उसकी गोलाकार आंखों की हिंस्र दृष्टि कभी भारती और कभी डाक्टर के चेहरे पर चक्कर काटने लगी। रामदास तलवलकर चुप था बैरिस्टर कृष्ण अय्यर सिगरेट जलाकर पीने लगा। और नवतारा सबसे दूर इस तरह जा बैठी जैसे उसका किसी के साथ कोई सम्बन्ध ही न हो। आज वह भारती को पहचान भी न सकी हो। किसी के चेहरे पर मुस्कराहट तक का नाम नहीं था।

कुछ देर बाद ब्रजेन्द्र अपनी कर्कश आवाज से सबको चकित करता हुआ बोल उठा, "आपके स्वेच्छाचार की हम लोग निन्दा करते हैं डाक्टर, अगर मैं अपूर्व को कभी पा गया तो—!"

डाक्टर ने वाक्य पूरा करते हुए कहा, "उसकी जान ले लोगे।" यह कहकर उन्होंने सुमित्रा से पूछा, "क्या तुम सभी लोग इस आदमी की बात का समर्थन करते हो?"

सुमित्रा सिर झुका कर बैठी रही। अन्य किसी ने भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया।

कुछ पल चुप रहकर डाक्टर बोले, "मालूम होता है कि तुम लोग समर्थन करते हो। और इस बीच इस विषय पर तुम लोगों में विचार-विमर्श भी हो चुका है।"

ब्रजेन्द्र बोला, "हां, हो चुका है। और इसका प्रतिकार होना भी हम लोग आवश्यक समझते हैं।"

डाक्टर बोले, "मैं भी यही समझता हूं। लेकिन इससे पहले एक आवश्यक बात याद दिलाना चाहता हूं। सम्भव है अत्यन्त क्रोधावेश में होने के कारण तुम लोगों को यह बात याद न रही हो। अहमद दुर्रानी हम लोगों के समूचे उत्तरी चीन का सेक्रेटरी था। उस जैसा निर्भीक और कार्य कुशल आदमी हम लोगों के दल में और कोई नहीं था। सन 1910 ईस्वी में जापान द्वारा कोरिया राज्य को हड़प लेने के एक महीने बाद वह किसी रेलवे स्टेशन पर पकड़ा गया। उसे शंघाई में फांसी दी गई। सुमित्रा तुम ने दुर्रानी को देखा था?"

सुमित्रा ने कहा, "हां।"

डाक्टर ने कहा, "तब मैं छिता में टूटे हुए दल के पुर्ण गठन में व्यस्त था। मुझे इस बात की खबर तक नहीं मिली कि मेरा एक हाथ टूट गया है। जिस समय अदालत में उसके विरुद्ध विचार का तमाशा हो रहा था, उस समय उसे बचा लेना तनिक भी कठिन नहीं था। हम लोगों के अधिकांश आदमी उन दिनों वहीं रह रहे थे। फिर भी इतनी बड़ी दुर्घटना कैसे हो गई, जानते हो? फैजाबाद के मथुरा दुवे ने बार-बार अत्यन्त तुच्छ अविचार कुविचार की शिकायतें कर करके दल के लोगों के मन एकदम विषैले बना दिए थे। दुर्रानी की मृत्यु से जैसे सभी की जान बच गई। मेरे लौट आने के बाद जब केन्टन की मीटिंग में सारी बातें प्रगट हुई तब दुर्रानी इस लोक में नहीं था। मथुरा दुबे भी टाइफाइड ज्वर से मर चुका था। प्रतिकार के लिए कुछ भी शेष नहीं रह गया था। लेकिन भविष्य के भय से उस रात की गुप्त सभा में दो अत्यन्त कठोर कानून पास किए गए थे। कृष्ण अय्यर तुम तो वहां मौजूद थे, बताओ।"

कृष्ण अय्यर का चेहरा सूख गया। वह बोला, "आप जो इशारा कर रहे हैं, मैं उसे समझ नहीं पा रहा डाक्टर।"

डाक्टर ने रत्ती भर भी हिचके बिना कहा, "सुनो ब्रजेन्द्र, एक कानून था कि मेरे पीछे किसी काम की आलोचना नहीं हो सकती है।"

ब्रजेन्द्र व्यंग्य से बोला, "आलोचना भी नहीं की जा सकती?"

डाक्टर बोले, "नहीं, पीछे नहीं की जा सकती। लेकिन की जाती है, मैं यह जानता हूँ। इसका कारण यह है कि उस दिन केन्टन की सभा में जो लोग मौजूद थे वे दुर्रानी की मृत्यु से जितने उद्विग्न हो उठे थे मैं नहीं हुआ था। इसलिए यह काम होता चला आ रहा है और मैं भी अनदेखा करता चला आ रहा हूं। लेकिन यह भीषण अपराध है।"

ब्रजेन्द्र उपेक्षा भरे स्वर में बोला, "उसे भी कह डालिए।"

डाक्टर बोले, "मेरे विरुद्ध विद्रोह की भावना पैदा करना अत्यन्त भयंकर अपराध है। दुर्रानी की मृत्यु के बाद मुझे सावधान हो जाना चाहिए था।"

ब्रजेन्द्र कठोर हो उठा, "सावधान होने की जरूरत दूसरों के लिए भी वैसी ही हो सकती है। यह ज़रूरत आपके लिए सर्वाधिकार के रूप में नहीं है।" यह कहकर उसने सबकी ओर देखा। लेकिन सब मौन बैठे रहे। किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

काफी देर बाद डाक्टर ने धीरे-धीरे कहा, "इसकी सजा है—भयानक दंड। सोचा था जाने से पहले और कुछ करूंगा। लेकिन ब्रजेन्द्र तुम्हें सब्र नहीं हुआ। दूसरों के प्राण लेने के लिए तुम हमेशा तैयार रहते हो, लेकिन

अपने ऊपर आ पड़ने पर कैसा लगता है, जानते हो ?"

ब्रजेन्द्र का मुंह काला पड़ गया। जल्दी से स्वयं को संभाल कर बड़े घमंड से बोला, "मैं एनार्किस्ट हूं। रेव्योल्यूशानरी हूं। प्राण मेरे लिए कुछ नहीं हैं। ले भी सकता हूं और दे भी सकता हूं।"

डाक्टर ने शान्त स्वर में कहा, "तब तो आज रात को देने ही पड़ेंगे, लेकिन बेल्ट निकाल पाने का समय नहीं मिलेगा। ब्रजेन्द्र मेरी आंख है। तुमको मैं पहचानता हूं।" यह कहकर उन्होंने फौरन पिस्तौल वाला हाथ उठा लिया। भारती ने व्याकुल होकर उनके उस हाथ को दबाए रखने की चेष्टा की लेकिन उसे दूसरे हाथ से हटाते हुए बोले, "छिः।"

पलभर में कमरे में जैसे वज्रपात हो गया।

सुमित्रा के होंठ कांपने लगे। बोली, "अपने ही भीतर यह सब क्या हो रहा है, बताइए तो।"

तलवलकर अब तक चुप था। उसने धीरे से पूछा, "आपके दल के सभी नियम मुझे मालूम नहीं है। आपसे मतभेद होने का दंड क्या मृत्यु है ? अपूर्व बाबू बच गए हैं। इससे मुझे प्रसन्नता ही हुई है। लेकिन इसमें अन्याय कम नहीं हुआ है यह सत्य कहने के लिए मैं बाध्य हूं।"

कृष्ण अय्यर ने सिर हिलाकर सम्मति दे दी। ब्रजेन्द्र की आवाज में अब उपहासपूर्ण श्रद्धा नहीं थी। अन्य लोगों की सहानुभूति से शक्ति पाकर बोला, "एक आदमी के प्राण जाने अगर जरूरी हैं तो फिर मेरे ही चले जायें। मैं तैयार हूं।"

सुमित्रा ने कहा, "ट्रेटर के बदले अगर जाने-पहचाने कामरेड के खून की ही जरूरत है तो मैं भी दे सकती हूं डाक्टर।"

डाक्टर चुपचाप बैठे रहे। सुमित्रा की बात का उत्तर नहीं दिया।

दो मिनट के बाद मन ही मन मुस्कराकर बोले, "ये सब बातें बहुत ही पुराने समय की हैं। उस समय तुम लोग थे ही कहां ? इस जाने-पहचाने कामरेड को मैं उसी समय से जानता हूं। जाने दो इस बात को। टोकियो के एक होटल में एक दिन सनयाल सेन ने कहा था, 'निराशा सहने की शक्ति जिसमें जितनी कम हो उसे चाहिए कि वह रास्ते से उतनी ही दूर हटकर चले। इसलिए मैं सह लूंगा। लेकिन ब्रजेन्द्र मैंने तुम्हें झूठमूठ भय नहीं दिखाया है। मुझे दूसरी जगह जाना पड़ रहा है। डिसिप्लिन टूट जाने से मेरा काम नहीं चलेगा। अगर सुमित्रा तुम्हारे दल में शामिल ही रही है तो—आई विश यू गुडलक। लेकिन तुम मेरा रास्ता छोड़ दो। सुखाया में एक बार अटेम्पड कर चुके है। परसों फिर किया, लेकिन इसके बाद नहीं—।"

सुमित्रा ने उद्वेग से चौंककर पूछा, "इन सब बातों का अर्थ क्या अटेम्पड करना होता है।"

डाक्टर ने इस प्रश्न को अपने कानों तक नहीं पहुंचने दिया। बोले, "कृष्ण अय्यर, आई एम सारी।"

अय्यर ने सिर नीचा कर लिया लेकिन उत्तर नहीं दिया। डाक्टर ने जेब से घड़ी निकालकर देखी। फिर भारती का हाथ पकड़कर बोले, "चलो तुम को डेर पर पहुंचाकर मैं चला जाऊं। उठो।"

भारती सपने में डूबी सी बैठी थी। इशारा पाते ही चुपचाप उठ खड़ी हुई। उसे अपने आगे करके डाक्टर कमरे से बाहर निकल गए। दरवाजे पर से सबको सम्बोधित करके बोले, "गुडनाइट।"

इस विदाई-शिष्टाचार का किसी ने उत्तर नहीं दिया। सभी अभिभूत से स्तब्ध बैठे रहे।

भारती के नीचे उतर जाने के बाद जब डाक्टर ऊपर की ओर नज़र रखकर धीरे-धीरे उतर रहे थे तभी सहसा शशि दरवाजे में से मुंह निकाल कर बोला, "लेकिन मुझे तो आपसे बहुत जरूरी काम है डाक्टर।" यह कहकर नीचे उतर उनके पास आ खड़ा हुआ और सांस रोक कर बोला, "मेरी गणना तो मनुष्यों में की ही नही जाती डाक्टर। आपके किसी काम आने की शक्ति मुझ में नहीं है लेकिन आपका ऋण जीवन पर्यन्त नहीं भूलूंगा।"

डाक्टर ने स्नेहपूर्वक उसका हाथ खींचते हुए कहा, "कौन कहता है कि तुम मनुष्य नहीं हो? तुम कवि हो, गुणी हो अनेक मनुष्यों से बड़े हो।"

"आप कहीं भी क्यों न रहें, मेरे पास जो कुछ है सब आपका है, इस बात को मत भूल जाइएगा।"

भारती ने उत्सुक होकर पूछा, "क्या बात है भैया?"

डाक्टर ने हंसते हुए कहा, "दुर्दिन में तो इन्हें चिन्ता नहीं थी लेकिन अचानक अच्छे दिन आते ही उन्हें चिन्ता हो गई है कि कहीं ऐसा न हो कि इन्हें कृतज्ञता का ऋण याद ही न रहे। इसलिए कह रहे हैं कि जो कुछ इनके पास है सब मेरा है।"

भारती बोली, "ऐसी बात है शशिबाबू?"

शशि कुछ नहीं बोला।

डाक्टर ने कहा, "याद रहेगा शशि, याद रहेगा। यह वस्तु संसार में इतनी सुलभ नहीं है कि कोई भूल जाए।"

शशि ने कहा, "आप कब जाइएगा?"

डाक्टर बोले, "तुम तो उम्र में मुझसे छोटे हो। इसलिए आशीर्वाद देकर जा रहा हूं कि तुम सुखी रहो।"

शशि ने कहा, "क्या अगले शनिवार तक नहीं ठहर सकते ?"

भारती बोली, "शनिवार को इनका विवाह होगा।"

डाक्टर कुछ नहीं बोले। सामने ही कीचड़ में पड़ी टेढ़ी नाव पर यत्न पूर्वक भारती को चढ़ाकर स्वयं भी चढ़ गए।

शशि ने कहा, "शनिवार तक आपको रुकना होगा। जीवन में अनेक भीख दी हैं। यह भी दीजिए। भारती, आपको भी उस दिन आना होगा।"

भारती चुप रही। डाक्टर ने कहा, "यह नहीं आयेगी शशि। अगर रुका रहा तो आऊँगा और तुम लोगों को आशीर्वाद दे जाऊंगा। मैं वचन देता हूं। अगर न आऊं तो समझ लेना कि सव्यसाची के लिए आना असम्भव था। लेकिन जहां भी रहूं प्रार्थना करूंगा कि तुम्हारा शेष जीवन सुख से बीते।" यह कहकर नाव चला दी।

भारती बोली, "आज अकेली होती तो इतना रोती कि नदी का जल बढ़ जाता। भैया, भविष्य में सभी को सुखी होने का अधिकार है। नहीं है केवल तुम को। शशि बाबू इतना अशोभनीय काम करने जा रहे हैं उन्हें भी जी खोलकर आशीर्वाद दे आए। लेकिन इस संसार में तुम्हें आशीर्वाद देने वाला कोई नहीं है। तुम गुरुजन हो, चाहे जो भी हो। लेकिन आज तुम्हें मैं आशीर्वाद दूंगी कि तुम्हारा भविष्य सुखमय हो।"

डाक्टर हंसकर बोले, "छोटों का आशीर्वाद नहीं फलता। उसका फल उल्टा होता है।"

भारती बोली, "झूठ है। मैं छोटी नहीं हूं। एक दूसरी दृष्टि से तुमसे बड़ी हूं। जाने से पहले तुम सुमित्रा जीजी के साथ हमेशा के लिए सम्बन्ध तोड़ देना चाहते हो। यह मैं नहीं होने दूंगी। तुम कहोगे कि मैं सुमित्रा को प्यार नहीं करता। लेकिन तुम पुरुषों के प्यार का मूल्य ही कितना है भैया ? जो आज है वह कल नहीं रहता। अपूर्व बाबू भी तो मुझे प्यार नहीं कर सके। लेकिन मैं कर सकी हूं। मेरा कर सकना ही सब कुछ है ततैये में मधु इकट्ठा करने की शक्ति नहीं तो इसके लिए किससे झगड़ा करने जाऊं। लेकिन आज मैं तुमसे कहे देती हूं भैया कि इस संसार को नचाने वाले प्रभु कोई भी हों, नारी हृदय के प्रेम का मूल्य चुकाने के लिए उन्हें अपूर्व बाबू को लाकर मेरे हाथों सौंप देना ही पड़ेगा।" कुछ उत्तर पाने की आशा में भारती पलभर स्तब्ध रहकर बोली, "भैया, तुम मन ही मन हंस रहे हो ?"

"कहां ? नहीं तो।"

"ज़रूर। नहीं तो तुमने उत्तर क्यों नहीं दिया ?"

डाक्टर हंस पड़े। बोले, "उत्तर देने के लिए कुछ था ही नहीं भारती, तुम्हारे संसार को नचाने वाले प्रभू को भी अगर इस जबर्दस्ती को मानकर चलना पड़ता तो तुम्हारी सुमित्रा जीजी की क्या हालत होती, जानती हो ?—ब्रजेन्द्र के हाथों में स्वयं को हर प्रकार से सौंप देने पर ही जान बचती।"

भारती चकित नहीं हुई। आज की घटना के बाद से यही सन्देह उसके मन में बढ़ता जा रहा था। उसने पूछा, "ब्रजेन्द्र क्या उनको तुमसे भी अधिक प्यार करते हैं ?"

डाक्टर बोले, "बताना कुछ कठिन है। यह अगर शुद्ध आकर्षण ही हो मानव समाज में इसकी तुलना नहीं मिल सकती। लाज नहीं, शर्म नहीं, सम्भ्रम नहीं। हित-अहित का ज्ञान लुप्त, पशुवत् उन्मत्त आवेग जो आँखों से नहीं दीखता, वह उसके मन का परिचय पा ही नहीं सकता। भारती, अगर तुम्हारे भैया के पास ये दोनों हाथ जैसी चीज न होती तो सुमित्रा के लिए आत्महत्या के अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग ही नहीं था। संसार को नचाने वाले तुम्हारे प्रभु भी इतने दिनों इन लोगों की इज्जत किए बिना नहीं रह सके हैं।" यह कहकर वे भारती के झुके हुए सिर पर अपने दोनों हाथ रखकर धीरे-धीरे थपकियाँ देने लगे।

भारती बोली, "भैया, इतना जानते हुए भी तुम इसी परिस्थिति में सुमित्रा को छोड़कर चले जाना चाहते हो ? तुम इतने निठुर हो सकते हो, मैं सोच भी नहीं सकती।"

डाक्टर बोले, "इसीलिए तो आज जाने से पहले मैं सब चुकाकर जाना चाहता था। लेकिन सुमित्रा ने वह होने नहीं दिया।"

भारती ने भयभीत होकर पूछा, "क्या नहीं होने दिया ? तुम क्या सचमुच ही ब्रजेन्द्र को मार डालना चाहते थे ?"

डाक्टर बोले, "हां सच ही मैंने यही चाहा था। इस बीच अगर पुलिस उसे जेल न भेज देगी तो लौट आने पर किसी दिन मुझे यह काम पूरा करना पड़ेगा।"

भारती के हृदय को गहरा आघात लगा। डाक्टर समझ गए लेकिन कुछ भी न कहकर उस पार जाने के लिए दोनों पतवारें खींचकर नाव खेने लगे।

बहुत देर बाद भारती ने पूछा, "अच्छा भैया, यदि मैं तुम्हारी सुमित्रा होती तो क्या तुम मुझे भी इसी तरह छोड़कर चले जाते ?"

डाक्टर हंसने लगे। बोले, "लेकिन तुम तो सुमित्रा नहीं हो। तुम भारती हो। इसलिए तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊंगा। काम के लिए नियुक्त करके जाऊंगा।"

भारती ने व्यग्र होकर कहा, "मुझे बचाओ भैया, तुम लोगों की खून-खराबी में अब मैं शामिल नहीं हूं। तुम्हारी गुप्त समिति का काम अब मुझसे नहीं होगा।"

डाक्टर ने कहा, "इसका अर्थ तो यही है कि तुम भी इन लोगों की तरह मुझे छोड़कर जाना चाहती हो।"

यह सुनकर भारती क्षोभ से व्याकुल हो उठी। बोली, "इतनी बड़ी अन्यायपूर्ण बात तुम मुझसे कह सकते हो भैया। तुम जो इच्छा हो वह कह सकते हो। लेकिन मैं अपनी ही इच्छा से तुम्हें छोड़कर चली गई, यह बात याद आने पर एक दिन भी जीवित रह सकती हूं, ऐसा तुम्हारा ख्याल है? मैं तुम्हारा ही काम करती रहूंगी जब तक कि तुम अपनी इच्छा से मुझे छुट्टी न दोगे।" थोड़ी देर रुककर बोली, "लेकिन मैं जानती हूं कि मनुष्यों की हत्या करते हुए घूमते रहना ही तुम्हारा वास्तविक काम नहीं है। तुम्हारा वास्तविक काम है मनुष्य को मनुष्य की तरह जीवित रखना। मैं तुम्हारे इसी काम में लगी रहूंगी और मैं यही सोचकर तुम लोगों के बीच आई थी।"

डाक्टर ने पूछा, "यह मेरा कौन-सा काम है?"

भारती बोली, "पथ के दावेदारों को गुप्त समिति के रूप में परिणत करने की जरूरत नहीं है। कारखाने के मज़दूर-मिस्त्रियों की हालत मैं अपनी आंखों से देख आई हूं। उनके पास कुशिक्षा और उनकी जानवरों जैसी हालत—अगर समूचे जीवन में उनका रत्ती भर भी प्रतिकार कर सकूं तो इससे बढ़कर मेरे जीवन की सार्थकता और क्या हो सकती है? सच बताओ भैया, यह क्या तुम्हारा काम नहीं है।"

डाक्टर बोले, "यह काम तुम्हारा नहीं है भारती। तुम्हारे लिए दूसरा काम है। यह काम सुमित्रा का है। मैंने इस काम का सारा भार उसी पर छोड़ रखा है।"

भारती चुप बैठी सुनती रही।

डाक्टर ने उसी तरह शान्त और मृदु स्वर में कहा, "तुमसे कह देना ही उचित है भारती। कुछ थोड़े से कुली-मजदूरों की भलाई के लिए ही मैंने पथ के दावेदार की स्थापना नहीं की है। इसका लक्ष्य बहुत बड़ा है उस लक्ष्य के लिए हो सकता है किसी दिन इन्हीं लोगों को भेड़-बकरियों

की तरह बलि चढ़ा देना पड़े—तुम उसमें मत रहना बहिन। तुम इसे न कर सकोगी।"

भारती चौंककर बोली, "यह तुम क्या कह रहे हो भैया? क्या मनुष्यों की बलि चढ़ाओगे?"

डाक्टर ने कहा, "मनुष्य हैं कहां? जानवर ही तो हैं।"

भारती बोली, "मनुष्य के सम्बन्ध में तुम मज़ाक में भी ऐसी बात मुंह से मत निकालना, कहे देती हूं। झूठमूठ मुझे डराने की कोशिश मत करो।"

डाक्टर बोले, "नहीं भारती, झूठमूठ नहीं। सचमुच डराने की कोशिश कर रहा हूं जिससे मेरे चले जाने के बाद तुम कुली-मज़दूरों की भलाई के चक्कर में न पड़ो। इस तरीके से इनकी भलाई नहीं की जा सकती। इनकी भलाई की जा सकती है केवल क्रान्ति के द्वारा। इसी मार्ग पर चलने के लिए मैंने पथ के दावेदार की रचना की है। क्रान्ति शान्ति नहीं है। उसे हमेशा हिंसा के बीच से ही कदम रखकर चलना पड़ता है। यही उसका वरदान है और यही अभिशाप! एक बार यूरोप की ओर ध्यान से देखा। हंगरी में ऐसा ही हुआ है। कुली-मज़दूरों के खून से उस दिन नगर के सभी राजपथ रक्तिम हो उठे थे। जापान में तो अभी उसी दिन की बात है—उस देश में भी मज़दूरों के दुख का इतिहास बिन्दु बराबर भी इससे भिन्न नहीं है। मनुष्य के चलने का मार्ग बिना उपद्रव नहीं बनता भारती।"

भारती सिहरकर बोली, "यह मैं नहीं जानती। लेकिन उन सब भयानक उपद्रवों को क्या तुम इस देश में भी खींच लाओगे? कारखानों के रास्ते में क्या मजदूरों के रक्त की नदी बहा देना चाहते हो?"

डाक्टर ने सहज भाव से कहा, "अवश्य चाहता हूं महामानव के मुक्ति सागर में मानवीय रक्त धारा तरंगित होकर दौड़ती जाएगी, यही मेरा स्वप्न है। इतने दिनों का पर्वत जैसा विशाल पाप धुलेगा किस चीज से? और इस धुलाई के काम में अगर तुम्हारे भैया के दो बूंद रक्त की भी आवश्यकता पड़ेगी तो मैं हंसकर बहाऊंगा।"

भारती बोली, "इतना तो मैं आपको पहचानती हूं भैया। लेकिन क्या देश में अशान्ति फैला देने के लिए ही तुम जाल बिछाकर बैठे हो? इससे बड़ा आदर्श क्या आपके पास नहीं है?"

डाक्टर बोले, "आज तक तो मिला नहीं बहिन, बहुत घूम चुका, पढ़ चुका और विचार कर चुका। लेकिन भारती अशान्ति उत्पन्न करने का

अर्थ अकल्याण उत्पन्न करना नहीं है। शान्ति, शान्ति सुनते-सुनते कान बहरे हो गए हैं। इस असत्य का प्रचार किन लोगों ने किया, जानती हो? दूसरों की शान्ति का हरण करके जो प्रसादों में बैठे हैं, वे ही इसके प्रवर्तक हैं। वंचित, पीड़ित नर-नारियों को लगातार यह मन्त्र सुनाकर उन लोगों को ऐसा बना दिया है कि वे अशान्ति के नाम से ही चौंक उठते हैं और सोचने लगते हैं कि शायद यह पाप है, अमंगल है। बंधी हुई गाय खड़ी-खड़ी ही मर जाती है, लेकिन पुरानी रस्सी को तोड़कर मालिक की शान्ति भंग नहीं करती, इसीलिए तो आज दरिद्रों के चलने का मार्ग एक दम बंद हो गया है। फिर भी उन्हीं लोगों की अट्टालिकाओं तथा प्रासादों को तोड़ने के काम में हम लोग भी उन्हीं लोगों के साथ स्वर मिलाकर, अशान्ति कहकर रोने लगेंगे तो रास्ता कहां मिलेगा? यह नहीं हो सकता भारती। यह संस्था कितनी प्राचीन, कितनी पवित्र, कितनी ही सनातन हो, मनुष्य से बड़ी नहीं है। आज उन सब को हमें तोड़ डालना होगा।"

भारती सांस रोककर बोली, "इसके बाद?"

डाक्टर बोले, "इसके बाद—वे फिर मजदूरों के दल में जाकर उन्हीं हत्यारों के द्वार पर हाथ फैलाते हैं, उन्हें उसकी दया भी मिलती है।"

"इसके बाद?"

"इसके बाद फिर एक दिन वे लोग दल बद्ध होकर पुराने अत्याचारों के प्रतिकार की आशा से हड़ताल कर बैठते हैं। तब फिर वही पुरानी कहानी दोहराई जाने लगती है।"

पलभर को भारती का मन फिर निराशा से भर गया। धीरे-धीरे बोली, "तब ऐसी हड़ताल से क्या लाभ है भैया।"

डाक्टर की आंखों की दृष्टि अंधेरे में चमक उठी। बोले, "लाभ? यही तो सबसे बड़ा लाभ है भारती। यही तो तुम्हारी क्रान्ति का राजपथ है। वस्त्रहीन, अन्नहीन, ज्ञानहीन दरिद्रों की पराजय ही सत्य हुई। उनके समूचे हृदय में जो विष भरकर उफन उठता है जगत में वह शक्ति क्या सत्य नहीं है? वही तो मेरा मूलधन है। कहीं भी, किसी भी देश में केवल क्रान्ति के लिए ही क्रान्ति नहीं की जा सकती भारती। उसके लिए कोई न कोई आधार अवश्य चाहिए। यही तो मेरा आधार है। जो मूर्ख इस बात को नहीं जानता केवल मजदूरी की कमीवेशी के लिए हड़ताल कराना चाहता है। वह उन लोगों का भी सर्वनाश करता है और देश का भी।"

भारती बोली, "नाव शायद पीछे चली गई भैया।"

डाक्टर बोले, "मेरी नजर में है बहिन। कहां जाना है भूला नहीं हूं।"

भारती बोली, "मुझे इसमें से अलग क्यों कर देना चाहते हो ? इतनी देर के बाद यह बात मेरी समझ में आई है। मैं बहुत कमज़ोर हूं। शायद उनकी तरह ही। आज भी तुम्हारा सारा भरोसा सुमित्रा जीजी पर है। लेकिन यह बात मैं किसी भी तरह नहीं मानूंगा कि इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं, मनुष्य की सारी खोज समाप्त हो चुकी है। एक के मंगल के लिए दूसरे का अमंगल करना ही होगा। इसे मैं किसी भी तरह नहीं मान सकती। तुम्हारे कहने पर भी नहीं।"

"यह मैं जानता हूं बहिन।"

"तुम्हारा काम छोड़कर मैं किसके सहारे रहूंगी ? अगर लौटकर न आये तो कैसे जीऊंगी ?"

"यह भी मैं जानता हूं।"

"जानते तो तुम सब कुछ हो।—तब ?"

कुछ देर सन्नाटा रहा। फिर भारती बोली, "क्रान्ति क्या है ? इसकी इतनी आवश्यकता क्यों है ?—तुम्हारे मुंह से जब सुनती हूं तो मेरा अन्तःकरण रोने लगता है। मानव के दुख का इतिहास तुमने न जाने कितना देखा है। नहीं तो इस तरह तुमको किसने पागल बनाया है ? अच्छा, क्या तुम मुझे अपने साथ नहीं ले जा सकते भैया ?"

"तुम क्या पागल हो गई हो भारती ?"

"पागल ? ऐसा ही होगा। मालूम होता है मैं तुम्हारे काम में बाधक हूं। इसीलिए देश के किसी भी अच्छे काम में काम नहीं आ सकती।"

डाक्टर बोले, "देश में अच्छे काम करने के असंख्य मार्ग हैं भारती—लेकिन अवसर स्वयं ही खोजना पड़ता है।"

भारती बोली, "मैं यह नहीं कर सकती। तुम ही तैयार करके दे जाओ।"

पलभर मौन रहकर डाक्टर बोले। उनका हंसता हुआ चेहरा सहसा गम्भीर हो उठा था जिसे अंधेरे में भारती देख नहीं पाई; "देश में छोटी-बड़ी अनेक ऐसी संस्थायें हैं जो देश के लिए अनेक अच्छे काम करती हैं। पीड़ितों की सेवा, रोगियों के लिए दवा जुटाना, उन्हें सान्त्वना देना, बाढ़-पीड़ितों की सहायता—ये ही तुम्हें मार्ग दिखा देंगी भारती। लेकिन मैं तो क्रान्तिकारी हूं। मुझमें मोह नहीं, दया नहीं, स्नेह नहीं, पाप पुण्य मेरे लिए मिथ्या परिहास हैं। ये सब अच्छे काम लड़कों के खेल सरीखे हैं। भारत की स्वाधीनता ही मेरा एकमात्र लक्ष्य है, मेरा एकमात्र साधन है। मेरे लिए यही अच्छा है और यही बुरा भी है। इसके अतिरिक्त मेरे जीवन में मेरे लिए कहीं भी कुछ नहीं है। अब मुझे मत खींचो भारती।"

पच्चीस

आज शशि और नवतारा का विवाह है। शशि की सविनय प्रार्थना थी कि रात को डाक्टर भारती को साथ लेकर आ जाएं और उन लोगों को आशीर्वाद दे जायें। भारती काल रेपर से अपने शरीर को ढंके चुपचाप कदम बढाती हुई, घाट के किनारे जा खड़ी हुई। डाक्टर नाव में उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

नाव में चढ़कर भारती बोली, "क्या-क्या बातें सोचती हुई आ रही थी, कोई ठिकाना नहीं है। मैं जानती थी कि मुझे बताए बिना तुम कभी नहीं जाओगे। फिर भी भय दूर नहीं होता। अभी दिन ही कितने बीते हैं लेकिन ऐसा लगता था जैसे कितने ही युगों से तुम्हें नहीं देखा है। भैया, मैं तुम्हारे साथ चीनियों के देश में चलूंगी। यह मैं बताए देती हूं।"

डाक्टर ने हंसते हुए कहा, "मैं भी बताए देता हूं कि तुम इस तरह का कोई काम करने की कोशिश कभी न करना।" यह कहकर उन्होंने भाटे के बहाव में नाव छोड़ दी। बोले, "इतनी दूर तक आराम से चले जायेंगे। लेकिन नदी में पहुंचकर उल्टे बहाव को ठेलकर पहुंचने में बहुत देर हो जायगी।"

भारती बोली, "हो जाए तो क्या ? कौन बड़े शुभ कार्य में भाग लेने जा रहे हो कि समय बीत जाने से हानि होगी ? मेरी तो जाने की इच्छा ही नहीं थी। केवल तुम जा रहे हो इसलिए चल रही हूं। कैसा गन्दा काम हो रहा है, बताओ तो।"

पल भर मौन रहकर डॉक्टर ने कहा, "शशि का नवतारा के साथ विवाह बहुत से लोगों के संस्कार में खटक रहा है। शायद यह देश के कानून के भी विरुद्ध है। लेकिन यह दोष शशि का तो है नहीं। कानून और उसे बनाने के लिए जो लोग उत्तरदायी हैं उन्हीं का दोष है। मुझे केवल इतना ही क्षोभ है कि शशि ने किसी अन्य स्त्री को प्यार नहीं किया।"

भारती हंसकर बोली, "मान लेती हूं कि शशि बाबू किसी दूसरी स्त्री को प्यार करते, लेकिन वह उन्हें क्यों प्यार करती ? उन जैसे आदमी को जान-बूझकर कोई स्त्री प्यार कर सकती है, इस बात की तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकती। अच्छा, तुम्हीं बताओ, क्या कोई कर सकती है ?"

डॉक्टर बोले, "उसे प्यार करना कठिन तो है ही। इसीलिए तो उसे

आशीर्वाद देने के लिए मैं रुक गया। मन में विचार आया कि यदि सच्ची शुभ कामना में कोई शक्ति हो तो शशि को उसका फल मिले।"

उनकी आवाज़ में अचानक गम्भीरता आ जाने के कारण भारती ने बहुत देर चुप रहने के बाद पूछा। शशि बाबू को प्यार करते हो भैया?"

"हां।"

"क्यों?"

"तुम्हें ही क्यों इतना प्यार करता हूं—क्या इसका कारण बता सकता हूं?" शायद इसी तरह हो सकता है।"

भारती ने आदर से पूछा, "अच्छा भैया, तुम्हारे लिए क्या हम दोनों एक ही समान हैं?" फिर दूसरे ही पल हंसती—हुई बोली, "फिर भी इतने दिनों में अपना मूल्य बहुत पा गई। चलो, मैं भी तुम्हारे साथ चलकर प्रसन्नता पूर्व उन्हें आशीर्वाद—नहीं, नहीं प्रणाम कर आऊं।"

डॉक्टर भी हंस पड़े बोले, "चलो।"

भारती बोली, "भैया, जैसे समुद्र की थाह नहीं है, उसी तरह तुम्हारी भी कोई कोई थाह नहीं है। स्नेह कहो, प्यार कहो, तुम्हारे ऊपर निर्भर होकर कुछ भी दृढ़ता से खड़ा नहीं रह सकता, सभी न जाने कहां समा जाते हैं।"

"पहले तो समुद्र की थाह है। इसलिए इस सम्बन्ध में तुम्हारी यह उपमा गलत है।

भारती बोली, "इस विषय में शायद मैं तुमको सौ बार कह चुकी हूं कि तुम्हारे अतिरिक्त इस संसार में मेरा और कोई नहीं है। तुम्हारे चले जाने पर मैं कहां खड़ी रहूंगी? लेकिन यह बात तुम्हारे कानों तक पहुंचती ही नहीं है। और पहुंचेगी किस तरह भैया, तुम्हारे पास हृदय तो नहीं है। मैं ठीक-ठीक जानती हूं कि एक बार आंख से ओझल होते ही तुम मुझे ज़रूर भूल जाओगे।"

डॉक्टर बोले, "नहीं, तुम्हारी याद हमेशा बनी रहेगी।"

भारती बोली, "क्या भरोसा लेकर मैं रहूंगी भैया?"

"सौभाग्यवती स्त्रियां जिस भरोसे को लेकर रहती हैं। पति, बाल-बच्चे, घर-द्वार—।"

भारती क्रुद्ध होकर बोली, "मैंने अपूर्व बाबू को मुक्त हृदय से प्यार किया था—इस सत्य को तुमसे छिपाया नहीं। उनको पा जाती तो मेरा जीवन धन्य हो जाता। लेकिन इसी कारण तुम मेरा अपमान करते रहते हो, क्यों?"

"अपमान? मैंने तो अपमान नहीं किया भारती।"

आंसू भर जाने के कारण भारती रुंधे गले से बोली, "कैसे नहीं किया ? तुम जानते हो कि इस काम में कितनी बाधाएं हैं। तुम जानते हो कि वे मुझे कभी ग्रहण नहीं कर सकते। फिर भी तुम ये बातें कहते हो।"

डॉक्टर ने मुस्करा कर कहा, "स्त्रियों में यही तो सबसे बड़ा दोष है। वे स्वयं एक दिन जो बात कह देती हैं अगर कोई दूसरा वही बात दूसरे दिन कह दे तो वे झटपट मारने दौड़ती हैं। उस दिन सुमित्रा की बात पर तुमने कहा था कि वह किसी दिन किसी को खींचकर पैरों तले ला गिरा देगी। और आज उसी बात को मैंने दोहरा दिया तो रोने लगीं।"

"नहीं, ये बातें मुझसे मत कहो।"

"अच्छा नहीं कहूंगा लेकिन इस बार की यात्रा से यदि बचकर लौट आया तो यह बात मेरे पैरों के पास गले में आंचल बांधकर तुम्हें स्वीकार करनी पड़ेगी—भैया, मुझसे करोड़ों अपराध हुए हैं। अवश्य ही तुम हाथ देखना जानते हो। नहीं तो मेरे सौभाग्य के बारे में इतनी सच्ची बात कैसे कह सकते थे।"

भारती ने इसका उत्तर नहीं दिया।

कुछ देर चुप रहकर डॉक्टर बोले तो लगा जैसे उनके कंठ स्वर में एक अद्भुत स्वर आ मिला हो। उन्होंने कहा, "उस रात जब तुम सुमित्रा की बात कह रही थीं भारती, तब मैं उसका उत्तर नहीं दे पाया था। मैं इस पथ का यात्री नहीं हूं। फिर भी तुम्हारे मुंह से सुमित्रा की कहानी सुनकर मेरे रोंगटे खड़े हो गए थे। संसार में घूमकर अनेक चीज़ों के बारे में जानकारी प्राप्त की है लेकिन केवल नर-नारी के प्रेम तत्व के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जान पाया हूं। बहिन, असम्भव नामक शब्द इस संसार में शायद इन्हीं लोगों के कोश में नहीं लिखा है।"

भारती बोली, "तुम्हारी बात सच हो भैया। वह शब्द तुम लोगों के कोश से भी मिट जाए। सुमित्रा जीजी का भाग्य एक दिन प्रसन्न हो।" थोड़ी देर ठहरकर उसने कहा; "मैंने बहुत सोच-विचार कर लिया हैलेकिन उसमें अब मेरा अपना आनन्द नहीं है। अब मैं उसकी आशा भी नहीं करती।" अपूर्व बाबू को मैं सचमुच ही प्यार करती हूं। भले हों या बुरे हों—मैं अब उनको भूल नहीं सकूंगी लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी पत्नी न बन पाने पर, उनकी घर-गृहस्थी न कर पाने पर मेरा जीवन व्यर्थ हो जाएगा मेरे लिए शोक की यह बात नहीं है भैया। मैं सच कह रही हूं कि मुझे शान्त मन से आशीर्वाद देकर रास्ता दिखाते जाओ। तुम्हारी तरह मैं भी दूसरों के काम में ही अपने इस जीवन को सार्थक कर

डालूंगी। भैया, अपनी इस निराश्रित बहिन को अपना साथी बना लो।"

डॉक्टर चुपचाप नाव चलाने लगे। इतने विनय भरे अनुरोध का उन्होंने उत्तर नहीं दिया।

अंधेरे के कारण भारती उनका चेहरा नहीं देख पाई। लेकिन उनके मौन से उसे आशा बंधी। इस बार उसकी आवाज़ में स्नेह पूर्ण निवेदन की विविड़ वेदना उभर कर ऊपर तक चली आई। बोली, "ले चलोगे भैया, अपने साथ ? तुम्हारे अतिरिक्त इस अन्धकार में बूंद भर भी प्रकाश मुझे कहीं नहीं दिखाई पड़ता।"

डॉक्टर बोले, "असम्भव है भारती। तुम्हारी बातों ने आज मुझे जोआ की याद दिला दी। तुम्हारी तरह ही उसका अमूल्य जीवन भी अकारण नष्ट हो गया था। भारत की स्वाधीनता के अतिरिक्त मेरा और कोई भी लक्ष्य नहीं है। जीवन में इससे बढ़कर और कोई कामना ही नहीं है—ऐसी भूल मुझसे कभी नहीं हुई हैं। स्वाधीनता का अन्त नहीं है। धर्म, शान्ति, काव्य, आनन्द, ये सब और भी है। इनके चरम विकास के लिए ही तो स्वाधीनता चाहिए। नहीं तो उसका मूल्य क्या है ? इसके लिए मैं तुम्हारी हत्या नहीं कर सकता बहिन। तुम्हारे अन्दर जो हृदय—स्नेह, प्रेम, करुणा और माधुर्य से लबालब भर उठा है कि वह मेरे प्रयोजन को पार करके, वहुत ऊँचाई तक चला गया है। हाथ बढ़ाने पर भी मैं वहां तक नहीं पहुंच सकता।"

भारती का सर्वांग पुलकित होकर रोमांचित हो उठा। सव्य साची के गम्भीर हृदय की एक अनुरूप मूर्ति मानो सहसा उसने देख ली। मुक्ति और आनन्द से विगलित होकर बोली, "मैं भी तो यही सोचती रही हूं भैया कि तुम्हारे लिए इस संसार का कौन-सा विषय अज्ञात है और अगर ऐसी बात है तो तुम इस षडयन्त्र में लुप्त होकर क्यों पड़े हो ? क्या तुम देश-विदेश में गुप्त समितियां स्थापित करते घूम रहे हो ? मानव का चरम कल्याण तो इनके द्वारा कभी हो ही नहीं सकता।"

डॉक्टर बोले, "ठीक यही बात है। लेकिन चरम कल्याण का भार हम विधाता के हाथों में ही छोड़कर क्षुद्र मानव के लिए जो सामान्य कल्याण है उसी को करने की चेष्टा करते हैं। अपने देश में स्वाधीन भाव से बात करने स्वाधीन भाव मे चलने-फिरने के अधिकार का ही हमारा दावा है। हम इससे अधिक और कुछ नहीं चाहते भारती।"

भारती बोली, "यह तो सभी चाहते हैं भैया। लेकिन इसके लिए नर हत्या का षडयन्त्र क्यों ? इसकी आवश्यकता ही क्या है ?"—लेकिन यह बात कहकर भारती लज्जित हो उठी। फिर एकपल रुककर बोली, "मुझे

क्षमा करो भैया ? मैंने क्रोधावेश में यह झूठी बात कह डाली। मुझे छोड़कर तुम चले जाओगे, मैं यह सोच भी नहीं सकती।"

"यह मैं जानता हूं।"

इसके बाद बहुत देर तक फिर कोई बातचीत नहीं हुई।

उस समय कुछ दिनों स्वदेशी आन्दोलन समूचे भारत में फैल चुका था। देश भर के नेता गण देश-उद्धार के उद्देश्य से कानून बचाकर जो जलते हुए भाषण देते हुए घूम रहे थे उन्हीं के सारांश अखबारों में पढ़कर भारती श्रद्धा और विस्मय से मर जाती थी। पिछली रात को ऐसी ही एक रोमांचकारी घटना अखबार में पढ़ने के बाद से आज दिन में उत्तेजना की एक तप्त हवा उसके मन में बहती रही थी। उसी को याद करके वह बोली, "मैं जानती हूं कि अंग्रेज़ी राज्य में तुम्हारे लिए स्थान नहीं है। लेकिन सारा संसार ही तो उनका नहीं है। वहां जाकर तुम लोग सरल और प्रगट रूप से अपने उद्देश्यों की सिद्धि के लिए चेष्टा कर सकते हो।" अच्छा भैया, कल के बंगला अखबार में—!"

डॉक्टर बीच में ही हंस पड़े बोले, "बचाओ भारती, हमसे तुलना करके उन पूजनीयों का अपमान मत करो।"

भारती बोली, "तुम्हीं उन पर व्यंग्य भरी छींटाकशी कर रहे हो।"

डॉक्टर बोले, "बिल्कुल नहीं, उन लोगों की मैं भक्ति करता हूं और उनके देशोद्धार के लिए किए गए भाषणों का हम लोगों से अधिक उपयोग भी कोई नहीं करता।"

भारती बोली, "तुम लोगों का मार्ग भले ही एक न हो लेकिन उद्देश्य तो एक ही है।"

डॉक्टर बोले, "अभी तक मैं सचमुच हंस रहा था लेकिन अब मैं क्रोध करूंगा भारती। रास्ता एक नहीं है, यह जानी हुई बात है। लेकिन लक्ष्य उससे भी अधिक स्पष्ट है यह क्या तुम्हारी समझ में नहीं आया ? संसार की अनेक जातियां स्वाधीन है। इससे बढ़कर दूसरा कोई गौरव मानव जाति के लिए नहीं है। उस स्वाधीनता का दावा करना, उसके लिए चेष्टा करना तो दूर की बात है उसकी कामना करना कल्पना करना भी अंग्रेज़ों के कानून में राजद्रोह माना गया है। मैं उसी अपराध का अपराधी हूं। चिरकाल तक पराधीन रहना ही इस देश का कानून है। इसलिए ये सब चतुर, पूज्य व्यक्ति कानून से बाहर कभी कोई दावा नहीं करते। चीन देश के मंचू राजाओं की तरह इस देश में भी अगर अंग्रेज यह कानून बना देते कि सबको ढाई हाथ लम्बी चोटी रखनी पड़ेगी तब उस चोटी के विरुद्ध भी ये लोग किसी तरह की गैर कानूनी प्रार्थना न करते। ये लोग यह कहकर

आन्दोलन करते कि ढाई हाथ की चोटी रखने का कानून बना कर देश के प्रति बहुत बड़ा अन्याय किया गया है। इससे देश का सर्वनाश हो जाएगा इसलिए इसे घटाकर सवा दो हाथ कर दिया जाए।"—इतना कहकर वे अपनी रसिकता से प्रफुल्लित होकर सहसा इस तरह ठठाकर हंस पड़े कि नदी की अन्धकारमय नीरवता भी विक्षुब्ध हो उठी।

हंसी रुकने पर भारती बोली, "तुम जो कुछ भी क्यों न कहो, लेकिन यह बात मैं किसी भी तरह नहीं मान सकती कि वे भी देशवासियों के लिए अभिनन्दनीय नहीं हैं। मैं सभी की बात नहीं कह रही हूं। लेकिन जो लोग वास्तव में राजनीतिज्ञ हैं, वास्तव में देश के शुभचिन्तक हैं, उनका सारा परिश्रम ही व्यर्थ है। यह बात निस्संकोच स्वीकार कर लेना कठिन है। मत और मार्ग पृथक-पृथक होते हुए भी किसी की उपेक्षा करना शोभा नहीं देता।"

उसकी आवाज़ की गम्भीरता अनुभव करके डॉक्टर चुप हो गए। कुछ देर बाद धीरे से बोले, "भारती, तुमको व्यथा पहुंचाना मेरा अभिप्राय नहीं है। उनके राजनैतिक पांडित्य पर भी मेरी भक्ति कम नहीं है। लेकिन बात क्या है तुम्हें इसकी वास्तविक जानकारी करा देता हूं बहिन। जब कोई गृहस्थ छोटी रस्सी से गाय को बांधता है तो उस छोटी रस्सी में केवल एक ही नीति रहती है। मैं केवल इतना ही जानता हूं। बिल्कुल पहुंच के बाहर रखे गए खाद्य पदार्थ की ओर जी-जान से मुंह बढ़ाकर उसे चाटने या खाने की गाय की चेष्टा में अवैधता कुछ भी नहीं है। वह नितान्त वैधानिक और कानून सम्मत है। उत्साह देने योग्य हृदय हो तो दे सकती हो। राजा की ओर से मनाही नहीं है। लेकिन गाय या बैल के इस उद्यम को जो लोग बाहर से देखते हैं। उनके लिए हंसी रोक पाना कठिन हो जाता है।"

भारती हंसकर बोली, "तुम बड़े दुष्ट हो भैया। लेकिन यह बात समझ में नहीं आती कि जिसके प्राण रात दिन पतले धागे में लटक रहे हों वह दूसरों की बात पर हंसी मज़ाक कैसे करता है?"

डाक्टर ने स्वाभाविक स्वर में कहा, "इसका कारण यह है कि इस समस्या पर पहले ही विचार हो चुका है भारती, जिस दिन से मैंने क्रान्तिकारी कामों में भाग लिया है। अब मुझे कुछ सोचना भी नहीं है, शिकायत भी नहीं करनी है। मैं जानता हूं कि मुझे हाथ में पाकर भी जो राज-शक्ति मुझे छोड़ देती है वह या तो असमर्थ है या फिर उनके पास फांसी देने के लिए रस्सी नहीं है।"

भारती बोली, "इसीलिए तो मैं तुम्हारे साथ रहना चाहती हूं, भैया।

मेरे होते हुए तुम्हारे प्राण ले सके ऐसी शक्ति संसार में कोई भी नहीं है। यह मैं किसी भी तरह नहीं होने दूंगी।" कहते-कहते उसकी आवाज भारी हो उठी।

डाक्टर को इसका पता चल गया। चुपचाप लम्बी सांस लेकर वे बोले, "नाव पर अब ज्वार लग रहा है भारती। अब हमें पहुंचने में देर नहीं होगी।"

भारती बोली, "हटाओ। जाने दो। मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा।"

दो मिनट के बाद उसने पूछा, "इतनी बड़ी राजशक्ति को तुम लोग शारीरिक शक्ति से हिलाकर गिरा सकते हो—इस बात में क्या तुम सच-मुच ही विश्वास करते हो भैया ?"

डाक्टर बोले, "करता हूं और पूरे हृदय से करत हूं। इतना बड़ा विश्वास न रहता तो मेरा इतना बड़ा व्रत बहुत दिन पहले ही भंग हो गया होता।"

भारती बोली, "लेकिन शायद धीरे-धीरे अपने कामों में से तुम मुझे निकालते जा रहे हो। ठीक है न भैया ?"

डाक्टर मुस्कराते हुए बोले, "नहीं, ऐसी बात नहीं है भारती लेकिन विश्वास ही तो शक्ति है। विश्वास न रहने से तो सन्देह के कारण तुम्हारा कर्त्तव्य कदम-कदम पर बोझ सा हो उठेगा। संसार में तुम्हारे लिए दूसरे काम है बहिन। कल्याणकारी शान्तिपूर्ण मार्ग है जिसपर तुम अपने सम्पूर्ण हृदय से विश्वास करती हो उसी काम को तुम करो।"

अगाध स्नेह के कारण ही यह व्यक्ति अपने अत्यन्त संकटपूर्ण विप्लव के मार्ग से दूर हटा देना चाहता है।—इसका भली भांति अनुभव करके भारती की सजल आंखों से आंसू उमड़ पड़े। छिपाकर अंधेरे में धीरे-धीरे आंसू पोंछकर बोली, "भैया, मेरी बात सुनकर नाराज मत होना। इतनी बड़ी राज-शक्ति, कितनी बड़ी सैन्य शक्ति, कितने उपकरण, युद्ध का कितना विचित्र और भयानक आयोजन—इनके सामने तुम्हारा क्रान्तिकारी दल कितना सा है ? समुद्र के सामने तुम गोबरैले से भी तो छोटे हो। उसके साथ तुम अपनी शक्ति की परीक्षा किस प्रकार करना चाहते हो ? प्राण देना चाहते हो तो जाकर दे दो। लेकिन इससे बड़ा पागलपन मुझे और कोई दिखाई नहीं देता। तुम कहोगे, तब क्या देश का उद्धार नहीं होगा ? प्राणों के भय से क्या अलग हटकर खड़ा हो जाऊं ? लेकिन मैं यह नहीं कह रही हूं तुम्हारे पास रहकर तुम्हारे चरित्र से मैं यह जान गई हूं—कि जननी जन्म भूमि क्या चीज है। उसके चरणों

में सर्वस्व अर्पण कर सकने से बढ़कर सार्थकता मनुष्य के लिए और नहीं हो सकती। यह बात भी अगर तुमको देखकर मैं न सीख सकी होऊं तो मुझ से बढ़कर किसी अधमनारी ने जन्म ही नहीं लिया, यह मानना पड़ेगा। लेकिन केवल आत्महत्या करके ही कब कौन देश स्वतन्त्र हुआ है? तुम्हारी भारती किसी तरह केवल जीवित रहना चाहती है। इतनी बड़ी गलत धारणा मेरे सम्बन्ध में कभी मत रखना, भैया।"

डाक्टर बोले, "ऐसी ही बात है।"

"ऐसी ही बात क्या ?"

"तुम्हारे सम्बन्ध में गलती तो हुई ही है," यह कहकर कुछ देर के लिए डाक्टर मौन हो गए। फिर बोले, "भारती, विप्लव का अर्थ है—अत्यन्त शीघ्रता से आमूल परिवर्तन। सैन्य बल, विराट युद्ध के उपकरण, ये सब मैं जानता हूं। लेकिन शक्ति परीक्षा तो हम लोगों का लक्ष्य नहीं है। आज जो लोग हमारे शत्रु है कल वे ही लोग मित्र भी हो सकते हैं। नीलकान्त शक्ति परीक्षण के लिए नहीं गया था, उसने मित्र बनाने के लिए प्राण दिए थे। हाय रे नीलकान्त ! आज कोई उसका नाम तक नहीं जानता।"

अन्धकार के बीच भी भारती ने स्पष्ट रूप से समझ लिया कि देश के बाहर, देश के काम में जिस लड़के ने लोगों की नजरों से बचकर चुपचाप प्राण दे दिए उसे याद करके इस निर्विकार अत्यधिक संयत व्यक्ति का गम्भीर हृदय पल भर के लिए आलोकित हो उठा है। अचानक वे सीधे होकर बैठ गए। बोले, "क्या कह रही थीं भारती, गोबरैला ? ऐसा ही हो शायद। लेकिन आग की जो चिनगारी गाँव-नगर जलाकर भस्य कर देती है वह आकार में कितनी बड़ी होती है ? जानती हो ? शहर जब जलता है तब वह अपना ईंधन आप ही इकट्ठा करके भस्म होता रहता है। उसके राख होने की सामग्री उसी के अन्दर संचित रहती है। विश्व-विधान के इस नियम का कोई भी राज शक्ति कभी भी व्यतिक्रम नहीं कर सकती।"

भारती बोली, "भैया, तुम्हारी बात सुनने से शरीर कांपने लगता है। जिस राज शक्ति को तुम जला देना चाहते हो उसका ईंधन तो हमारे देश के लोग हैं। इतने बड़े लंका कांड की कल्पना करते हुए क्या तुम्हारे मन में करुणा नहीं जागती ?"

डाक्टर ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "नहीं। प्रायश्चित शब्द क्या केवल मुंह से कहने के लिए ही है ? हमारे पूर्वज-पितामहों के युगों से संचित किए गए पापों का अपरिमेय स्तूप कैसे समाप्त होगा—बता सकती हो ?

करुणा की अपेक्षा न्याय धर्म बहुत बड़ी चीज़ है भारती।"

भारती बोली, "यह तुम्हारी पुरानी बात है भैया। भारत की स्वन्त्रता के सम्बन्ध में रक्तपात के अतिरिक्त और कुछ जैसे तुम्हारे मन में आ ही नहीं सकता, रक्तपात का उत्तर क्या रक्तपात ही हो सकता है? और उसके उत्तर में भी तो रक्तपात के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता। यह प्रश्नोत्तर तो आदिम काल से ही होता चला आ रहा है। तब क्या मानव सभ्यता इससे बड़ा उत्तर किसी दिन दे नहीं सकेगी? देश चला गया। लेकिन उससे भी बड़ा जो मनुष्य है वह तो आज भी मौजूद है। मनुष्य-मनुष्य के साथ आपस में लड़ाई-झगड़ा न करके क्या किसी तरह रह नहीं सकते?"

डाक्टर बोले, "एक अंग्रेज कवि ने कहा है कि पश्चिम और पूर्व किसी दिन भी नहीं मिल सकते।"

भारती बोली, "मूर्ख है वह कवि। कहने दो उसे। तुम ज्ञानी हो। तुमसे मैंने अनेक बार पूछा है, आज भी पूछ रही हूं। होने दो उन्हें पश्चिम या योरूप का मनुष्य। लेकिन है तो वे मनुष्य ही? मनुष्य के साथ मनुष्य क्या किसी प्रकार भी मित्रता नहीं कर सकता। भैया, मैं ईसाई हूं। अंग्रेजों की ऋणी हूं। उनके अनेक सद्गुण मैंने देखे हैं। उन लोगों को इतना बुरा सोचने पर मेरी छाती में शूलसा बिंध जाता है। लेकिन मुझे गलत मत समझना भैया। मैं बंगाली लड़की हूं। तुम्हारी बहिन हूं। बंगाल की मिट्टी और बंगाल के मनुष्यों को अपने प्राणों से बढ़कर प्यार करती हूं। कौन जानता है तुमने जिस जीवन को चुन लिया है, उसे देखते हुए शायद आज ही हम लोगों की अन्तिम भेंट हो। शान्त मन से आज उत्तर देते जाओ जिससे उसी ओर दृष्टि रखकर जीवन भर नजर उठाकर सीधी चल सकूं," कहते-कहते उसका गला रुंध गया।

डाक्टर चुपचाप नाव खेते रहे। विलम्ब देखकर भारती के मन में यह विचार आया कि शायद वे इसका उत्तर नहीं देना चाहते। उसने हाथ बढ़ाकर नदी के पानी से मुंह धो डाला। अपने आंचल से अच्छी तरह पौंछ कर फिर न मालूम वह क्या प्रश्न करने जा रही थी कि डाक्टर बोल उठे, "एक तरह के ऐसे सांप होते हैं भारती, जो सांप खाकर ही जीते हैं। तुमने देखे हैं?"

भारती ने कहा, "नहीं, देखे नहीं। केवल सुना है।"

डाक्टर बोले, "पशुशाला में हैं। एक बार कलकत्ते जाकर अपूर्व को आदेश देना, वह दिखा देगा।"

"मजाक मत करो भैया, अच्छा नहीं होगा।"

"अच्छा नहीं होगा; मैं भी यही कह रहा हूं। उनका पास-पास रहना ठीक नहीं होता, लेकिन विश्वास न हो तो चिड़िया घर के इंचार्ज से पूछ लेना।"

भारती चुप ही रही।

डाक्टर बोले, "तुम उन लोगों के धर्म को मानती हो। उनकी ऋणी हो। उनके अनेक सद्गुण तुमने अपनी आंखों से देखे हैं। लेकिन क्या तुम ने देखा है उनकी विश्व को हड़प लेने वाली विराट भूल का परिणाम? वे लोग इस देश के स्वामी हैं। आज ब्रिटिश सम्पत्ति की तुलना नहीं की जा सकती। कितने जहाज, कितने कल कारखाने, कितनी हजारों-लाखों इमारतें। मनुष्यों को मार डालने के उपकरणों और आयोजनों का अन्त नहीं है। अपने समस्त अभावों और हर प्रकार की आवश्यकताओं को मिटा कर भी अंग्रेजों ने सन् 1910 से लेकर सत्रह वर्षों तक बाहरी देशों को ऋण दिया था—तीन हजार करोड़ रुपए। जानती हो, इस विराट वैभव का उद्गम कहां है? अपने को तुम बंग देश की लड़की बता रही थीं न? बंगाल की मिट्टी, बंगाल की जलवायु, बंगाल के मनुष्य, तुम्हारे लिए प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं न? इसी बंगाल के दस लाख नर-नारी प्रति वर्ष मलेरिया से मर जाते हैं। एक युद्धपोत का मूल्य कितना होता है जानती हो? उन में से केवल एक के ही खर्च से कम से कम दस-लाख माताओं के आंसू हमेशा के लिए पोंछे जा सकते हैं। कभी तुमने इस बात पर भी विचार किया है? शिल्प गया, व्यापार गया, धर्म गया, ज्ञान गया—नदियों की छाती सूखकर मरुस्थल बनती जा रही है। किसान को भर पेट खाने को अन्न नहीं मिलता। शिल्पकार विदेशियों के द्वार पर मजदूरी करता है। देश में जल नहीं, अन्न नहीं। गृहस्थ की सर्वोत्तम सम्पदा गोधन भी नहीं। दूध के अभाव में उनके बच्चों को मरते देखा है भारती?"

भारती ने चीखकर उन्हें रोकना चाहा, लेकिन उसके गले से एक अस्फुट शब्द के अतिरिक्त और कुछ नहीं निकला।

सव्यसाची का वह धीमा संयत कंठ स्वर पहले ही कभी अन्तर्हित हो चुका था। बोला, "तुम ईसाई हो। तुम्हें याद है एक दिन कौतुहल वश तुमने यूरोप की ईसाई सभ्यता का स्वरूप जानना चाहा था। उस दिन व्यथा पहुंचने के भय से मैंने नहीं बताया था। लेकिन आज बताता हूं। तुम लोगों की पुस्तक में क्या है, मैं नहीं जानता। सुना है अच्छी बातें बहुत है। लेकिन बहुत दिनों तक एक साथ रहने से उनका वास्तविक स्वरूप मुझसे छिपा नहीं है। लज्जाहीन नग्न स्वार्थ और पाशविक शक्ति

की प्रधानता ही उसका मूलमन्त्र है। सभ्यता के नाम पर दुर्बलों और असमर्थों के विरुद्ध मनुष्य की बुद्धि ने इससे पहले इतने भयंकर और घातक मूसल का आविष्कार नहीं किया था। पृथ्वी के मानचित्र की ओर आंख उठकर देखो, यूरोप की विश्व ग्रासी भूख से कोई भी दुर्बल जाति अपनी रक्षा नहीं कर पाती। देश की मिट्टी, देश की सम्पदा से देश की सन्तान किस अपराध से वंचित हुई तब जानती हो भारती, एक मात्र शक्ति हीनता के अपराध से। फिर भी न्याय धर्म ही सबसे बड़ा धर्म है। और विजित जाति के अशेष कल्याण के लिए ही अधीनता की जंजीर उसके पैरों में डालकर उस पंगु का हर प्रकार का उत्तरदायित्व ढोते रहना ही योरोपियन सभ्यता का परम कर्त्तव्य है। इस परम असत्य का लेखों भाषणों, मिशनरियों के धर्म प्रचार में, लड़कों की पाठ्य पुस्तकों के द्वारा प्रचार करना ही तुम लोगों की अपनी सभ्यता की राजनीति है।

भारती मिशनरियों के बीच ही इतनी बड़ी हुई है। अनेक महान चरित्र उसने वास्तव में अपनी आंखों से देखे हैं। विशेष रूप से अपने धार्मिक विश्वास पर इस प्रकार से अकारण आक्रमण से व्यथित होकर बोली, "भैया, जिस धर्म का प्रचार करने के लिए जो लोग इस देश में आए हैं, उन लोगों के सम्बन्ध में मैं तुमसे बहुत अधिक जानती हूं। उन लोगों के प्रति आज तुम निरपेक्ष भाव से विचार नहीं कर पा रहे हो। योरोपियन सभ्यता ने क्या तुम लोग की कोई भलाई नहीं की? सतीदाह की प्रथा, गंगा सागर में सन्तान विसर्जन—।"

डाक्टर बीच में ही रोककर बोल उठे, "चड़क पूजा के समय पीठ छेदना, संन्यासियों की तलवार पर उछल-कूद मचाना, डकैती, ठगी, विद्रोहियों का उपद्रव, गोड़ा और खासियों की आषाढ़ में नरबलि, और भी बहुत से काम हैं जिनकी याद नहीं आ रही भारती।"

भारती ने एक शब्द भी नहीं कहा।

डाक्टर बोले, "ठहरो, और भी दो बातें याद आ गईं। बादशाहों के ज़माने में गृहस्थ लोग बहू-बेटियों और दासियों को अपने घरों में नहीं रख सकते थे। नवाब लोग स्त्रियों के पेट चीर कर बच्चों को देखा करते थे। हाय रे हाय, इसी तरह विदेशियों के लिखे इतिहास ने साधारण और तुच्छ बातों को विपुल और विराट बनाकर देश के प्रति देशवासियों के मन को विमुख कर दिया। मुझे याद है, अपने बचपन में स्कूल की पाठ्य पुस्तक में मैंने पढ़ा था विलायत में बैठ कर केवल हम लोगों के कल्याण की चिंता में लगे रहकर राज्य मन्त्री की आंखों की नींद और मुंह का अन्न नीरस हो गया है। यह असत्य लड़कों को रटना पड़ता है और पेट

के लिए शिक्षकों को ज़बानी याद कराना पड़ता है और सभ्य राज तन्त्र की यही राजनीति है भारती। आज अपूर्व को दोष देना व्यर्थ है।"

अपूर्व की लांछना से भारती मन-ही-मन लज्जित ही नहीं हुई, क्रुद्ध भी हो उठी। उसने कहा, "तुमने जो कुछ कहा है सत्य हो सकता है। सम्भव है किसी अत्यन्त राजभक्त कर्मचारी ने ऐसा ही किया हो। लेकिन इतने बड़े साम्राज्य की मूल नीति कभी असत्य नहीं हो सकती। उसके ऊपर नींव रखकर इतनी बड़ी विशाल संस्था एक दिन भी टिकी नहीं रह सकती। तुम कहोगे कि अनन्त काल की तुलना में वे दिन कितने होते हैं ? ऐसे ही साम्राज्य तो इससे पहले भी थे। क्या वे चिरस्थायी हुए ? तुम्हारा कहना अगर सत्य भी हो यो वह भी चिरस्थायी नहीं होगा। लेकिन यह शृंखला-बद्ध, सुनियन्त्रित राज्य है। तुम चाहे कितनी भी निन्दा क्यों न करो, इसकी एकता, इसकी शान्ति से क्या कोई शुभ लाभ हुआ ही नहीं ? पश्चिमी सभ्यता के प्रति कृतज्ञ होने का क्या कोई भी कारण तुम्हें नहीं मिला ? अपनी स्वाधीनता तो तुम लोग बहुत दिनों से खो चुके हो और इस बीच राजशक्ति का परिवर्तन तो अवश्य ही हुआ है। लेकिन तुम्हारे भाग्य का परिवर्तन नहीं हुआ। ईसाई होने के कारण मुझे गलत मत समझ लेना भैया। अपने सभी लेकिन अपराध विदेशियों के मत्थे मढ़कर ग्लानि में डूबे रहना ही अगर तुम्हारे देश प्रेम का आदर्श हो तो तुम्हारे उस आदर्श को मैं नहीं अपना सकूंगी। हृदय में इतना विद्वेष भर कर तुम शायद अंग्रेजों की कुछ हानि कर सको, लेकिन उससे भारतवासियों का कुछ भी कल्याण नहीं होगा। इस सत्य को निश्चित रूप से जान लेना।"

भारती के शब्दों के कानों में पहुंचते ही सव्यसाची चौंक पड़े। भारती का यह रूप अपरिचित था। यह भावनाएं अप्रत्याशित थीं। जिस धार्मिक विश्वास और सभ्यता के गहरे प्रभाव के बीच पल कर वह बड़ी हुई है उसी के ऊपर आघात होने से उत्तेजित और असहिष्णु होकर जो यह निर्भीक प्रतिवाद कर बैठी वह भले ही कितना ही कठोर और प्रतिकूल क्यों न हो—सव्यसाची की दृष्टि में उसने मानो उसे नई मर्यादा दे डाली। उसे निरुत्तर देखकर भारती बोली, "तुमने कोई उत्तर नहीं दिया भैया ? हिंसा की इतनी बड़ी आग को अपने हृदय में जलाकर तुम और चाहे जो कुछ भी करो, देश की भलाई नहीं कर सकोगे।"

डॉक्टर बोले, "तुमसे तो मैंने अनेक बार कहा है कि जो लोग देश की भलाई करने वाले हैं वे चन्दा इकट्ठा करके अनाथ आश्रम, ब्रह्मचर्या श्रम, वेदान्त आश्रम, दरिद्र भंडार आदि तरह-तरह के लोक हितकारी कार्य कर रहे हैं। महान् पुरुष हैं वे। मैं उनकी भक्ति करता हूं। लेकिन मैंने देश की

भलाई करने का भार नहीं लिया है, मैंने उसे स्वतन्त्र कराने का भार लिया है।—मेरे हृदय की आग केवल दो बातों से बुझ सकती है। एक तो अपनी चिता भस्म से, या फिर जिस दिन यह सुन लूंगा कि यूरोप का धर्म, उसकी सभ्यता, नीति सागर के अतल गर्भ में डूब गई है।"

भारती स्तब्ध रह गई।

वे कहने लगे, "इस विषकुंड का भरपूर सौदा लेकर यूरोप जब समुद्र पार करके पहले पहल व्यापार करने आया था तब उसे केवल जापान पहचान सका था। इसी से आज उसका इतना सौभाग्य है। इसी से आज वह यूरोप के समकक्ष सभ्रान्त मित्र बना हुआ है। लेकिन चीन और भारत उसे नहीं पहचान सके। उन दिनों स्पेन का राज्य सारी पृथ्वी पर फैला हुआ था। एक छोटे से जापानी ने स्पेन के एक नाविक से पूछा, "तुम लोगों को इतना अधिक राज्य कैसे मिला?" नाविक ने उत्तर दिया, "बड़ी आसानी से। हम जिस देश को हड़पना चाहते हैं वहां हम पहले बेचने के लिए माल ले जाते हैं। हाथ-पैर जोड़कर उस देश के राजा से मांग लेते हैं थोड़ी-सी जमीन। उसके बाद ले आते हैं पादरी। वे लोग जितने लोगों को ईसाई नहीं बना पाते उससे कहीं अधिक उस देश के प्रचलित धर्म को गाली-गलौज देते हैं। तब लोग बिगड़कर पागल हो जाते हैं और दो-एक को मार डालते हैं। तब हम मंगा लेते हैं अपनी तोप-बन्दूकें और सेना। और तत्काल यह प्रमाणित कर देते हैं कि हमारे सभ्य देश के मानव संहार-कारी यन्त्र असभ्य देश की अपेक्षा कितने श्रेष्ठ हैं।"—यह सुनकर जापानी ने कहा। "हे प्रभु, तब तो आप यहां से अपना डेरा-डंडा उठा लीजिए। आपके रोजगार से हमारा कोई सरोकार नहीं।"—यह कहकर उन्हें विदा करके जापान ने अपने देश में कानून जारी कर दिया कि जब तक सूर्य और चन्द्रमा उदित होते रहेंगे तब तक ईसाई उनके देश में कदम नहीं रखने पायेंगे। रखेंगे तो उन्हें प्राण दंड दिया जाएगा।"

अपने धर्म और धर्म प्रचारकों के प्रति किए गए इन तीखे आक्षेप से दुखी होकर भारती बोली, "यह बात मैं पहले भी सुन चुकी हूं। लेकिन जिन जापानियों के प्रति तुम भक्ति रखते हो वे कैसे हैं?"

डॉक्टर बोले, "यह झूठ है कि भक्ति रखता हूं। मैं उनको घृणा करता हूं। कोरियावासियों को बार-बार बन्धक और अभय देकर भी बिना दोष के झूठे बहाने गढ़कर उनके राजा को कैद करके सन् 1910 में जब जापान ने कोरिया राज्य हड़प लिया, मैं शंघाई में था। उस दिन के वे सब अमानुषिक अत्याचार भूल जाने के योग्य नहीं हैं। अभय क्या केवल जापान ने ही दिया था भारती? यूरोप ने भी दिया था। लेकिन शक्तिशाली

जापान के विरुद्ध अंग्रेज़ों ने भी मुंह नहीं खोला। उसने कहा, हम लोग एंग्लो-जापानी सन्धि सूत्र में बंधे हुए हैं। और यही बात संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के राष्ट्रपति ने भी अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कह दी कि वचन देने से क्या हुआ? जो असमर्थ और शक्तिहीन राष्ट्र अपनी रक्षा नहीं कर सकता तो उसका राज्य नहीं जाएगा तो किसका जाएगा। ठीक ही हुआ? अब हम लोग जायेंगे उनका उद्धार करने? असम्भव है। पागलपन है।" यह कहकर सव्यसाची ने एक पल चुप रहकर कहा। "मैं भी कहता हूं भारती कि यह असम्भव है, असंगत है, पागलपन है। दुर्बल का धन शक्तिशाली क्यों नहीं छीन लेगा? इस बात को सभ्य यूरोप की नैतिक बुद्धि सोच भी नहीं सकती।"

भारती अवाक् हो रही।

वे कहने लगे अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में ब्रिटेन का दूत लार्ड मैकार्टनी गया चीनी दरबार में। व्यापार की थोड़ी-सी सुविधा प्राप्त करने के लिए। मंचू नरेश शिनलुंग उन दिनों समस्त चीन के सम्राट् थे। वे अत्यन्त दयालु थे। दूत की विनीत प्रार्थना से प्रसन्न होकर उन्होंने आशीर्वाद देते हुए कहा, "देखो भैया हमारे स्वर्ग जैसे साम्राज्य में किसी भी वस्तु का अभाव नहीं है, लेकिन तुम आए हो बहुत दूर से, अनेक कष्ट सहकर। जाओ, केन्टन शहर में जाकर व्यापार करो। स्थान देता हूं। तुम सब लोगों का भला होगा।" राजा का यह आशीर्वाद निष्फल नहीं हुआ पचास वर्ष भी नहीं बीतने पाए कि चीन के साथ अंग्रेज़ों का प्रथम युद्ध छिड़ गया।"

भारती ने आश्चर्य में पड़ कर पूछा, "क्यों भैया?"

डॉक्टर बोले, "यह चीन का अन्याय था—सम्राट सहसा बोल उठा", अफीम खाते-खाते हमारी आंखें बंद होती जा रही हैं। बुद्धि-शुद्धि अब नहीं रही कृपा करके इस चीज़ का आयात रोक दो।"

"इसके बाद?"

"इसके बाद का इतिहास बहुत ही संक्षिप्त-सा है। दो ही वर्ष के अन्दर अफीम खाने को राजी होकर और भी पांच बन्दरगाहों में केवल पांच रुपए प्रतिशत टैक्स पर व्यापार करने की स्वीकृति देकर और अन्त में हांग-कांग बन्दरगाह दक्षिणा में देकर सन् 42 में यह युद्ध समाप्त हुआ। ठीक ही हुआ। इतनी सस्ती अफीम पा कर भी जो मूर्ख खाने में आपत्ति करता है उसका ऐसा प्रायश्चित उचित ही तो था।

भारती बोली, "यह तुम्हारी मनगढ़न्त कहानी है।"

डॉक्टर बोले, "होने दो। कहानी सुनने में तो अच्छी है।" और यही

देखकर फ्रान्सीसी सभ्यता ने कहा था—"मेरे पास अफीम तो नहीं लेकिन इन्सानों की हत्या करने के लिए अच्छे से अच्छे यन्त्र अवश्य हैं। इसलिए युद्ध हुआ। फ्रांसीसियों ने चीन साम्राज्य का अनाम प्रान्त छीन लिया और युद्ध का खर्च अधिक से अधिक व्यापारिक सुविधाएं, ट्रीटी-पोर्ट आदि—ये सब तुच्छ कहानियां हैं। इन्हें रहने दो।"

भारती बोली, "लेकिन भैया, ताली क्या एक ही हाथ से बजती है? चीन का क्या कुछ भी अन्याय नहीं है?"

डॉक्टर बोले, "हो सकता है। लेकिन तमाशा तो यह है कि योरोपियन सभ्यता का अन्याय बोध दूसरों के घरों पर चढ़ाई करने के लिए ही होता है। उनके अपने देश में ऐसी घटना दिखाई नहीं पड़ती।"

"उसके बाद?"

"बता रहा हूं। जर्मन सभ्यता ने देखा—वाह रे वाह—यह तो बड़ी मजेदार बात है। हम तो घाटे में ही रह गए।—और उसने भी एक जहाज में पादरी भरकर उनके बीच लगा दिया। सन् 1697 में जब वे लोग प्रभु ईसा की महिमा, शान्ति और न्याय धर्म का प्रचार कर रहे थे तब चीनियों का एक दल पागल हो उठा और उसने दो परम धार्मिक प्रचारकों के सिर काट डाले—अन्याय—चीन का ही अन्याय था। इसलिए शनटुंग प्रान्त जर्मनी के पेट में चला गया। उसके बाद केन्टन में विद्रोह हुआ। यूरोप की सभी सभ्यताओं ने एक होकर उसका जो बदला लिया शायद कहीं भी उसकी तुलना नहीं मिल सकती। उस हर्जाने का अपरिमित ऋण चीनी लोग कितने दिनों तक चुकाते रहेंगे यह बात ईसा प्रभु ही जानते हैं। इस बीच ब्रिटिश सिंह, ज़ार के भालू, जापान के सूर्य देव—लेकिन अब नहीं बहिन, मेरा गला सूखता जा रहा है। दुख की तुलना में अकेले हम लोगों के सिवा शायद उन लोगों का और कोई साथी नहीं है। सम्राट शिनटुंग निर्वाण को प्राप्त हो, उनके आशीर्वाद की बड़ी महिमा है।"

भारती एक बहुत लम्बी सांस खींचकर चुप हो रही।

"भारती।"

"क्या है भैया?"

"चुप क्यों हो?"

"तुम्हारी कहानी की ही बात सोच रही हूं। अच्छा भैया इसी लिए क्या चीन में तुमने अपना कार्यक्षेत्र चुना है? जो लोग सैकड़ों अत्याचारों से जर्जरित हैं उनको उत्तेजित कर देना कठिन नहीं है। लेकिन एक बात और है? इस पर क्या तुमने विचार किया है। उन सब निरीह अज्ञानी किसान-मज़दूरों का दुख तो यों ही यथेष्ट है। उस पर फिर मार-का-,

खून-खराबी, शुरू कर देने से तो उनके दुखों की सीमा नहीं रहेगी।"

डॉक्टर बोले, "निरीह किसान-मजदूरों के लिए दुश्चिन्ता में पड़ने की तुम्हें ज़रूरत नहीं है भारती। किसी भी देश में वे स्वाधीनता के काम में भाग नहीं लेते। बल्कि बाधा ही डालते हैं। उन लोगों को उत्तेजित करने के लिए, व्यर्थ परिश्रम करने का समय मेरे पास नहीं है मेरा कारोबार शिक्षित, मध्यवित्त और भद्र लोगों को लेकर ही चलता है यदि किसी दिन मेरे काम में शामिल होना चाहो भारती तो इस बात को मत भूलना। आइडियल या आदर्श के लिए प्राण दे सकने योग्य मनोबल की आशा, शान्ति प्रिय, निर्विरोध, निरीह किसानों से करना बेकार है। वे स्वतन्त्रता नहीं चाहते, शान्ति चाहते हैं। जो शान्ति असमर्थ-अशक्त लोगों की है—।"

भारती व्याकुल होकर बोली, "मैं भी यही चाहती हूं भैया। बल्कि तुम मुझे इसी जड़ता के काम में नियुक्त कर दो। तुम्हारे पथ के दावेदार के सिद्धान्त से मेरी सांस रुकती चली जा रही है।"

सव्यसाची ने हंसकर कहा, "अच्छा।"

भारती रुक न सकी। उसी तरह व्यग्र उच्छवास से बोली, "अच्छा शब्द का उच्चारण कर देने के अतिरिक्त क्या कुछ भी कहने को शब्द तुम्हारे पास नहीं हैं भैया?"

"हम लोग आ पहुंचे हैं भारती। सावधानी से बैठ जाओ। चोट न लग जाए।" यह कहकर डॉक्टर ने तेज़ी से धक्का लगाकर छोटी-सी नाव को अंधेरे में नदी के किनारे लगा दिया। भारती को उतारते हुए उन्होंने कहा, "पानी या कीचड़ नहीं है बहिन, तख्ता बिछा है, उसी पर से चली आओ।"

अंधेरे में नीचे पैर रखकर तृप्ति की सांस लेते हुए भारती बोली, "भैया, तुम्हारे हाथों में आत्म-समर्पण करने के समान निर्विघ्न शान्ति और कहीं नहीं है।"

लेकिन दूसरी ओर से कोई नहीं उत्तर आया। अंधेरे में दोनों के कुछ दूर आगे बढ़ने पर डॉक्टर ने आश्चर्य भरे स्वर में कहा, "लेकिन बात क्या है बताओ तो? यंह क्या विवाहोत्सव का मकान है, न तो बत्तियों की रोशनी है, न कोई हल्ला-गुल्ला ही है। बेहले का सुर भी नहीं। कहीं चले गए हैं क्या ये लोग?"

दोनों सीढ़ी से चढ़कर चुपचाप ज्यों ही ऊपर पहुंचे खुले द्वार दिखाई दिया शशि—जो बड़े ध्यान से अखबार पढ़ रहा था।

भारती प्रसन्नता भरे स्वर में पुकार उठी, "शशिबाबू, हम लोग आ गए। खिलाने-पिलाने का इन्तजाम कीजिए। नवतारा कहां है? नव-

तारा !—नवतारा—! !

शशि बोले, "आइए नवतारा यहां नहीं है।

डॉक्टर ने मुस्कराते हुए पूछा, "गृह गृहिणी शून्य क्यों है कवि ? उसे बुलाओ। आकर हम लोगों का स्वागत करके अंदर ले जाए। नहीं तो हम यहीं खड़े रहेंगे। शायद भोजन भी नहीं करेंगे।"

शशि बोले, "नवतारा नहीं है डाक्टर, वे सब घूमने गए हैं।"

उसका चेहरा देखकर भारती डर गई। उसने पूछा, "वह घूमने चली गई ? आज के दिन ? कैसी अद्भुत समझ है ?"

शशि बोले, "विवाह हो जाने के बाद वे लोग रंगून घूमने गए हैं।"

"अपने पति को छोड़कर किसके साथ घूमने गई है ?" भारती ने पूछा।

"नहीं, नहीं, मेरे साथ विवाह नहीं हुआ। वह जो अहमद नाम का आदमी है। गोरा-गोरा-सा—देखने में सुन्दर—कूट साहब की मिल का टाइम कीपर—आपने उसे देखा नहीं है। आज दोपहर को उसी के साथ नवतारा का विवाह हो गया था। उनका सब कुछ पहले से ही ठीक था। मुझे बताया ही नहीं।"

वे दोनों आश्चर्य से आँखें फाड़े देखते रह गए।

शशि उठकर कमरे के एक कोने से कपड़े का एक थैला उठा लाया और डॉक्टर के पैरों के पास रखते हुए बोला, "रुपये तो मुझे मिल गए डाक्टर। नवतारा को पाँच हजार देने के लिए कहा था सो मैंने वे रुपए उसे दे दिए। बाकी बचे हैं साढ़े चार हजार। मैंने ले लिए लेकिन···

डाक्टर ने पूछा, "ये रुपये क्या मुझे दे रहे हो ?"

शशि बोले, "हाँ, मैं क्या करूँगा ? आपके काम आ जाएँगे।"

भारती ने पूछा, "लेकिन उसे कब रुपये दे दिये ?"

शशि ने कहा, "कल रुपये पाते ही उसे दे आया था।"

"उसने ले लिए थे ?"

शशि ने कहा, "हाँ, अहमद को तो कुल तीस रुपये तनख्वाह मिलती है। वह एक मकान खरीदेगी।"

"ज़रूर खरीदेगी। यह कहकर डॉक्टर वे हँसते हुए मुड़कर देखा आँखों पर आँचल रखे भारती बरामदे की एक ओर हटती जाती है।

शशि ने कहा, "प्रेसीडेण्ट ने आपसे एक बार भेंट करने को कहा है। वे सरावाया जा रही हैं।"

डॉक्टर ने पूछा, "कब जायेंगी ?"

शशि ने कहा, "जल्दी ही। लिवा जाने को एक आदमी आया है।"

भारती ने लौटकर पूछा, "सुमित्रा जीजी क्या सचमुच ही चली जाने को कहती थीं शशि बाबू ?"

शशि बोले, "हाँ सचमुच ही। उनकी माँ के चाचा के पास अगाध सम्पत्ति थी। हाल ही में उनकी मृत्यु हुई है। इनके अलावा और कोई उत्तराधिकारी नहीं है। उसके बिना काम नहीं चलेगा।"

डाक्टर बोले, "काम नहीं चलेगा ?—तब तो जरूर जाएगी।"

शशि ने भारती की ओर मुड़कर कहा, "खाने का सामान बहुत पड़ा है। कुछ खाइएगा ?"

भारती से पहले ही डाक्टर बोल उठे, "ज़रूर, ज़रूर---चलो क्या है देखूं," यह कहकर वे उसे अन्दर ले गए।

शशि ने अन्दर जाते हुए कहा,"और एक सूचना है डॉक्टर, अपूर्व बाबू लौट आए हैं।"

डाक्टर आश्चर्य से बोले, "यह क्या कहते हो शशि ? किससे सुना ?"

शशि ने कहा, "कल बंगाल बैंक में अचानक भेंट हो गई थी। उनकी माँ बीमार हैं।"

छब्बीस

शशि ने बढ़ा-चढ़ा कर नहीं कहा था। कमरे में पहुंचते ही देखा खाने-पीने की ढेर सारी चीज़ें रखी थीं। कमरे का दक्षिणी भाग एकदम ठसठस भरा हुआ है।

डाक्टर का उल्लास सहसा कहकहा बन पर फट पड़ा, "हः, हः, हः, हः—गृहस्थ का जय-जयकार हो। शशि ! कवि ! हः हः हः हः।"

भारती और न सह सकी। मुंह फेरकर सजल आँखों से नाराजगी के साथ देखती हुई बोली, "भैया, क्या तुम्हारे मन में जरा भी दया माया नहीं ? क्या कर रहे हो, बताओ तो ?"

"वाह जिनकी कृपा से अच्छी-अच्छी चीजें आज पेट भरकर खाऊँगा उनको थोड़ा-सा आशीर्वाद, वाह, हः हः हः हः।"

भारती रूठकर बरामदे में चली गई। दो-तीन मिनट बीतने पर शशि जाकर उसे लौटा लाया तो उसने प्लेट में मांस, फल, फूल, पुलाव, मिठाई

आदि सजाकर डाक्टर के सामने रख दिए और बनावटी नाराजगी से बोली, "लो, अब दांत निकालकर राक्षस की तरह खाओ। हंसी तो बन्द हो जाए। नहीं तो मुहल्ले वालों की नींद टूट जाएगी।"

डाक्टर ने एक सांस खींचकर कहा, "अहा, कैसा बढ़िया भोजन है। इसका तो स्वाद-गन्ध तक मैं भूल गया हूं।"

यह बात भारती के हृदय में जाकर बिंध गई। उसे उस रात का सूखा भात और जली मछली याद आ गईं।

डाक्टर ने भोजन शुरू करते हुए कहा, "कवि को नहीं दिया भारती ?"

"ला रही हूं," कहकर उसने प्लेट में भोजन सजाकर शशि के सामने रख दिया और डाक्टर के सामने बैठकर बोली, "लेकिन सब खा लेना पड़ेगा भैया। फेंक नहीं सकते।"

"नहीं, लेकिन तुम नहीं खाओगी ?"

"मैं ? कोई भी स्त्री ये सब खा सकती है ? तुम्हीं बताओ ?"

"भोजन तो ऐसा पकाया है मानो अमृत।"

"इससे अच्छा अमृत बनाकर तो मैं रोजाना खिला सकती हूं भैया।"

डाक्टर ने अपना बांया हाथ माथे से लगाकर कहा, "क्या करोगी बहिन, भाग्य की बात है। जिसको खिलाना चाहिए वह यह सब खाता ही नहीं है। जो खाएगा उसे एक दिन से अधिक दो दिन खिलाने की चेष्टा करने से ही तुम्हारा सुयश पूरे देश में फैल जाएगा।"

इस बार भारती हंस पड़ी। लेकिन तुरन्त स्वयं को संभालकर लज्जित होकर बोली, "तुम्हारी दुष्टता की ज्वाला से हंसी रोकी नहीं जा सकती। लेकिन यह तो तुम्हारा भारी अन्याय है। पेट भर खा-पी चुकने के बाद रुपयों की थैली भी लेकर चले जाओगे क्या ?"

डाक्टर मुंह का कौर निगलते हुए बोले, "ज़रूर, ज़रूर—आधे रुपए तो चले गए नवतारा के मकान बनाने के खाते में। शेष क्या अहमद अब्दुल्ला साहब की गाड़ी खरीदने के लिए छोड़ जाऊं ? तमाशे को सर्वांग सुन्दर बनाने के लिए तुमने कोई बुरी राय नहीं दी भारती। हः हः हः।"

भारती बोली, "भैया, तुमको हंसी-मज़ाक करते हुए मैंने पहले भी देखा है लेकिन इस तरह पागलों की तरह हंसते हुए तो मैंने कभी नहीं देखा।"

डाक्टर उत्तर देने जा रहे थे लेकिन भारती के चेहरे को देखकर कुछ भी न कह सके।

भारती ने कहा, "स्त्री-पुरुष का प्रेम क्या तुम्हारी तरह सभी के लिए उपहास की वस्तु है भैया, या ताश के छक्के-पंजे की हार की तरह इसको

भी हार-जीत में कहकहे लगाने के अलावा और कुछ करने के लिए शेष नहीं रह गया है ? स्वतन्त्रता-परतन्त्रता के अतिरिक्त मनुष्य को व्यथित करने वाली कोई और भी चीज इस संसार में मौजूद है। इस बात को क्या तुम कभी सोचोगे भी नहीं ? शशि बाबू की ओर देखो। एक ही पहर में इनकी कैसी हालत हो गई है। अपूर्व बाबू जिस दिन गए थे उस दिन भी तुम शायद इसी तरह हंस पड़े थे।"

"नहीं, नहीं, वह तो हुआ—।"

भारती बीच में ही रोक कर बोली, "नहीं, नहीं। यह कैसे कहते हो भैया ? शशि बाबू तुम्हारे स्नेह के पात्र हैं। तुम यह सोचकर खुश हो उठे हो कि उनको भोला-भाला पाकर नवतारा बहुत दुख देती। भविष्य में उस दुख में पड़ने से वे बच गए। लेकिन क्या भविष्य ही सब कुछ है मनुष्य के लिए ? आज का यह एक ही दिन जो व्यथा के भार से उनके सारे भविष्य को लांघ गया, यह बात तुम किस तरह जानोगे। तुमने तो कभी किसी को प्यार किया ही नहीं।

शशि ने किसी प्रकार कहना चाहा कि "यह दोष मेरा ही है। मेरी ही भूल है। सांसारिक बुद्धि न रहने से ही—।"

भारती व्यग्र स्वर में बोल उठी, "लज्जा करने की कौन-सी बात है शशि बाबू ? यह भूल क्या संसार में अकेले आपने ही की है ? आपसे सौगुनी भूल क्या मैंने नहीं की ? और उससे भी हज़ार गुनी भूल करके जो अभागिन चुपचाप चिरकाल के लिए इस देश को छोड़ने को तैयार हुई है उसे क्या डाक्टर नहीं पहचानते ?"

डाक्टर ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा। लेकिन भारती ने उसकी परवाह नहीं की। कहने लगी, "सांसारिक बुद्धि आप में कम है। मुझमें कम नहीं थी ? सुमित्रा जीजी की बुद्धि की तो तुलना नहीं की जा सकती फिर भी वह किसी के काम न आ सकी। वह पराजित हो गई तुम्हारी बुद्धि के सामने। जो चिरकाल से अजेय है। जिसके मार्ग को कभी बाधा नहीं मिली। वह भी तुम्हारे पाषाण द्वार पर पछाड़ खाकर चूर-चूर हो गया। अन्दर जाने का जरा-सा मार्ग उसे नहीं मिला।"

डाक्टर ने इस अभियोग का उत्तर नहीं दिया। केवल उसके चेहरे की ओर देखकर जरा-सा हंस पड़े।

भारती ने कहा, "शशि बाबू, मैंने आपके प्रति बड़ा अपराध किया है। उसके लिए क्षमा चाहती हूं···!"

शशि समझ न सका। लेकिन कुण्ठित हो उठा।

भारती पल भर चुप रहकर कहने लगी, "एक दिन भैया से मैंने आपके

बारे में कहा था—कोई भी स्त्री आपको कभी प्यार नहीं कर सकती। उस दिन मैंने आपको पहचाना नहीं था। आज ऐसा लग रहा है कि जिस ने अपूर्व बाबू को प्यार किया था वह अगर आपको पा जाती तो धन्य हो जाती। सभी आपकी उपेक्षा करते आए हैं। केवल एक व्यक्ति ने नहीं की। और वे हैं यही डाक्टर। मनुष्य को पहचानने में इनसे गलती नहीं होती। इसलिए उस दिन दुखी होकर इन्होंने मुझसे कहा था, "काश, शशि किसी दूसरी स्त्री को प्यार करता। लेकिन तुम मुझसे यह कभी नहीं कह सके कि भारती, इतनी बड़ी गलती तुम मत करो। पुरुष के दो आदर्श—तुम दोनों मेरे सामने बैठे हो। आज मेरी अरुचि की कोई सीमा ही नहीं है।"

डाक्टर ने पूछा, "अपूर्व ने क्या कहा शशि ?"

भारती ने उत्तर दिया, "मां बीमार है। इलाज कराना ज़रूरी है। लेकिन रुपए पास नहीं हैं। लौटकर छिपे ढंग से गुलामी करने पर कोई जान नहीं सकेगा। डर है तलवलकर का, और ब्रजेन्द्र का। लेकिन उसके काका हैं पुलिस कर्मचारी। इसलिए कोई व्यवस्था अवश्य ही हो गई होगी। भैया मुझे और तुम्हें भी शायद छुटकारा नहीं मिलेगा। क्षुद्र, लोभी, संकीर्ण हृदय, डरपोक, छिः।"

डाक्टर मुस्कराकर बोले, "सच्चा प्यार करने पर इस तरह बदनाम नहीं किया जा सकता। कवि, अब तुम्हारी बारी है। सरस्वती का स्मरण करके अब तुम भी नवतारा के गुणों का कीर्तन करना आरम्भ कर दो।"

"भैया, तुमने मेरा तिरस्कार किया ?"

"शायद ऐसी ही बात हो।"

अभिमान, व्यथा और क्रोध से भारती का चेहरा लाल हो उठा। बोली, "तुम कभी मुझे ऐसी कटूक्ति न सुना सकोगे। तुमने क्या यह सोचा है कि सभी शशि बाबू की तरह मुंह बन्द करके सह सकते हैं। तुम क्या जानते हो कि मनुष्य की क्या दशा हो जाती है।" उत्तेजित वेदना से उसका गला रुंध गया। बोली, "वे लौट आए हैं। अब तुम मुझे यहां से किसी दूसरी जगह ले चलो भैया। मैं भी किस अभागे के चरणों में अपना सर्वस्व विसर्जित करके बैठी हुई हूं।" कहते-कहते वह फर्श पर माथा रख कर बच्चे की तरह रोने लगी।

डाक्टर मुस्कराते हुए चुपचाप भोजन करने लगे। उनका निर्विकार भाव देखकर यह पता न चल सका कि इन सब प्रणय-उच्छवासों ने इनको लेशमात्र भी विचलित किया है। पांच-सात मिनट के बाद भारती उठ कर पास वाले कमरे में चली गई और आंख-मुंह अच्छी तरह धो-पोंछकर यथास्थान आकर बैठ गई।

उसने पूछा, "भैया, तुम लोगों को कुछ और दूं ?"

डाक्टर ने जेब से रूमाल निकालकर कहा, "ब्राह्मण का लड़का हूं। कुछ छन्ना बांध दो जिससे दो दिन निश्चिन्त रह सकूं।"

मैला रूमाल लौटाकर भारती ने एक धुला हुआ तौलिया निकाला और खाने की तरह-तरह की चीजों की एक पोटली बांधकर डाक्टर के सामने रखते हुए कहा, "यह है ब्राह्मण के लड़के का छन्ना और रुपयों की थैली।"

डाक्टर ने हंसते हुए कहा, "यह हुई ब्राह्मण की भोजन-दक्षिणा।"

भारती बोली, "अर्थात् तुच्छ विवाहोत्सव के सिवा सभी असली आवश्यक कार्य निर्विघ्न समाप्त हो गए।"

हंसी रोककर डाक्टर बोले, "यह मेरे लिए भगवान का कैसा अभिशाप है भारती कि ज्यों ही हंसी आने लगती है, मेरे मुंह से ठहाकों के सिवा और कुछ नहीं निकलता। ठहाकों जैसा रोना रोने के लिए तुम्हें साथ न लाया होता तो आज मुंह दिखाना कठिन हो जाता।"

"भैया, फिर मुझे परेशान करने लगे ?"

"परेशान कर रहा हूं या कृतज्ञता प्रगट कर रहा हूँ।"

भारती ने रूठकर मुंह दूसरी ओर फेर लिया।

शशि चुप था। अचानक अत्यन्त गम्भीरता के साथ बोला, "अगर नाराज न हो तो एक बात कह सकता हूं ? कुछ लोगों को सन्देह है कि आपके साथ ही एक दिन भारती का विवाह होगा।"

डाक्टर पलभर के लिए चौंक उठे, "यह क्या कहते हो शशि ? तुम्हारे मुंह पर फूल-चन्दन पड़े—ऐसा सुदिन इतने बड़े अभागे के भाग्य में आएगा ? यह तो सपनों से भी परे की बात है कवि।"

शशि बोला, "लेकिन बहुत से लोग यही सोचते हैं।"

डाक्टर ने कहा, "हाय, हाय, बहुत न सोचते। अगर एक ही व्यक्ति पलभर के लिए यह सोचता।"

भारती हंसकर बोली, "अभागे का भाग्य तो पलभर में बदल सकता है भैया। तुम आज्ञा देकर यदि कह दो—भारती, कल ही तुम्हें मुझसे ब्याह करना होगा—तो मैं तुम्हारी शपथ लेकर कहती हूं कि एक दिन भी ठहरने को नहीं कहूंगी।"

डाक्टर बोले, "लेकिन बेचारा अपूर्व जो प्राणों का मोह छोड़कर लौट आया है, उसका क्या होगा।"

भारती बोली, "उसकी भावी पत्नी के रूप में किसी की कन्या देश

में मौजूद है—उनके लिए चिन्ता मत करो। वे छाती फाड़कर नहीं मर जायेंगे।"

डाक्टर गम्भीर होकर बोले, "लेकिन मुझसे विवाह करने के लिए राजी हो रही हो? तुम्हारा भरोसा तो कम नहीं है भारती।"

भारती ने कहा, "तुम्हारे हाथ पड़ूंगी, इसमें फिर डर कैसा?"

डाक्टर ने शशि की ओर देखते हुए कहा, "सुन लो कवि! भविष्य में अगर इनकार करे तो तुम्हें गवाही देनी होगी।"

भारती बोली, "किसी को गवाही नहीं देनी पड़ेगी भैया। मैं शपथ लेकर इनकार नहीं करूंगी। केवल तुम्हारी स्वीकृति से काम बन जायगा।"

डाक्टर ने कहा, "अच्छा, तब देख लूंगा।"

"देख लेना," भारती हंसकर बोली, "भैया, क्या मैं और क्या सुमित्रा! स्वर्ग के इन्द्रदेव भी अगर उर्वशी, मेनका और रम्भा को बुलाकर कहते कि उस प्राचीन युग के ऋषि-मुनियों के बदले तुम्हें इस युग के सव्यसाची की तपस्या भंग करनी होगी तो मैं निश्चित रूप से कहती हूं भैया कि उन्हें मुंह पर स्याही पोतकर वापस चले जाना पड़ता। रक्त-मांस का हृदय जीता जा सकता है लेकिन पत्थर के साथ क्या लड़ाई चल सकती है? पराधीनता की आग में जलकर तुम्हारा हृदय पत्थर बन गया है।"

डाक्टर मुस्कराने लगे। भारती की दोनों आंखें श्रद्धा और स्नेह से भर आईं। बोली, "इतना विश्वास न रहने पर क्या मैं इस तरह तुम्हारे सामने आत्म समर्पण कर सकती थी? मैं नवतारा नहीं हूं। मैं जानती हूं कि मुझसे बड़ी भारी गलती हो गई है। लेकिन इस जीवन में उसके सुधार का कोई दूसरा मार्ग भी नहीं है। एक दिन के लिए भी जिसे मन-ही-मन—?"

भारती की आंखों से फिर आंसू बहने लगे। झटपट हाथ से उन्हें पोंछकर हंसने की चेष्टा करती हुई बोली, "भैया, क्या लौटने का समय अभी नहीं हुआ? भाटा आने में अभी कितनी देर है?"

डाक्टर ने दीवार घड़ी की ओर देखकर कहा, "अभी देर है बहिन?" फिर दायां हाथ भारती के सिर पर रखते हुए कहा, "आश्चर्य है, इतनी दुर्दशा में भी बंगाल का यह अमूल्ल रत्न अब तक नष्ट नहीं हुआ! जाने दो नव तारों को। भारती तो हम लोगों की है। शशि सारी पृथ्वी पर इसकी जोड़ी नहीं मिलेगी। हजारों सव्यसाचियों में भी शक्ति नहीं है कि एक तुच्छ अपूर्व को ओट करके खड़े हो जायें। अच्छी बात है शशि, तुम्हारी शराब की बोतल कहां है?"

शशि लज्जित होकर बोला, "खरीदी नहीं। मैं अब नहीं पीऊंगा।"

भारती बोली, "तुम्हें याद नहीं, नवतारा ने इनसे प्रतिज्ञा कराई थी।"

शशि ने उसकी बात का समर्थन करते हुए कहा, "सचमुच ही नवतारा के सामने प्रतिज्ञा कर ली थी कि मैं अब शराब नहीं पीऊंगा। उस प्रतिज्ञा को अब नहीं तोड़ूंगा डाक्टर।"

डाक्टर हंसकर बोले, "शराब गई, नवतारा गईं। सर्वस्व बेचकर जो रुपए मिले थे वे भी चले गए। एक साथ इतना कैसे सहा जाएगा?"

शशि का चेहरा देखकर भारती को दुख हुआ। बोली, "मजाक करना सहज है भैया। सोचकर तो देखो।"

डाक्टर बोला, "सोच-विचार करके ही कह रहा हूं भारती।" इन रुपयों पर शशि की कितनी आशा-आकांक्षाएं थीं, यह बात मुझसे अधिक कोई नहीं जानता। उसके परिचितों में ऐसा भी कोई नहीं है जिसने यह बात न सुनी हो। उसके बाद आई नवतारा। छै-सात महीने तक वह थी। उसका ज्ञान-ध्यान था। और शराब—वह तो शशि के सुख-दुख की एकमात्र संगिनी है। कल सब कुछ था। लेकिन आज उसके जीवन का जो कुछ आनन्द था, जो कुछ सान्त्वना थी, वह सब एक ही दिन में एकाएक जैसे षड्यन्त्र करके उसे छोड़कर चली गई। फिर भी किसी के विरुद्ध उसके मन में कोई विद्वेष नहीं। शिकायत नहीं, यहां तक कि आकाश की ओर देखकर एक बार भी आंसू भरी आंखों से यह न कह सका कि हे भगवान, मैंने किसी का अनिष्ट चिन्तन नहीं किया। अगर भगवान वास्तव में हो तो इसका विचार करना।"

भारती लम्बी सांस लेकर बोली, "इसीलिए इन पर तुम्हारा इतना स्नेह है?"

डाक्टर बोले, "केवल स्नेह ही नहीं श्रद्धा भी है। शशि साधु पुरुष है। इसका संपूर्ण हृदय गंगा जल के समान शुद्ध और निर्मल है। मेरे जाने के बाद भारती, जरा इसकी देखभाल रखना। यह स्वयं दुख भोगेगा लेकिन किसी दूसरे को दुख नहीं देगा।"

शशि का चेहरा लज्जा और संकोच से लाल हो उठा। इसके बाद कुछ देर तक शायद बात के अभाव से ही तीनों चुप बैठे रहे।

डाक्टर ने पूछा, "अब तुम क्या करोगे कवि? तुम्हारे पास तो केवल बेहला ही बचा है। पहले की तरह फिर देश-देश में बजाते फिरोगे?"

शशि ने हंसते हुए कहा, "अपने काम में आप मुझे भर्ती कर लीजिए। मैं सचमुच अब शराब नहीं पीऊंगा।"

उसकी बात और कहने का अंदाज देखकर भारती हंस पड़ी।

डाक्टर भी हंसने लगे। फिर स्नेह से भीगे स्वर में बोले, "नहीं कवि, इसमें तुम्हें भर्ती होने की आवश्यकता नहीं है। तुम मेरी इस बहिन के पास रहो, इसी से मेरा बहुत काम हो जायगा।"

शशि ने पलभर मौन रहकर संकोच के साथ कहा, "पहले मैं कविता लिखा करता था डाक्टर, शायद अब भी लिख सकता हूं।"

डाक्टर ने खुश होकर कहा, "इससे मेरा बहुत काम बन जाएगा।"

"मैं फिर आरम्भ करूंगा। अब केवल किसान-मजदूरों के लिए लिखूंगा।"

"लेकिन वे लोग तो पढ़ना जानते नहीं कवि?"

फिर बोले, "यह काम अस्वाभाविक होगा। और कोई भी अस्वाभाविक चीज टिकती नहीं है। अनपढ़ों के लिए अन्य क्षेत्र खोला जा सकता है। क्योंकि उन्हें भूख का ज्ञान है। लेकिन उनके सामने साहित्य नहीं परोसा जा सकता। उनके सुख-दुख का वर्णन करने को साहित्य नहीं कहते। किसी दिन अगर सम्भव हुआ तो अपने साहित्य की वे स्वयं ही रचना कर लेंगे। नहीं तो तुम्हारे कंठ से निकले गीत हलधरों के लिए गीत काव्य नहीं हो सकते। यह असम्भव प्रयास तुम मत करना कवि।"

"तो मैं क्या करूं?"

"तुम विप्लव के गीत गाना। जहां तुमने जन्म लिया है, जहां जाति आदमी बने हो, केवल उन्हीं के लिए। केवल शिक्षित और भद्र के लिए।"

भारती विस्मित होने के साथ व्यथित भी हुई। बोली, "भैया तुम भी जाति मानते हो? तुम्हारा ध्यान भी केवल भद्र जाति की ओर ही है।"

डाक्टर बोले, "मैंने वर्णाश्रम की बात तो कही नहीं भारती। उस बलपूर्वक बने जाति भेद की चर्चा मैंने नहीं की। वह वैषम्य मुझ में नहीं है। लेकिन शिक्षित का जाति भेद माने बिना तो मैं रह नहीं सकता। यही तो सच्ची जाति है। यही तो भगवान के हाथ की बनी सृष्टि है। ईसाई होने के कारण मैं तुम्हें ठेलकर क्या अलग रख सका हूं बहिन? तुम्हारी बराबरी का मुझे अपना कहने के लिए और कौन है?"

भारती ने श्रद्धा भरी नजरों से उनकी ओर देखते हुए कहा, "लेकिन तुम्हारा विप्लव गान तो शशि बाबू के मुंह से शोभा नहीं देगा भैया। तुम्हारे विप्लव का गीत, तुम्हारी गुप्त समिति का······"

डाक्टर ने उसे बीच में ही रोककर कहा, "नहीं। मेरी गुप्त समिति का भार मेरे ही ऊपर रहने दो बहिन। उस बोझ को ढोने योग्य शक्ति—

नहीं, नहीं, उसे रहने दो—वह केवल मेरे लिए है।" तुम से तो मैं कह चुका हूं भारती, विप्लव का अर्थ केवल खून-खराबी नहीं है। विप्लव का अर्थ है—अत्यधिक तीव्रता से आमूल परिवर्तन। राजनीतिक विप्लव नहीं—वह तो मेरा ही है। कवि, तुम दिल खोलकर सामाजिक विप्लव के गीत गाने शुरू कर दो। जो कुछ सनातन है, जो कुछ प्राचीन है, जीर्ण और पुराना है—धर्म, समाज, संस्कार—सब टूट-फूटकर ध्वंस हो जाए। और कुछ न कर सको शशि तो केवल इस महासत्य का ही मुक्त कंठ से प्रचार करो कि इससे बढ़कर बड़ा शत्रु भारत का और कोई नहीं है। उसके बाद देश की स्वाधीनता का भार मुझ पर रहने दो।"

सीढ़ी पर किसी की आहट सुनाई दी।

"कौन है ?" शशि ने पूछा।

डाक्टर पलक झपकते ही तेज़ चाल से बरामदे में चले गए। फिर तुरन्त ही वापस आकर बोले, "भारती, सुमित्रा आ रही है।"

सत्ताईस

उस गहन रात्रि में सुमित्रा के आने का समाचार जैसा अप्रत्याशित था वैसा ही अप्रीतिकर भी था। भारती व्यथित और त्रस्त हो उठी। पलभर बाद सुमित्रा के आने पर डाक्टर ने स्वाभाविक स्वर में स्वागत करते हुए कहा, "बैठो, क्या अकेली ही आई हो ?"

सुमित्रा ने कहा, "हां।" फिर उसने भारती से पूछा, "अच्छी तरह हो न ?"

इस एक ही मिनट में भारती ने न जाने क्या-क्या सोच डाला, इसका ठिकाना नहीं। उस दिन की तरह आज भी सुमित्रा उसकी कोई परवाह नहीं करेगी, यह वह निश्चित रूप से जानती थी। लेकिन इस कुशल प्रश्न से नहीं बल्कि उसकी आवाज़ में स्निग्ध कोमलता देखकर भारती मानो सहसा अपने हाथों में चन्द्रमा को पा गई। बोली, "अच्छी तरह हूं जीजी, आप तो अच्छी तरह हैं न ?"

"हां, अच्छी तरह हूं।" कहकर सुमित्रा एक ओर बैठ गई।

डाक्टर बोले, "शशि के मुंह से मैंने सुना कि तुम बहुत बड़ी सम्पत्ति

की उत्तराधिकारी होकर जावा जा रही हो?"

"हां, मुझे ले जाने के लिए आदमी आया है।"

"कब जाओगी?"

"शनिवार को पहले स्टीमर से।"

"अब तो तुम बड़ी धनवान हो।"

"हां, सब मिल गया तो बन जाऊंगी।"

डाक्टर बोले, "मिल ही जाएगा। अटार्नी की राय के बिना कोई काम मत करना। सावधान रहना। जो तुम्हें ले जाने के लिए आए हैं वे परिचित तो हैं न?"

सुमित्रा बोले, "हां, भरोसे के आदमी हैं। मैं पहचानती हूं।"

"तब कोई बात नहीं।"

अचानक शशि बोल उठा, "यह तो बहुत बुरी बात हुई डाक्टर। जिन तीन बंगाली महिलाओं को आपने लिया था—नवतारा गई, स्वयं प्रेसीडेन्ट जाने को तैयार हैं। केवल भारती—।"

डाक्टर हंसते हुए बोले, "चिन्ता मत करो। भारती भी महाजनों के पन्थ का अनुसरण करेगी—यह एक प्रकार से निश्चित हो चुका है।"

भारती ने गुस्से से देखा।

डाक्टर के परिहास में छिपी व्यथा का अनुमान करके शशि ने कहा, "आपको जल्दी ही चला जाना पड़ेगा। अब तो आप देखिए कि आपके पथ के दावेदारों की एक्टिविटी कम-से-कम बर्मा में तो समाप्त हो गई। इसे अब कौन चलायेगा?"

वे उसी तरह हंसते हुए बोले, "यह कैसी बात कह रहे हो कवि? इतने समय से इतना देख सुनकर भी अन्त में सव्यसाची के लिए तुम्हारे ही मुंह से यह सर्टिफिकेट? तीन महिलाएं चली जायेंगी, क्या इसीलिए पथ का दावेदार समाप्त हो जायगा? शराब छोड़ देने का क्या यही फल हुआ है? इससे तो अच्छा है कि फिर पीना शुरू कर दो।"

बात मज़ाक-सी सुनाई पड़ने पर भी मज़ाक नहीं है, यह समझ लेने पर भी भारती ठीक-ठीक नहीं समझ सकी। कनखियों से उसने बड़े ध्यान से देखा, सुमित्रा आंखें झुकाए चुपचाप बैठी है।

उसने मुंह उठाकर डाक्टर के चेहरे पर नजरें टिकाए रखकर कहा, "भैया, समझने के लिए मुझे तो शराब शुरू करने की जरूरत नहीं है, लेकिन फिर भी मैं कुछ नहीं समझ पाई। नवतारा कुछ भी नहीं है। और मैं तो उससे भी तुच्छ हूं। लेकिन सुमित्रा जीजी—जिन्हें तुमने प्रेसीडेन्ट का आसन दिया है, उनके चले जाने पर क्या तुम्हारे पथ के दावेदार को

चोट नहीं पहुंचेगी। सच बताओ भैया, केवल किसी को लांछित करने के लिए ही नाराज होकर मत कहना।"

सुमित्रा जिस तरह मुंह झुकाए बैठी थी, उसी तरह चुपचाप नीचा मुंह किए मूर्ति की भांति बैठी रही।

डॉक्टर पल भर मौन रहे। उसके बाद धीरे-धीरे बोले, "भारती, मैंने क्रोध में यह बात नहीं कही है। सुमित्रा अवहेलना की वस्तु नहीं है। तुम शायद नहीं जानतीं, लेकिन सुमित्रा स्वयं अच्छी तरह जानती है कि इन मामलों में अपनी हानि की गणना नहीं करनी चाहिए। इसके लिए किसके प्राण फालतू हैं ? प्राणों का मूल्य किस चीज से निश्चित किया जा सकता है ? बताओ तो। मनुष्य तो जायेगा ही। वह चाहे जितना भी बड़ा क्यों न हो, किसी के अभाव को ही हमें सर्वनाश नहीं समझ लेना चाहिए। जल के स्रोत के समान, एक का स्थान दूसरा स्वच्छन्दता से और बिल्कुल अनायास ही पूरा कर सकता है, यही शिक्षा हमारी पहली और प्रधान शिक्षा है भारती।"

भारती बोली, "लेकिन ऐसा तो संसार में होता नहीं। उदाहरण के रूप में तुम्हीं को मान लिया जाए। तुम्हारा अभाव कोई किसी दिन पूरा कर सकता है—यह बात मैं सोच भी नहीं सकती भैया।"

डॉक्टर बोले, "तुम्हारी विचारधारा अलग ही है भारती और जिस दिन मुझे इसका पता चला उसी दिन से मैं तुम्हें फिर से इस दल में खींच लाने में असमर्थ हो गया। मेरे मन में बार-बार यही विचार आया है कि संसार में तुम्हारे लिए यह नहीं, दूसरा काम है।"

भारती बोली, "और मुझे भी बराबर यही खयाल आता रहा है कि तुम मुझे अयोग्य समझ कर दूर हटा देना चाहते हो। अगर मेरे लिए दूसरा काम हो तो मैं उसी के लिए अभी से निकल पड़ूंगी। लेकिन मेरे प्रश्न का तो यह उत्तर नहीं है भैया। वास्तविक बात ही तुच्छ हो गई है। तुम्हारा अभाव जल के स्रोत के समान पूरा हो सकता है या नहीं ? तुम कह रहे हो कि हो सकता है। और मैं कह रही हूं कि नहीं हो सकता। मैं जानती हूं कि नहीं हो सकता।—मैं जानती हूं कि मनुष्य केवल जल का स्रोत नहीं है—तुम तो अवश्य ही नहीं हो।"

पल भर मौन रहकर उसने फिर कहा, "केवल इसी बात को जानने के लिए मैं तुम्हें परेशान न करती। लेकिन जो नहीं है। जिसे तुम स्वयं जानते हो कि वह सत्य नहीं है—मुझे उसी से फुसलाना चाहते हो ?"

डॉक्टर उत्तर न दे सके।

भारती ही ने फिर कहा, "इस देश में अब तुम्हारा ठहरना नहीं हो

सकता। तुम जाने को बैठे हो। फिर तुम्हें वापस पाना कितना अनिश्चित है—यह सोचते ही हृदय में ज्वाला धधक उठती है। इसी से उसका सोच नहीं करती। फिर भी सत्य को प्रतिक्षण अनुभव किए बिना नहीं रह सकती। इस व्यथा की सीमा नहीं है। लेकिन इससे भी बढ़कर मेरी व्यथा यह है कि तुमको इस तरह पाकर भी मैं नहीं पा सकी। आज मुझे कितने प्रश्न याद आ रहे हैं भैया। लेकिन मैंने जब भी उन प्रश्नों को पूछा है तुमने सच भी कहा है और झूठ भी कहा है। सच और झूठ मिलाकर भी कहा है। लेकिन किसी भी तरह मुझे सत्य क्या है, यह जानने नहीं दिया। तुम्हारे पथ के दावेदार की मैं सेक्रेटरी हूं फिर भी तुम्हारी कार्य पद्धति में मेरी बिल्कुल श्रद्धा नहीं है। मैंने यह बात कभी नहीं छिपाई। तुम नाराज नहीं हुए। न अविश्वास ही किया। मुस्कराते हुए केवल मुझे अलग कर देना चाहा है। अपूर्व बाबू के जीवन दान की बात मैं भूली नहीं हूं। मालूम होता है मेरे छोटे से जीवन का कल्याण केवल तुम्हीं निर्देशित कर सकते हो। भैया, जाते समय अब अपने आपको छिपा कर मत जाओ। तुम्हारा, मेरा, सभी का जो परम सत्य है—उसे ही आज कपट छोड़कर स्पष्ट प्रकट कर दो।"

इस अनोखी प्रार्थना का अर्थ न समझ पाने के कारण शशि और सुमित्रा दोनों ही आश्चर्यचकित होकर ताकते रह गए। और उनकी आंखों पर नजर डालकर भारती अपनी व्याकुलता से स्वयं ही लज्जित हो उठी। यह लज्जा डॉक्टर की नजरों से छिपी न रह सकी। उन्होंने हंसते हुए कहा, "सच, झूठ, और सफेद झूठ—एक में मिलाकर तो सभी बोलते हैं भारती। इसमें मेरा विशेष दोष क्या है? इसके अतिरिक्त यदि किसी के लिए यह बात लज्जा करने की हो तो वह मेरे ही लिए है। लेकिन लज्जित तुम हो रही हो।"

भारती मुंह झुकाए चुप बैठी रही।

सुमित्रा ने इसका उत्तर देते हुए कहा, "लेकिन अगर डॉक्टर, तुम्हारे पास लज्जा हो ही नहीं—तब? लेकिन स्त्रियां तो मुंह पर सच बात भी स्पष्ट रूप से कहने में लज्जा का अनुभव करती हैं। कोई-कोई तो कह ही नहीं सकती।"

यह बात किसको लक्ष्य करके किसलिए कही गई, यह किसी से छिपा नहीं रहा। लेकिन जो श्रद्धा और सम्मान उनके लिए सहज प्राप्य मालूम होते हैं उन्होंने ही सबको निरुत्तर कर दिया।

दो-तीन मिनट इसी तरह चुपचाप बीत जाने पर डॉक्टर ने भारती की ओर देखते हुए कहा, "भारती, सुमित्रा ने कहा है कि मुझ में लज्जा

नहीं है। तुमने यह आरोप लगाया है कि मैं सुविधानुसार सच झूठ दोनों ही बोला करता हूं। आज भी उसी तरह कुछ कहकर इस प्रसंग को मैं समाप्त कर सकता था। यदि इसके साथ मेरे पथ के दावेदार का कोई सम्बन्ध न होता। इसकी भलाई-बुराई से ही मेरा सच-झूठ निर्धारित होता है। यही मेरा नीति शास्त्र है। यही मेरी अकपट मूर्ति है।"

भारती अवाक होकर बोली, "यह क्या कहते हो भैया। यही तुम्हारी नीति है ? यही तुम्हारी अकपट मूर्ति है ?"

सुमित्रा बोल उठी, "हां, ठीक यही है। यही इनका यथार्थ स्वरूप है। दया नहीं, ममता नहीं धर्म नहीं—इस पत्थर की मूर्ति को मैं पहचानती हूं।"

सुमित्रा की बात पर भारती ने विश्वास कर लिया हो, ऐसी बात नहीं है। लेकिन सुनकर वह स्तब्ध हो गई।

डॉक्टर बोले, "तुम लोग कहा करती हो चरम सत्य, परम सत्य—और ये अर्थहीन, निष्फल शब्द तुम लोगों के लिए अत्यधिक मूल्यवान हैं। मूर्खों को भुलावे में डालने के लिए इससे बड़ा जादू-मन्त्र और कोई नहीं है। तुम लोग सोचती हो कि झूठ को ही बनाना पड़ता है। सत्य शाश्वत, सनातन और अपौरुषेय है। यही झूठी बात है। झूठ की ही तरह सच को भी मानव जाति दिन रात बनाती है। यह भी शाश्वत नहीं। इसका जन्म है, मृत्यु है। मैं झूठ नहीं बोलता, सत्य की सृष्टि करता हूं।"

यह परिहास नहीं, सव्यसाची के हृदय की उक्ति है, भारती सुनकर पीली पड़ गई। अस्फुट स्वर में उसने पूछा, "भैया क्या यही तुम्हारे पथ के दावेदार की नीति है ?"

डॉक्टर ने उत्तर दिया, "भारती, 'पथ का दावेदार' मेरी तर्क शास्त्र की पाठशाला नहीं है। यह मेरी पथ पर चलने के अधिकार की शक्ति है ? कौन, कब, किस अज्ञात आवश्यकता के लिए नीति वाक्य की रचना कर गया। वही हो जाएगा पथ के दावेदारों के लिए सत्य ? और इसके लिए जिसकी गर्दन फांसी की रस्सी से बंधी है, उसके हृदय का वाक्य हो जाएगा झूठ ? तुम्हारा परम सत्य क्या है, मैं नहीं जानता। लेकिन परम मिथ्या यदि कहीं हो तो वह यही है।"

उत्तेजना से सुमित्रा की आंखें चमक उठीं। लेकिन इतनी भयानक बात सुनकर भारती आशंका से एकदम अभिभूत हो उठी।

"कवि।"

"जी।"

डॉक्टर हंस पड़े, "शशि की कैसी भक्ति है; देख ली ?"

लेकिन डॉक्टर की हंसी में कोई भी शामिल नहीं हुआ। डॉक्टर ने दीवार घड़ी की ओर देखकर कहा, "ज्वार समाप्त होने में अब देर नहीं है। मेरे जाने का समय हो गया। तुम्हारे तारा विहीन 'शशि-तारा लाज' आने का समय अब मुझे नहीं मिलेगा।"

शशि ने कहा, "मैं यह मकान कल ही छोड़ दूंगा।"

"कहां जाओगे ?"

"आपके आदेशानुसार भारती के घर।"

डॉक्टर हंसते हुए बोले, "देख रही हो भारती, शशि मेरा आदेश अमान्य नहीं करता। उस मकान का नाम क्या रखोगे शशि ?—'शशि—भारती लॉज' तुम्हें तीन बार धोखा खाते तो मैंने देखा है। इस बार शायद सफलता मिल जाए। भारती बहुत अच्छी लड़की है।"

इतने कष्ट में भी भारती हंस पड़ी। सुमित्रा ने भी हंसते हुए सिर झुका लिया।

डॉक्टर बोले, "तुम्हारे रुपयों की थैली, जिसे मैं साथ लेकर जा रहा था। भारती के पास छोड़ जाऊंगा। यह भी एक मकान खरीदेगी।"

भारती बोली, "क्या घाव पर नमक छिड़कना बंद नहीं होगा भैया ?"

शशि ने कहा, "रुपए आप ले लीजिए डॉक्टर, मैंने आपको दे दिए। मेरे देश के घर-द्वार बेचकर मिले रुपए देश के काम में ही लगने दीजिए।"

डॉक्टर हंस पड़े। लेकिन दूसरे ही पल उनकी आंखें डबडबा उठीं। बोले, "रुपए मेरे पास हैं शशि, अब उनकी ज़रूरत नहीं है। इसके अतिरिक्त अब शायद रुपयों की कमी कभी भी न होगी।" कहकर वे हंसते हुए सुमित्रा की ओर देखने लगे।

सुमित्रा की दोनों आंखें कृतज्ञता से भर उठीं। उसने मुंह से कुछ नहीं कहा। लेकिन उसके सर्वांग से यही बात फूटकर बाहर निकल पड़ी। "सब कुछ तो तुम्हारा ही है। लेकिन क्या तुम उसे छुओगे ?"

डॉक्टर अपनी दृष्टि दूसरी ओर हटाकर कुछ देर स्तब्ध रहने के बाद बोले, "कवि ?"

"कहिए।"

"ब्राह्मण भोजन कुछ पहले ही पूरा कर डाला। इसलिए दुखी मत होना। क्योंकि अब जब शुभ मुहूर्त आयेगा तब मुझे अवकाश नहीं मिलेगा। लेकिन वह दिन आयेगा अवश्य। तरह-तरह के भोजन से तृप्त होकर आज मैं तुम्हें वरदान दे रहा हूं—तुम सुखी होओ। लेकिन तुम दो काम कभी मत करना। शराब मत पीना और राजनीतिक विलप्व में भाग मत लेना।

तुम कवि हो, देश के बहुत बड़े कलाकार हो। तुम राजनीति से बड़े हो—इस बात को मत भूलना।"

शशि ने दुखी होकर कहा, "आप जिसमें हैं उसमें मेरे रहने से दोष होगा। क्या मैं आपसे भी बड़ा हूं ?"

डॉक्टर ने कहा, "बड़े तो हो ही। तुम्हारा परिचय ही तो जाति का सच्चा परिचय है। तुम लोगों को छोड़ देने पर इसे किस चीज़ से तोला जाएगा ? किसी दिन स्वाधीनता की इस समस्या का समाधान होगा ही। तब इसे दुख-दुख की कहानी का जनश्रुति से अधिक मूल्य नहीं मिलेगा। लेकिन तुम्हारे कार्यों का मूल्य-निर्धारण कौन करेगा ? तुम ही तो देश की समस्त विच्छिन्न, विक्षिप्त धाराओं की माला की भांति गूंथ जाओगे।"

सुमित्रा बोली, "कब गूंथेंगे, यह बात वे ही जानते हैं। लेकिन तुमने बातें गूंथकर उनका जो मूल्य बढ़ा दिया उसे भारती कैसे संभालेगी।"

सुनकर सभी हंसने लगे।

डॉक्टर ने कहा, "शशि होगा हम लोगों का राष्ट्र-कवि। हिन्दुओं का नहीं, मुसलमानों का नहीं, ईसाइयों का नहीं—केवल मेरे देश का कवि। सहस्र नद-नदी प्रवाहित हमारा बंग देश, हमारी सुजला-सुफला-शस्य श्यामला, खेतों से भरी बंग भूमि। मिथ्या रोग का दुख नहीं, मिथ्या दुर्भिक्ष की क्षुधा नहीं, विदेशी शासन के दुस्सह अपमान की ज्वाला नहीं, मनुष्यत्व हीनता की लांछना नहीं—शशि तुम होगे उसी के चारण कवि। क्या तुम न हो सकोगे भाई ?"

भारती का समूचा वदन रोमांचित हो उठा। शशि 'भाई' सम्बोधन की मधुरता से विगलित होकर बोला, "डॉक्टर चेष्टा करने पर मैं अंग्रेजी में भी कविता लिख सकता हूं। यहां तक कि···

डॉक्टर बीच में ही रोककर बोल उठे, "नहीं, नहीं अंग्रेजी में नहीं। केवल बंगला में। केवल सात करोड़ अधिवासियों की मातृभाषा में। शशि, संसार की लगभग सभी भाषाएं मैं जानता हूं। लेकिन सहस्र दलों में विकसित ऐसी मधु से भरी भाषा और नहीं हैं। मैं अक्सर सोचता रहता हूं भारती, ऐसा अमृत इस देश में कब, कौन लाया।"

भारती की आंखों की कोरों में आंसू भर आए। उसने कहा, "मैं सोचा करती हूं भैया, देश को इतना प्यार करना तुम्हें किसने सिखाया था ?"

शशि बोल उठा, "इस विगत-गौरव का गान ही मेरा गान होगा। यह प्रेम का सुर ही मेरा सुर होगा। अपने देश को हम लोग-जिससे फिर उसी तरह प्यार करने लगें ऐसी शिक्षा ही मेरी शिक्षा होगी।"

डाक्टर ने आश्चर्य भरी नजरों से शशि की ओर देखा। सुमित्रा के

चेहरे पर भी नजर डाली। और अन्त में दोनों हंस पड़े। लेकिन इस हंसी का मर्म अन्य दोनों की समझ में नहीं आया। इसलिए वे दोनों ही अप्रतिभ हो गए।

डाक्टर बोले, "क्या फिर उसी प्रकार प्यार करने लगेंगे, तुमने जिस प्रकार के प्रेम का संकेत किया है शशि, उस प्रकार का प्रेम बंगालियों ने कभी अपने बंग देश से नहीं किया। उसका तिलार्थ प्रेम भी होता तो क्या बंगाली ही विदेशियों के साथ षडयन्त्र करके अपने सात करोड़ भाई-बहिनों को दूसरों के हाथों में सौंप सकते थे? जननी जन्म भूमि—केवल कहने भर की बात थी। मुसलमान बादशाहों के पैरों के नीचे अंजलि देने के लिए हिन्दू मानसिंह, हिन्दू प्रतापादित्य को जानवर की तरह बांध कर ले गया था और उसके लिए रसद जुटाकर, रास्ता दिखाकर आये थे तब बंगाली। जब बर्मी लोग हमारा देश लूटने के लिए आते थे तब बंगाली लड़ते नहीं थे। सिर पर हांडी रखकर पानी में बैठे रहते थे। मुसलमान दस्यु मन्दिर ध्वंस करके जब हमारे देवताओं के कान काट लेते थे, तब बंगाली सिर पर पांव रखकर भाग जाते थे। धर्म की रक्षा के लिए गर्दन नहीं देते थे। वे बंगाली हमारे कुछ भी नहीं लगते कवि। गौरव करने योग्य उनमें कुछ भी नहीं था। हम लोग उनको बिल्कुल अस्वीकार करके चलेंगे। उनका धर्म, उनका अनुशासन, उनकी भीरुता, उनकी देश द्रोहिता, उनकी रीति-नीति—उनका जो कुछ भी है, वही तो होगा तुम्हारा विप्लव गान। वही तो होगा तुम्हारा सच्चा देश प्रेम।"

शशि विमूढ़ सा देखता रह गया।

डाक्टर बोले, "उनकी कापुरुषता से हम लोग विश्व के सामने हेय हो रहे हैं। उनकी स्वार्थपरता के भार से संकट ग्रस्त और पंगु हो गए हैं। यह केवल क्या देश ही की बात है? जिस धर्म को वे स्वयं नहीं मानते थे, जिस देवता पर उनके मन में श्रद्धा ही नहीं थी, उनकी ही दुहाई देकर वे समूची जाति के सिर से पांव तक युक्ति हीन विधि-निषेधों के हजारों बन्धनों में क्या नहीं बांध गए हैं? यह अधीनता ही तो हमारे अनेक दुखों की जड़ है।"

शशि ने कहा, "यह सब आप क्या कह रहे हैं?"

भारती बोली, "भैया, मैं आज ईसाई हूं। लेकिन वे लोग मेरे भी तो पूर्व पितामह है। उनके और अपराध जो भी रहे हों, लेकिन उनके धार्मिक विश्वास में भी छल कपट था। ऐसी अन्याय पूर्ण कटूक्ति मत करो।"

सुमित्रा चुप बैठी सुन रही थी। अब बोल उठी। भारती की ओर

देखकर बोली, "किसी के सम्बन्ध में कटूक्ति करना अन्याय है तो अश्रद्धेय पर श्रद्धा करना भी अन्याय है। यहां तक कि भले ही वे अपने पूर्व पितामह ही क्यों न हों। इसमें धृष्टता हो सकती है। लेकिन तुम्हारी बात में कोई तर्क नहीं है भारती। कुसंस्कार है, उनको छोड़ना सीखो।"

भारती चुप बैठी रही।

डाक्टर ने शशि से कहा, "कोई भी वस्तु, केवल प्राचीनता के बल पर सत्य नहीं हो सकती कवि। पुरातन का गुणगान कर पाना ही कोई बड़ा गुण नहीं। इसके अतिरिक्त हम लोग क्रान्तिकारी हैं। पुराने का मोह हम लोगों के लिए नहीं है। हमारी दृष्टि, हमारी गति, हमारे लक्ष्य केवल सामने की ओर हैं। पुराने का ध्वंस करके ही तो हमें अपना रास्ता बनाना पड़ता है। इसमें माया-ममता के लिए स्थान कहां है? जीर्ण और मृत ही रास्ता रोके रहेंगे तो हम पथ के दावेदारों का पथ कहां पायेंगे?"

भारती ने कहा, "मैं केवल तर्क के लिए ही तर्क नहीं कर रही हूं। मैं सचमुच ही तुम्हारे पास रहकर अपने जीवन का पथ ढूंढती हुई घूम रही हूं। तुम पुराने के शत्रु हो, लेकिन कोई एक संस्कार या रीति-नीति केवल प्राचीन होने के कारण ही क्या निष्फल, व्यर्थ और त्याज्य हो जायगी? तब मनुष्य किसी संशय के बिना किसके ऊपर निर्भर होकर खड़ा रहेगा?"

डाक्टर बोले, "इतना भार सहने वाली वस्तु संसार में कौन सी है, यह मैं नहीं जानता। लेकिन यह जानता हूं भारती कि समय के साथ एक दिन सभी चीजें प्राचीन, जीर्ण और निकम्मी हो जाने पर त्याज्य हो उठेंगी। प्रतिदिन मनुष्य आगें ही बढ़ते जायेंगे और उनके पितामहों द्वारा प्रतिष्ठित हजारों वर्ष की पुरानी रीति-नीतियां एक ही स्थान पर अचल होकर रह जायेंगी ऐसा हो तो शायद अच्छा ही हो। लेकिन ऐसा होता नहीं है। इसमें आफत तो यही है कि केवल वर्षों की संख्या से ही किसी एक संस्कार की प्राचीनता निरूपित नहीं की जा सकती। वरना तुम भी आज हमारे साथ आवाज मिलाकर कहतीं—'भैया, जो कुछ पुराना है, जो कुछ जीर्ण है सबको कुछ विचार किए बिना ही ममता छोड़कर ध्वस्त कर डालो। नए जगत की प्रतिष्ठा हो जाए'।"

भारती ने पूछा, "तुम क्या यह स्वयं कर सकते हो?"

"क्या कर सकता हूं बहिन?"

"जो कुछ प्राचीन है, सभी को कठोरता से ध्वस्त कर सकते हो?"

डाक्टर बोले, "कर सकता हूं। यही तो हम लोगों का व्रत है। पुराने

का अर्थ पवित्र नहीं होता भारती। कोई मनुष्य सत्तर वर्ष का पुराना हो जाने से दस वर्ष के बच्चे से अधिक पवित्र नहीं हो जाता। तुम अपनी ओर ही नजर डालकर देखो। मानव की अविश्राम यात्रा के मार्ग में भारत का वर्णाश्रम धर्म तो सब तरह से असत्य हो गया है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र कोई भी तो अब उस आश्रम के आधार पर नहीं रहता। अगर कोई ऐसा करे तो उसे मरना होगा। उस युग के बन्धन आज छिन्न-भिन्न हो गए हैं। फिर भी उसी को पवित्र मान रही है कौन? —जानती हो भारती? ब्राह्मण। चिरस्थायी व्यवस्था को ही अतिशय पवित्र समझ कर कौन उसके साथ चिपका रहना चाहता है, जानती हो? जमींदार—उसका स्वरूप समझना तो कठिन नहीं है बहिन। जिस संस्कार के मोह से, अपूर्व आज तुम्हारी जैसी नारी को भी छोड़ कर जा सकता है उससे बढ़कर असत्य और क्या है? और क्या केवल अपूर्व के वर्णाश्रम धर्म की ही ऐसी दशा है? तुम्हारा ईसाई धर्म भी वैसा ही असत्य हो गया है भारती। उसकी भी प्राचीनता का मोह तुम्हें त्याग देना पड़ेगा।"

भारती ने डर कर कहा, "जिस धर्म को मैं प्यार करती हूं, विश्वास करती हूं, तुम उसी को छोड़ देने को कह रहे हो भैया?"

डाक्टर बोले, "हां, कह रहा हूं। क्योंकि सभी धर्म असत्य हैं। आदिम दिनों के कुसंस्कार हैं। विश्व-मानवता के इतने बड़े शत्रु और कोई भी नहीं हैं।"

भारती उदास और स्तब्ध होकर बैठी रही। बहुत देर के बाद वह धीरे-धीरे बोली, "भैया, तुम जहां भी रहो, मैं तुमको प्यार करती रहूंगी। लेकिन अगर यही तुम्हारा यथार्थ मत हो तो आज से मेरा और तुम्हारा रास्ता बिलकुल अलग है। मैंने एक दिन भी यह नहीं सोचा था कि तुम्हारे पथ के दावेदार का मार्ग इतने भयंकर पाप का मार्ग है।"

डाक्टर ने जरा मुस्करा दिया।

भारती ने कहा, "मैं निश्चयपूर्वक जानती हूं कि तुम्हारे इस दयाहीन, निष्ठुर ध्वंस के पथ में कल्याण कदापि नहीं है। मेरा स्नेह का पथ, करुणा का मार्ग, धार्मिक विश्वास की राह—यही मेरा श्रेय है। यही पथ सत्य है।"

"इसीलिए तो तुमको खींचना नहीं चाहा भारती, तुम्हारे सम्बन्ध में गलती की थी सुमित्रा ने। लेकिन मुझसे कभी गलती नहीं हुई। अपने मार्ग से ही चलो। स्नेह के आयोजन, करुणा की संस्थाएं संसार में खोजने पर अनेक मिल जायेंगी। मिलेगा नहीं तो केवल 'पथ का दावेदार' नहीं मिलेगा।"—कहते-कहते उनकी आंखों की दृष्टि पलभर के लिए

जलकर फिर बुझ गई। लेकिन उनका कंठ स्वर स्थिर और गम्भीर था।

भारती और सुमित्रा दोनों ही समझ गईं कि सव्यसाची की यह शान्त मुखश्री, यह संयत— अचंचल भाषा ही सबसे अधिक भीषण है।

सव्यसाची ने मुंह उठाकर कहा, "तुमसे तो कई बार कह चुका हूं भारती कि मुझे कल्याण की कामना नहीं है। मुझे तो कामना है केवल स्वाधीनता की। राणा प्रताप ने चित्तौड़ को जब जनहीन वन में परिणत कर दिया था तब सारे राजपूताने में उनसे बढ़कर अकल्याण की मूर्ति और कहीं भी नहीं थी। यह घटना जब हुई तब से कितनी शताब्दियां बीत गईं फिर भी वह अकल्याण ही आज हजारों कल्याणों से बड़ा हो गया है। लेकिन जाने दो इन व्यर्थ के तर्कों को। जो मेरा व्रत है उसके सामने मेरे लिए कुछ भी असत्य नहीं है, कुछ भी अकल्याण नहीं है।"

भारती चुपचाप बैठी रही। तर्क और मतभेद तो पहले भी अनेक बार हो चुके हैं। लेकिन इस प्रकार के नहीं।

डाक्टर ने घड़ी की ओर देखा, उसके बाद हंसते हुए कहा, "लेकिन नदी में फिर ज्वार आने का समय हो गया भारती, उठो।"

भारती उठकर बोली, "चलिए।"

डाक्टर खाने की पोटली उठाकर बोले, "सुमित्रा, ब्रजेन्द्र कहां है?"

सुमित्रा ने उत्तर नहीं दिया। चुपचाप बैठी रही।

"तुमको मैं पहुंचा आऊं क्या?"

सुमित्रा ने गर्दन हिलाकर कहा, "नहीं।"

डाक्टर बोले, "अच्छा।" फिर भारती से उन्होंने कहा, "अब देर मत करो बहिन। चलो।" यह कहकर वे बाहर चले गए।

सुमित्रा उसी तरह मुंह झुकाए बैठी रही। भारती ने उसको नमस्कार किया और डाक्टर के पीछे-पीछे चल पड़ी।

अट्ठाइस

भारती नाव पर आकर इस तरह बैठ गई जैसे सपनों में खोयी हो। नदी के पूरे रास्ते वह बराबर चुपचाप ही बैठी रही।

रात का शायद तीसरा पहर हो चुका था। आकाश के असंख्य

नक्षत्रों के प्रकाश से पृथ्वी का अन्धकार स्वच्छ होता चला आ रहा था। नाव जाकर उस पार के घाट पर लग गई। हाथ पकड़कर भारती को उतार चुकने पर सव्यसाची स्वयं भी उतरने को तैयार हो रहे थे कि उसी समय भारती ने उन्हें रोकते हुए कहा,"मुझे पहुंचाने की आवश्यकता नही है भैया। खुद चली जाऊंगी।"

"अकेली जाते समय डर नहीं लगेगा ?"

"लगेगा। लेकिन इसके लिए तुम को चलने की जरूरत नहीं है।"

सव्यसाची ने कहा, "थोड़ी दूर ही तो चलना है। चलो न, तुम्हें झटपट पहुंच आऊं बहिन," इतना कहकर उन्होंने ज्यों ही नीचे सीढ़ी पर पैर बढ़ाया, भारती ने हाथ जोड़कर कहा, "मुझे बचाओ भैया, तुम मेरे साथ चलकर मेरे भय को हज़ार गुना मत बढ़ाओ। तुम घर चले जाओ।"

वास्तव में साथ जाना अत्यन्त संकटपूर्ण काम था। इसमें सन्देह नहीं था। इसीलिए डाक्टर ने भी जिद नहीं की। लेकिन भारती के चले जाने के बाद भी वह नदी किनारे स्थिर भाव से खड़े रहे।

घर पहुंचकर भारती ने ताला खोलकर अन्दर कदम रखा। दीपक जलाकर चारों ओर सावधानी से निरीक्षण किया। उसके बाद किसी तरह बिछौना बिछाकर लेट गई। शरीर थक गया था। दोनों आंखें थकान से मुंदी जा रही थीं। लेकिन उसे किसी भी तरह नींद नहीं आई। घूम फिर कर सव्यसाची की यही बात उसे बराबर याद आने लगी कि परिवर्तनशील संसार में सत्य की उपलब्धि नाम की कोई शाश्वत वस्तु नहीं है। जन्म है, मरण है, युग-युग में, समय-समय पर उसे नया रूप धारण करके आना पड़ता है। अतीत के सत्य को वर्तमान में भी सत्य स्वीकार करना चाहिए यह विश्वास भ्रान्त है। यह धारणा कुसंस्कार है।

भारती मन-ही-मन बोली—मानब की आवश्यकता के लिए अर्थात् भारत की स्वाधीनता की आवश्यकता के लिए नए सत्य की सृष्टि करना ही भारतवासियों के लिए सबसे बड़ा सत्य है। अर्थात् इसके सामने कोई भी मार्ग असत्य नहीं है। कोई भी उपाय या कोई भी अभिसन्धि हेय नहीं है। यह जो कारखानों के गंदे कुली-मजदूरों को सत्य मार्ग पर लाने का उद्यम है, यह जो उनकी सन्तान को विद्या-शिक्षा देने का आयोजन है, उनके लिए यह जो रात्रि पाठशालाएं हैं, इन सब का लक्ष्य कुछ और ही है। इस बात को निसंकोच स्वीकार कर लेने में सव्यसाची को कोई दुविधा नहीं हुई। लज्जा मालूम नहीं हुई। पराधीन देश की मुक्ति यात्रा में पथ चुनने की छानबीन कैसी ?

एक दिन सव्यसाची ने कहा था,'पराधीन देश में शासकों और शासितों

की नैतिक बुद्धि जब एक हो जाती है तब देश के लिए इससे बढ़कर दुर्भाग्य की और कोई भी बात नहीं होती भारती।' उस दिन वह इस बात का अर्थ नहीं समझ सकी थी। आज वह मतलब उसके सामने स्पष्ट प्रगट हो गया।

घड़ी में तीन बज गए। इसके बाद वह कब सो गई पता नहीं। लेकिन उसे यह याद रहा कि नींद के आवेश में उसने बार-बार यह दोहराया था कि भैया, तुम अति मानव हो। तुम्हारे ऊपर मेरी भक्ति, श्रद्धा और स्नेह हमेशा अचल बना रहेगा। लेकिन तुम्हारी इस विचार बुद्धि को मैं किसी तरह भी ग्रहण न कर सकूंगी। भगवान करे, तुम्हारे हाथों से ही देश को मुक्ति मिले। लेकिन अन्याय को कभी न्याय की मूर्ति बनाकर खड़ा मत करना। तुम महान पंडित हो। तुम्हारी बुद्धि की सीमा नहीं है। तर्क में तुम को जीता नहीं जा सकता। तुम सब कुछ कर सकते हो। विदेशियों के हाथ से, पराधीनों के हाथ से, पराधीनों को जितनी लांछना मिलती है, दुःख के इस सागर में हमारा प्रयोजन कितना है। देश की लड़की होकर क्या मैं यह नहीं जानती भैया? इसलिए अगर आवश्यकता को ही सर्वोच्च स्थान देकर दुर्बल चित्त मनुष्यों के सामने अधर्म को ही धर्म बना डालोगे तो फिर इस दुख का तुम्हें कभी अन्त ही नहीं मिलेगा।

दूसरे दिन जब भारती की नींद टूटी, दिन चढ़ चुका था। लड़के दरवाजे के बाहर खड़े होकर पुकार रहे थे। झटपट हाथ-मुंह धोकर वह नीचे आ गई। दरवाज़ा खोलते ही कुछ छात्र-छात्राएं पुस्तकें-स्लेटें लिए अन्दर आ गए। उन्हें बैठने को कहकर भारती कपड़े बदलने ऊपर जा रही थी कि तभी होटल के मालिक सरकार महाराज आ गए। बोले, "अपूर्व तुम को कल रात से ही—।"

भारती ने बात काटकर पूछा, "रात को आए थे?"

महाराज बोला, "आज भी सवेरे से बैठे हैं। भेज दूं?"

भारती का मुंह उतर गया। बोली, "मुझसे उन्हें क्या काम है?"

ब्राह्मण ने कहा, "यह तो मैं नहीं जानता बहिन जी। शायद उनकी मां बीमार है। उसी सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं।"

भारती अप्रसन्नता से बोली: "मां बीमार हैं तो मैं क्या करूं?"

ब्राह्मण आश्चर्य में पड़ गया। अपूर्व बाबू को वह अच्छी तरह पहचानता था। वे सम्भ्रान्त व्यक्ति है। पिछले दिनों इसी घर में उनके स्वागत-सत्कार की कोई कमी नहीं थी। लेकिन आज इस असन्तोष भरे भाव का कारण वह नहीं समझ सका। बोला, "मैं जाकर उनको भेज देता हूं।"

यह कहकर वह जाने लगा तो भारती बोली, "इस समय लड़के लड़कियां आ गए हैं। उनको पढ़ाना है। कह दो इस समय भेंट नहीं होगी।"

ब्राह्मण बोला, "फिर दोपहर या शाम को मिलने के लिए कह दूं ?"

भारती बोली, "नहीं, मेरे पास समय नहीं है।"

इस प्रस्ताव को यहीं समाप्त करके वह ऊपर चली गई।

स्नान करने के बाद तैयार होकर घंटे भर बाद वह जब नीचे उतरी तब तक लड़के-लड़कियों से कमरा भर गया था और उनके पढ़ने की आवाज़ों से सारा मुहल्ला गूंज उठा था। भारती पढ़ाने के लिए बैठी लेकिन मन नहीं लगा। पाठ देने में और सुनने में उसे आज केवल असफलता ही नहीं बल्कि आत्मवंचना-सी मालूम होने लगी। और सभी भावनाओं के बीच-बीच में आकर लगातार बाधा पहुंचाने लगी अपूर्व की चिन्ता। उसे इस प्रकार लौटा देना अशोभनीय ही क्यों न हो, उसे प्रश्रय देना बहुत बुरा है, इस विषय में भारती के मन में किसी भी बहाने से भेंट करके वह पहले के अस्वाभाविक सम्बन्ध को और भी विकृत कर देना चाहता है। नहीं तो अगर मां बीमार है तो वह यहां बैठा क्या कर रहा है ? मां तो उसकी है, भारती की तो है नहीं।

उनकी खतरनाक बीमारी का समाचार पहुंचा कर उनकी रोग शय्या के पास पहुंचना पुत्र का प्रथम और प्रधान कर्तव्य है। यह विषय क्या दूसरे से परामर्श करके समझना होगा ? उसे यह बात याद आ गई कि रोग के मामले में अपूर्व बहुत डरता है। उसका कोमल मन व्यथा से व्याकुल होकर बाहर से कितना ही क्यों न छटपटाता रहे, रोगी की सेवा करने की उसमें न तो शक्ति है न साहस। यह भार उस पर सौंप देने के समान सर्वनाश और नहीं है। भारती यह सब जानती थी। वह यह भी जानती थी कि अपनी मां को अपूर्व कितना प्यार करता है। मां के लिए वह जो न कर सके ऐसा कोई भी काम संसार में उसके लिए नहीं है।

उनके ही पास न जा सकने का अपूर्व को कितना दुख है। इसकी कल्पना करके एक ओर उसके मन में जिस प्रकार करुणा पैदा हुई दूसरी ओर इस असहनीय भीरुता से, क्रोध के मारे उसका सारा शरीर जलने लगा।

भारती ने मन ही मन कहा, "सेवा नहीं कर सकता तो क्या इसी कारण बीमार मां के पास जाने में कोई लाभ नहीं है ? इसी उपदेश की क्या अपूर्व मुझ से प्रत्याशा करता है ?"

भूख न होने के कारण आज भारती ने रसोई बनाने की चेष्टा नहीं की।

दिन का जब तीसरा पहर बीत चला तब एक घोड़ागाड़ी आकर उसके दरवाजे पर खड़ी हो गई। भारती ने ऊपर की खिड़की से देखा तो आश्चर्य और आशंका से उसका हृदय भर उठा। गठरी-पोटरी आदि अपना सारा सामान गाड़ी की छत पर लादकर शशि आ धमका था। पिछली रात के हंसी-मजाक को संसार में कोई भी मनुष्य ऐसी वास्तविकता में परिवर्तित कर सकता है शायद भारती इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकती थी।

भारती नीचे उतरकर बोली, "यह क्या शशिबाबू ?"

शशि बोला, "मकान छोड़कर आ रहा हूं।" फिर गाड़ीवान को आदेश दिया, "सामान ऊपर ले जाओ।"

भारती बोली, "ऊपर जगह कहां है शशि बाबू ?"

शशि बोला, "बहुत अच्छा, तो नीचे के कमरे में रख दो।"

भारती बोली, "नीचे के कमरे में तो पाठशाला है।"

शशि चिन्तित हो उठा।

भारती ने उसे तसल्ली देते हुए कहा, "एक काम किया जाए शशि बाबू। होटल में डाक्टर का कमरा खाली है। आप वहां अच्छी तरह रहेंगे। खाने-पीने का भी कष्ट नहीं होगा। चलिए।"

"लेकिन कमरे का किराया तो देना होगा ?"

भारती हंसकर बोली, "नहीं। भैया छै महीने का किराया दे गए हैं।"

शशि प्रसन्न न होते हुए भी इस व्यवस्था से सहमत हो गया। सारे सामान के साथ कवि को महाराज के होटल में प्रतिष्ठित करके भारती ऊपर अपने सोने के कमरे में लौट आई।

दूसरे दिन जब नींद टूटी तब भूखे रहने के कारण कमजोरी से उसका शरीर थका हुआ था।

जिस आदमी से भारती की मां ने विवाह किया था वह बड़ा दुराचारी था। उसके साथ इकट्ठे बैठकर ही भारती को भोजन करना पड़ता था। फिर भी किसी बासी या अस्वच्छ वस्तु को उसने कभी अपना खाद्य पदार्थ नहीं बनाया, छुआ-छूत की भावना उसमें नहीं थी लेकिन जहां-तहां, जिस-तिसके हाथों का भोजन ग्रहण करते हुए उसे घृणा होती थी। मां की मृत्यु के बाद से वह अपने ही हाथ से रसोई बनाकर खाती थी। लेकिन

आज रसोई बना पाने की शक्ति उसके शरीर में नहीं थी। इसलिए होटल में रोटी और कुछ तरकारी तैयार कर देने के लिए उसने महाराज के पास सूचना भेज दी।

दासी भोजन की थाली लेकर आई तो भारती ने अपनी थाली और कटोरी लाकर मेज पर रख दी। दासी ने दूर ही से उसकी थाली में रोटी और कटोरी में तरकारी डालकर कहा, "लो भोजन कर लो।"

भारती ने बड़ी नर्मी से कहा, "तुम जाओ, मैं खा लूंगी।"

दासी बोली, "जाती हूं। नौकर तो उनके साथ चला गया था। अकेले सब धोना-मांजना— जो हो, लौटकर बीस रुपए मेरे हाथ में देकर बाबू रोकर बोले, 'दाई, अन्त समय में तुमने जो किया, उतना मां की बेटी भी पास रहते हुए नहीं कर सकती थी।' वे रोने लगे तो मैं भी रोने लगी। बहिन जी, आह, कितना कष्ट उठाया। परदेश की भूमि, कोई अपना आदमी पास नहीं। समन्दर का रास्ता, तार भेज देने से ही तो बहू-बेटे उड़कर आ नहीं सकते थे। उन लोगों का भी क्या दोष है।"

भारती का हृदय उद्वेग और अज्ञात आशंका से बर्फ-सा हो गया लेकिन मुंह खोलकर वह कुछ भी न पूछ सकी।

दासी कहने लगी, "महाराज जी ने बुलाकर कहा, 'बाबू की मां बहुत बीमार हैं, तुमको वहां जाना पड़ेगा झाना।' मैं तब नहीं, न कह सकी। एक तो निमोनिया की बीमारी, उस पर धर्मशाला की भीड़। जंगले-किवाड़ सब टूटे हुए। एक भी बन्द नहीं होता था।—कैसा संकट। पांच बजने पर प्राण निकल गए। लेकिन मेस के बाबुओं को खबर देते बुलाते-बुलाते शव उठा रात को दो-ढाई बजे। उनके लौटकर आने पर दिन चढ़ गया था। अकेली मुझे ही सब धोना-पोंछना—।"

भारती ने पूछा, "क्या अपूर्व बाबू जी मां मर गई?"

दासी ने गर्दन हिलाकर कहा, "हां बहिन जी, मानो उनके लिए बर्मा में ज़मीन खरीद ली गई थी। वही जो एक कहावत है—'ताहि तहां ले जाए।' ठीक यही बात हुई। इधर से अपूर्व बाबू ने प्रस्थान किया, उधर वे भी लड़के से झगड़ा करके जहाज पर बैठ गईं। बस एक नौकर साथ था। जहाज ही में बुखार आ गया। धर्मशाला में उतरते ही एकदम बेहोशी छा गई। घर पहुंचते ही बाबू वापसी जहाज से लौट आए। यहां आकर उन्होंने देखा, मां जा रही हैं। वास्तव में चली ही गईं। लेकिन अब बातें करने का समय नहीं है बहिन जी, इसी समय सभी बाहर निकल पड़ेंगे। फिर शाम को आऊंगी।" कहकर वह चली गई।

भोजन की थाली उसी तरह पड़ी रही। उसकी आंखों से आंसू की

बड़ी-बड़ी बूंदें गालों पर से झर-झर नीचे गिरने लगीं। अपूर्व की मां को उसने कभी देखा नहीं था। पति-पुत्र के कारण उन्होंने जीवन में बहुत कष्ट उठाया था। इसके अतिरिक्त उनके सम्बन्ध में विशेष कुछ नहीं जानती थी। लेकिन कितनी ही बार, अपने एकान्त कमरे में, रात के समय जागती हुई उसने उस बूढ़ी विधवा स्त्री के सम्बन्ध में कितनी ही कल्पनाएं की थीं। सुख के समय नहीं, दुख के समय में भी अगर उनसे भेंट हो—जब उसके सिवा उनके पास और कोई न हो—तब ईसाई होने के कारण वे कैसे दूर हटा सकती हैं—यह बात जान लेने की उसकी बड़ी साध थी। बड़ी साध थी कि दुर्दिन की उस अग्नि-परीक्षा में अपने-पराए की समस्या का वह अन्तिम समाधान कर लेगी। धर्म-मतभेद ही इस जगत में मनुष्य का चरम विच्छेद है या नहीं—इस सत्य की परीक्षा कर लेने के लिए ही वह चरम दुःसमय उसके भाग्य में आया था लेकिन वह उसे ग्रहण न कर सकी। इस रहस्य की जीवन में मीमांसा न हो सकी।

और अपूर्व—वह आज कितना असहाय है, कितना अकेला है—भारती से अधिक इस बात को कौन जानता है? हो सकता है माता के एकाग्र मन का आशीर्वाद ही अब तक कवच की भांति उसकी रक्षा करता चला आ रहा था। लेकिन आज वह भी समाप्त हो गया। भारती ने मन ही मन कहा—यह सब मेरे आकाश कुसुम हैं। मेरे अवचेतन मन की स्वप्न रचना के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हैं। फिर भी यह स्वप्न, मेरे निर्देशनहीन भविष्य को कितना स्निग्ध—श्याम शोभा से सुशोभित किए रखता था—इस बात को मेरे सिवा और जानता ही कौन है, मुझसे अधिक कौन जानता है कि घर पर और बाहर भी अपूर्व आज कितना असहाय है, कितना अकेला है।

शायद आत्मीय-बन्धुओं ने उसे त्याग दिया है। डरपोक, लोभी और नीच विचारों का होने के कारण बन्धु-बान्धवों के बीच वह निन्दनीय है। और सब दुखों से बड़ा दुख तो यह है कि उसकी मां आज इस लोक में नहीं हैं। भारती को यह बात मालूम थी कि लज्जा के कारण अपूर्व किसी परिचित के पास नहीं जा सका था। और सारी लज्जा को तिलांजलि देकर वह बार-बार उसी के पास दौड़ा आया था। उद्यम की पटुता, व्यवस्था की शृंखला, कार्य की तत्परता—कुछ भी तो नहीं है उसमें। फिर जब धर्मशाला में असह्य निर्जनता और कोलाहल, हर प्रकार के अभावों और असुविधाओं के बीच उसकी मां की मृत्यु हो गई होगी तब अकेले उसके वे क्षण किस तरह बीते होंगे—इस बात की कल्पना करके उसकी आंखों के आंसू रोकने पर भी नहीं रुक सके।

आंखें पोंछते-पोंछते जो बात उसे अनेक बार याद आई थी वही बात उसे फिर याद आ गई। मानों सभी दुखों का सूत्रपात अपूर्व की उसके साथ जान-पहचान होने के साथ ही हुआ हो। नहीं तो पिता और बड़े भाई की उद्दंडता, उच्छृंखलता के विरुद्ध जब उसने मां का पक्ष लेकर सैकड़ों दुख सहे थे तब स्वार्थ बुद्धि ने उसे सत्य से विचलित क्यों नहीं किया ? तब दुर्बलता कहां थी। अपने कर्माचरण में, आस्था और प्रगाढ़ निष्ठा में क्या सचमुच ही वह इतने तुच्छ विचारों की है कि यह सब कुछ मां का मुंह देख कर ही किया करती थी ? उसका गंगा स्नान, उसका चोटी रखना, उसका सब काम, सारे अनुष्ठान भले ही झूठे और आडम्बर ही क्यों न हों फिर भी वह अपने प्रति किए स्व मज़ाकों और आक्रमणों को सहकर उनको बेकार करके अटल ही बना रहा। इसे क्या अपूर्व के स्थिर मन का प्रमाण माना जा सकता है ?

फिर आज वही मनुष्य बर्मा में आकर ऐसा कैसे हो गया ? और इतने दिनों तक उसकी दुर्बलता कहां छिपी रही थी ?—सव्यसाची से इसका उत्तर पूछने को तत्पर होते हुए भी कितनी ही बार वह पूछ नहीं पाई। केवल कौतूहल के कारण ही नहीं बल्कि अन्तर की व्यथा के बीच से ही उसने कई बार सोचा है कि इस संसार में जो कुछ भी जाना जा सकता है, वह सभी भैया जानते हैं। इसीलिए इस समस्या का समाधान वे ही कर देंगे। केवल संकोच और लज्जा के कारण ही वह अपूर्व के सम्बन्ध में उनसे कुछ पूछ ही नहीं सकी है।

सोचते-सोचते सहसा एक नया प्रश्न उसके मन में आ गया। कर्मदोष से जबकि सभी अपूर्व के विरुद्ध हैं तब भी जिस मनुष्य की सहानुभूति उसे मिलती रही वह है सव्यसाची। लेकिन किसलिए ? क्या केवल बहिन के प्रति संवेदना होने के कारण ? उनका स्नेह पाने योग्य गुण क्या स्वयं अपूर्व में कुछ नहीं है ? सचमुच ही क्या भारती ने इतने क्षुद्र व्यक्ति पर इतना अधिक प्रेम समर्पित कर दिया है ? उस दुर्दिन में सावधान कर देने योग्य पूंजी—क्या उसके पास कुछ भी नहीं थी ? उनका हृदय इतना कंगाल, ऐसा दिवालिया हो गया था।

इसी तरह एक ही स्थिति में बैठे-बैठे जब दो घंटे बीत गए तब दासी फिर आ गई। उस समय होटल के ज़रूरी कामों के कारण सभी आलोचनाएं समाप्त करके जाने का अवसर उसे नहीं मिला था। इस समय उसे कुछ छुट्टी मिल गई है। अपूर्व और भारती के बीच एक रहस्यमय मधुर सम्बन्ध है, यह बात आभास और चाल-ढाल से सभी जान गए थे। दासी से भी यह बात छिपी नहीं थी। तो अचानक ऐसी कौन-सी घटना

हो गई जिससे अपूर्व की इतनी बड़ी विपत्ति के दिनों में भी भारती ने उसकी परछांई तक छूने से इनकार कर दिया ? एक स्त्री होते हुए भी इतनी बड़ी बात न मालूम कर लेने तक ज्ञाना को खाना-पीना कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। इसलिए वह किसी बहाने से पहुंच गई। पहले तो अवाक् हो गई, बाद को बोली "कुछ भी तो तुमने नहीं छुआ, देख रही हूं।"

भारती लज्जित होकर झटपट उठ खड़ी हुई और बोली, "नहीं।"

दासी ने सिर हिलाकर आवाज़ में करुणा पैदा करके कहा, "खाया नहीं जाता बहिन जी। मैंने तो सारा कांड अपनी आंखों से देखा है। विश्वास न हो तो चलकर देख लो। मुंह में मैंने एक भी कौर रखा है या नहीं। भात की थाली ज्यों की त्यों पड़ी हुई है।"

उसकी अवांछित संवेदना से भारती के संकोच की कोई सीमा नहीं रही। ज़ोर लगाकर हंसने की चेष्टा करती हुई बोली, "किसी से एक गाड़ी मंगवा दो न दाई।"

'शायद जाओगी ?"

"हां, जरा जाकर देखूं तो क्या हुआ ?"

ज्ञाना ने कहा, "आज सबेरे आकर महाराज जी से कैसी विनती करने लगे थे। मैंने सुनकर कहा, 'यह कौन-सी बात है। मनुष्य के संकट विपत में सहायता न करूंगी तो कब करूंगी।' हाथ का काम पड़ा रह गया। जैसी थी वैसी ही घर से निकल पड़ी। भाग्य तो फिर भी— ?"

उन्हीं सब बातों के दोहराए जाने की आशंका से भारती घबरा उठी। बीच ही में रोककर बोली, "तुमने संकट के दिनों में जो कुछ किया उसकी तुलना नहीं हो सकती। लेकिन अब देर मत करो दाई। एक गाड़ी मंगवा दो। मुझे जाना है। तब तक घर के काम-काज निबटा लेती हूं।"

दाई गाड़ी लेने चली गई और दुर्दिन में सहायता पहुंचाने का आग्रह करके यह भी कहती गई कि घर का काम-काज आज मैं ही कर जाऊंगी। जबकि खाने-पीने की कोई चीज़ छुई तक नहीं गई है, तब उनकी भी सफाई कर देने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

गाड़ी आ गई तो भारती कुछ रुपए लेकर, घर-द्वार में ताला लगाकर चल पड़ी।

वह जब धर्मशाला में पहुंची तब दिन था। दूसरी मंजिल के उत्तर में एक कमरा दिखाकर दरवान ने कहा, "बंगाली बाबू भीतर ही हैं।" और फिर बंगाली महिला को बंगला भाषा में ही समझाकर उसने बताया कि धर्मशाला में तीन दिन से अधिक ठहरने का नियम नहीं है। यह मियाद पूरी हो गई है। अगर कहीं मैंनेजर साहब को मालूम हो गया तो उसकी

नौकरी में भी गड़बड़ी मच जाएगी।

इस इशारे का अर्थ समझकर भारती ऊपर के कमरे में चली गई। वहां जाकर देखा, चीज़ें और सामान चारों ओर बिखरे पड़े हैं और अपूर्व कम्बल पर औंधा पड़ा है। नई चादर से उसका मुंह ढंका है। वह जाग रहा है या सो रहा है, यह नहीं समझ सकी। सुना था साथ में एक नौकर आया है लेकिन वह कहीं दिखाई नहीं दिया।

"अपूर्व बाबू !" भारती ने पुकारा।

अपूर्व उठकर बैठ गया। उसने भारती के चेहरे की ओर एक बार देखा और फिर अपने दोनों घुटनों में मुंह छिपा लिया, कुछ देर बाद आंखें ऊपर उठाकर सीधा बैठ गया। उसके चेहरे पर मातृ वियोग की असीम वेदना जम गई थी। लेकिन आवेग या चंचलता नहीं थी। शोक से बोझिल, गम्भीर दृष्टि के सामने इस संसार का सब कुछ मानो उसके लिए एकदम झूठा हो गया है, मां के आंचल की छाया के नीचे रहने वाले जिस अपूर्व को उसने एक दिन पहचाना था। यह अपूर्व वह नहीं है। भारती आश्चर्य में पड़कर अवाक् हो गई।

अपूर्व बोला, "यहां बैठने के लिए कुछ नहीं है भारती, सारी जगह भीगी हुई है। तुम बक्स पर बैठ जाओ।"

भारती किवाड़ की चौखट पकड़े, आंखें झुकाए जिस तरह खड़ी थी उसी तरह खड़ी रह गई। कुछ देर तक दोनों के मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला।

फिर अपूर्व ही बोला, "बैठ जाओ भारती।"

भारती बोली, "बैठने पर शाम हो जाएगी।"

"क्या इसी समय चली जाओगी ? बैठ नहीं सकोगी ?"

भारती बक्स पर बैठ गई। फिर बोली, "मां यहां आई थी यह बात मुझे मालूम नहीं थी। मैंने उनको देखा नहीं, लेकिन मेरी छाती के भीतर आग-सी जल रही है। इस संबंध में कुछ कहकर मुझे और दुख मत देना," कहते-कहते उसकी आंखों से आंसू लुढ़क पड़े।

अपूर्व स्तब्ध हो रहा। भारती ने आंचल से आंसू पोंछते हुए कहा, "समय आ गया, मां चली गई। पहले मैंने सोचा था इस जन्म में कभी तुम्हें अपना मुंह नहीं दिखाऊंगी। लेकिन तुमको इस तरह अलग फेंककर भी कैसे रह सकती हूं ? मेरे साथ गाड़ी आई है, उठो, मेरे घर चलो।" फिर उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी।

अपूर्व ने शान्त स्वर में कहा, "अशौच का झमेला बहुत है। वहां

सुविधा न होगी भारती। इसके अतिरिक्त इसी शनिवार के स्टीमर से मैं घर वापस चला जाऊंगा।"

भारती बोली, "शनिवार में अभी चार दिन हैं। मां की मृत्यु के बाद कुछ झमेला रहता है, यह मैं जानती हूं। लेकिन उसे मैं सह न सकूंगी तो क्या धर्मशाला के ये लोग सहेंगे? चलो।"

अपूर्व बोला, "नहीं।"

भारती बोली, "नहीं कह देने से ही अगर तुम्हें इस हालत में छोड़कर चली जा जा सकती तो यहां आती ही नहीं अपूर्व बाबू—" यह कहकर एक-पल चुप रहकर बोली, "इतने दिनों के बाद तुमसे छिपकर कहने या लज्जित होकर कहने के लिए कोई भी बात नहीं रही। मां का अन्तिम कार्य बाकी है शनिवार को जहाज से तुम्हें घर वापस जाना ही पड़ेगा। उसके बाद क्या होगा, मैं यह भी जानती हूं। मैं तुम्हारी किसी व्यवस्था में बाधा नहीं दूंगी। लेकिन इस अवसर पर इन कुछ दिनों में भी अगर तुम्हें अपनी आंखों के सामने न रख सकी तो तुम्हारी ही शपथ लेकर कह रही हूं—घर लौटकर मैं आज ही विष खाकर प्राण त्याग दूंगी। मां का शोक इससे बढ़ेगा ही, घटेगा नहीं अपूर्व बाबू।"

अपूर्व खड़ा होकर बोला, "नौकर को बुलाओ—सब चीजें और सामान बांध डाले।"

सामान थोड़ा-सा ही था। गाड़ी पर रखने में आधा घंटा भी नहीं लगा। रास्ते में भारती ने पूछा, "भैया नहीं आये?"

अपूर्व बोला, "नहीं, छुट्टी नहीं मिली।"

"यहां की नौकरी छोड़ दी तुमने?"

"हां, यही समझो।"

"मां का अन्तिम संस्कार सम्पन्न करके क्या घर पर ही रहोगे?"

अपूर्व बोला, "नहीं। मां अब नहीं है। आवश्यकता से एक दिन भी अधिक मैं उस घर में नहीं रह सकता।"

यह सुनकर भारती के मुंह से एक लम्बी सांस निकल गई।

उनत्तीस

घने जंगलों से घिरे निर्जन, परित्यक्त जीर्ण-शीर्ण जिस मठ में एक

दिन अपूर्व के अपराध का निर्णय हुआ था आज फिर उसी कमरे में पथ के दावेदारों की बैठक बुलाई गई है। उस दिन के बन्दीगृह में जो दुर्जय क्रोध, निर्मम प्रतिहिंसा की आग लपटें फेंकती हुई जली थी और उसकी नन्हीं-सी चिनगारी भी नहीं है। आज न कोई वादी है न प्रतिवादी है। किसी के विरुद्ध किसी को कोई शिकायत नहीं है। आज तो आशंका और निराशा की दुस्सह वेदना से सारी सभा निष्प्रभ, उदास और मृत:प्राय सी हो रही है।

भारती की आंखों के कोनों में आंसू की बूंदें हैं। सुमित्रा मुंह झुकाए स्थिर बैठी है। तलवलकर गिरफ्तार हुआ है। खून से लथपथ शरीर लिए वह जेल के अस्पताल में पड़ा है। आज भी उसे अच्छी तरह होश नहीं हुआ है। उसकी पत्नी अपनी बच्ची के साथ रास्ते में इधर-उधर भटकती रही। अनेक दुख भोगने के बाद कल शाम को एक महारा विट्ठदन ब्राह्मण के घर में उसे शरण मिली है। सुमित्रा ने पता पूछकर उसके मैके आज तार भेज दिया है लेकिन अभी तक कोई उत्तर नहीं आया।

भारती ने धीरे से पूछा, "तलवलकर बाबू का क्या होगा भैया ?"

डाक्टर बोले, "अस्पताल में बच गया तो जेल की सजा भोगेगा।"

भारती मन-ही-मन सिहर कर बोली, "नहीं बचें, यह भी सम्भव है ?"

डाक्टर ने कहा, "कम से कम असम्भव तो नहीं है। अन्यथा लम्बी कैद—।"

भारती बोली, "उनकी पत्नी और बच्चों का क्या होगा ?"

सुमित्रा बोली, "शायद उनके पिताजी आकर ले जायें।"

भारती बोली, "अगर कोई नहीं आया ?"

डाक्टर बोले, "उस दशा में अचानक किसी के मर जाने पर उसकी विधवा की जो दशा होती है वही होगी।"

थोड़ी देर बाद बोले, "हम लोग गृहस्थ नहीं हैं, हमारे पास धन नहीं है। विदेशियों के कानून के अनुसार अपनी जन्मभूमि में भी सिर ढंकने की जगह नहीं है पशुओं की तरह हम लोग जंगलों में छिपे-छिपे घूमते हैं। गृहस्थों का दुख दूर करने की शक्ति हम लोगों में नहीं है भारती।"

भारती बोली, "तुम लोगों में नहीं है। जिन लोगों में यह सामर्थ्य है ये हमारे देश के लोग ही इनका दुख दूर नहीं कर सकते भैया।"

डाक्टर जरा मुस्करा कर बोले, "लेकिन वे क्यों करेंगे बहिन ? वे लोग तो हम लोगों को ऐसा काम करने को नहीं कहते ? हम लोग उनकी शान्ति में बाधक हैं। उनके आराम में विघ्न हैं। अंग्रेज जब दम्भ के साथ प्रचार करते हैं कि भारतवासी स्वाधीनता नहीं चाहते, पराधीनता की ही कामना

करते हैं—तब वे बिल्कुल झूठ नहीं कहते। और युग-युगान्तर के अंधेरे में रहते-रहते जिनको दोनों आंखों की दृष्टि खो चुकी है उनके विरुद्ध हताश होने में भी क्या रखा है भारती।"

कुछ पल रुक कर वे कहने लगे, "विदेशी राजा की जेल में अगर आज तलवलकर को मर जाना पड़े तो परलोक में खड़े रहकर यहां अपनी पत्नी और कन्या को दर-दर भीख मांगते देखकर उसकी आंखों से आंसू गिरेंगे ही—लेकिन विश्वास रखो, देशवासियों के विरुद्ध वह भगवान से कोई भी शिकायत नहीं करेगा। मैं उसे पहचानता हूं। लज्जा से उसके मुंह से ऐसी बात भी न निकलेगी।"

भारती ने अस्फुट स्वर में कहा, "उंह।"

कृष्ण अय्यर बंगला बोल नहीं सकता था। लेकिन बीच-बीच में समझ लेता था। गर्दन हिलाकर बोला, "ऐस—ट्रू—।"

डाक्टर ने कहा, "हां, यही तो सच है। यही तो क्रान्तिकारियों की चरम शिक्षा है। रोना किसके लिए? शिकायत किससे करें? अगर कभी तुम यह सुनो कि भैया को फांसी हो गई तो समझ लेना कि विदेशियों की आज्ञा से उसी के देश के किसी आदमी ने उसके गले में फांसी लगा दी है। कसाई खाने में कटे बैलों का मांस बैल ही ढोकर लाते हैं। इसके लिए फिर शिकायत कैसी बहिन?"

भारती बोली, "भैया, यही तो तुम लोगों के कर्मों के परिणाम हैं।"

डाक्टर बोले, "यह क्या तुच्छ परिणाम है भारती? मैं जानता हूं कि देश के लोग इसका मूल्य नहीं समझेंगे। शायद मजाक ही उड़ायेंगे। लेकिन जिसे यह ऋण दमड़ी—छदाम तक का हिसाब करके चुकाना पड़ेगा उसके मुंह पर हंसी सहज ही में नहीं आयेगी।" फिर बोले, "भारती, स्वयं ईसाई होकर तुम अपने ही धर्म की बात भूल गईं। ईसा मसीह का खून बहाना क्या व्यर्थ हुआ था? यही तुम्हारा विचार है?"

सभी चुप बैठे रहे। डाक्टर ने फिर कहा, "तुम लोग तो जानते हो—व्यर्थ नर हत्या का मैं कभी भी पक्षपाती नहीं रहा। उसे मैं अपने सम्पूर्ण अन्तः करण से घृणा करता हूं। अपने हाथ से एक चींटी तक नहीं मार सकता। लेकिन आवश्यकता पड़ने पर—क्या कहती हो सुमित्रा?"

सुमित्रा ने समर्थन करते हुए कहा, "यह तो मैं मानती हूं।"

डाक्टर बोले, "इतनी दूर से आकर जिन लोगों ने हमारी जन्म भूमि पर अधिकार कर लिया है, हमारा मनुष्यत्व, हमारी मान-मर्यादा, हमारी भूख का अन्न, प्यास का जल, सभी कुछ जिन लोगों ने छीन लिया है उनको ही है हमारी हत्या का अधिकार और हमको नहीं है।"

लेकिन आज भारती अभिभूत नहीं हुई। उसने कहा, "आज तुम मुझको किसी प्रकार भी लज्जित नहीं कर सकते। ये सब पुरानी बातें हैं। हिंसा करना ही जिनका स्वभाव बन जाता है, वे ही ऐसी बातें करते हैं। यही अन्तिम बात नहीं है। संसार में इससे भी बड़ी बात मौजूद है।"

डाक्टर ने पूछा, "क्या है, बताओ तो ?"

भारती उच्छ्वसित स्वर में बोली, "मैं नहीं जानती लेकिन तुम जानते हो। जिस बुद्धि ने तुम्हारी सत्य बुद्धि को इस तरह एकदम ढंक रखा है एक बार उसे छोड़कर शान्ति के मार्ग पर चले आओ—तुम्हारे ज्ञान और प्रतिभा से पराजय न मान ले ऐसी समस्या संसार में कोई नहीं है। शक्ति के बदले शक्ति, हिंसा के बदले हिंसा, अत्याचार के बदले अत्यचार—यह तो बर्बरता के आरम्भ से ही चला आ रहा है। इससे बड़ी बात क्या बताऊं ?"

"फिर कौन बतायेगा ?"

"तुम ?"

"इसके लिए मुझे क्षमा करो बहिन। अंग्रेजों के बूटों के नीचे दबकर शान्ति की वाणी मेरे मुंह से निकल पड़ेगी—रुक जायगी। यह भार शशि पर छोड़ दो। तुम्हारी खातिर वह ऐसा कर सकेगा।"

भारती बोली, "तुम मजाक कर रहे हो। लेकिन जिन लोगों के प्रति तुम्हारा इतना विद्वेष है उन्हीं अंग्रेज पादरियों में से बहुतों से मैंने इस विषय पर अच्छी तरह विचार करके देख लिया है। वास्तव में उन्हें आनन्द की प्राप्ति होती है।"

डाक्टर बोले, "यह अत्यन्त स्वाभाविक है भारती। सुन्दर वन में शस्त्र त्याग कर खड़े होकर शान्ति की वाणी का प्रचार करने से बाघ-भालुओं के प्रसन्न होने जैसी बात है। वे लोग साधु मनुष्य हैं।"

भारती बोली, "आज भारत का चाहे जितना दुर्भाग्य क्यों न हो सुदूर अतीत में यह अवस्था नहीं थी। एक दिन भारत सभ्यता के उच्च शिखर पर आसीन था। उस दिन हिंसा-द्वेष नहीं, धर्म और शान्ति का मन्त्र भारतवर्ष से ही चारों ओर प्रचारित हुआ था। मुझे विश्वास है कि वही दिन फिर हम लोगों के सामने लौट आयेगा।"

भारती की बातें सुनकर शशि का हृदय श्रद्धा और अनुराग से विचलित हो रहा था। गदगद स्वर में बोला, "भारती के कथन का मैं अनुमोदन करता हूं डाक्टर। मेरा यही विश्वास है कि भारत की वही सभ्यता फिर लौट आयेगी। अवश्य आयेगी।"

डाक्टर ने दोनों की ओर देखते हुए कहा, "तुम लोग भारत के किस

युग की सभ्यता की चर्चा कर रहे हो—मैं नहीं जानता। लेकिन सभ्यता की भी एक सीमा होती है। धर्म-अहिंसा और शान्ति के उन्माद में उसे पार कर जाने पर मृत्यु निश्चित है। कोई देवता भी उसकी रक्षा नहीं कर सकता। भारत ने हूणों के सामने अपनी पराजय कब स्वीकार की थी, जानते हो? जब उन लोगों ने उनके बच्चों को मशाल की तरह जलाना शुरू कर दिया था। नारियों की पीठ के चमड़े से युद्ध के वाद्य बनाने आरम्भ कर दिए थे। उस कल्पनातीत नृशंसता का उत्तर देना भारतीयों ने नहीं सीखा था। उसका फल क्या हुआ? देश गया, राज्य गया, देवस्थान ध्वस्त हो गए। हम लोगों की उस असमर्थता का दंड आज तक भी पूरा नहीं हुआ है।"

फिर भारती की ओर देखकर बोले, "तुम अक्सर कवि की कविता सुना करती हो—देश गया तो क्या दुख है, तुम लोग फिर मनुष्य बनो। लेकिन देश को वापस ला पाने योग्य मनुष्य बन जाना किसे कहते हैं? तुमने सोचा है? मनुष्य बनने का तुम्हारा मार्ग बिल्कुल निष्कंटक है?—सोच है, देश के दरिद्र नारायण की सेवा करने और मलेरिया में कुनैन बांटते फिरने को ही मनुष्य बन जाना कहते हैं? ऐसी बात नहीं है। मनुष्य होकर जन्म लेने की मर्यादा—मोह को ही मनुष्य बनाना कहते हैं? मृत्यु के भय से मुक्ति पा लेने को ही मनुष्य होना कहते हैं?"

पल भर बाद फिर बोले, "तुम्हारा अपराध नहीं है भारती। उन लोगों के वातावरण के बीच ही तुम पली-बढ़ी हो। इसीलिए तुम्हारे मन में यह विचार जम गया है कि यूरोप की ईसाई सभ्यता से बड़ी और कोई सभ्यता नहीं है। लेकिन इतनी बड़ी झूठी बात भी और कोई नहीं है। सभ्यता का अर्थ क्या केवल मानव संहार के यन्त्रों का आविष्कार ही है? दुरात्माओं के पास छलों का अभाव नहीं होता। इसलिए आत्म रक्षा के छल से इनकी नित नई सृष्टि का भी कोई अन्त नहीं है। लेकिन सभ्यता का अगर कुछ अर्थ हो तो यही है कि असमर्थों और दुर्बलों के न्यायोचित अधिकार शक्तिशाली की शारीरिक शक्ति से परास्त न हों। कहीं भी देखी है इनकी ऐसी नीति? क्या इन्हें कहीं भी इस न्याय को गौरव देते हुए देखा है? एक दिन मैंने तुमसे कहा था। पृथ्वी के मानचित्र की ओर ध्यान से देखो। याद है यह बात? याद है मेरे मुंह से सुनी हुई चीन देश के केन्टन विद्रोह की कहानी? सुसभ्य यूरोपियन महाशक्तियों के बल ने उनके घरों पर धावा करके उनसे जो बदला लिया उसके सामने चंगेज खान और नादिर शाह की वीभत्सता की कहानियां कहां टिकती हैं?

सूर्य के सामने दीपक की तरह— वह तो इसके सामने तुच्छ ही है। कारण कितना ही तुच्छ और अन्यायपूर्ण क्यों न हो—युद्ध का बहाना मिलने पर फिर इन लोगों को कोई हिचक नहीं होती। बूढ़ा, बच्चा, नारी—किसी भी हत्या में कोई संवेदना नहीं है, दुविधा नहीं है। उस पाप की कोई सीमा नहीं है भारती, उस विषैली गस से नर हत्या करने में भी उनकी नैतिक बुद्धि बाधा नहीं देती। उद्देश्य सिद्धि के लिए ये लोग किसी भी उपाय को और किसी भी मार्ग को सुपवित्र मानते हैं। नीति की बाधाएं और धर्म के निषेध क्या केवल निर्वासितों और पद दलितों के लिए ही हैं?"

भारती कोई उत्तर न देकर चुप बैठी रही। इन सब अभियोगों का प्रतिवाद करना वह क्या जाने? जो निर्भय है, अत्यन्त दृढ़ चित्त है, शंका-हीन, क्षमाहीन विप्लवी है—जिसके ज्ञान, बुद्धि और पांडित्य का अन्त नहीं है—पराधीनता की अनबुझ आग से जिसका समस्त तन और मन रातदिन दीपशिखा के समान जल रहा है—उसे युक्तियों से परास्त करने का साधन कहां खोजने पर मिलेगा? उसके पास कोई उत्तर नहीं। उसकी भाषा मूक हो रही। लेकिन उसका अकलुष नारी हृदय अन्धी करुणा से सिर धुन कर चुपचाप रोने लगा।

बहुत दिनों से सुमित्रा ने इस प्रकार के वाद-विवाद में भाग लेना बन्द कर दिया था। आज भी वह मुंह झुकाए चुप बैठी रही। केवल कृष्ण अय्यर असहिष्णु हो उठा। आलोचना के अनेक अंश उसकी समझ में नहीं आ रहे थे। इस नीरवता के बीच उसने पूछा, "हमारी सभा का कार्य आरम्भ होने में कितनी देर है?"

डाक्टर बोले, "कुछ देर नहीं। सुमित्रा, क्या तुम्हारा जावा जाना निश्चित है?"

"हां।"

"कब?"

"शायद इसी बुधबार को।"

"पथ के दावेदारों का साथ तुमने छोड़ दिया?"

"हां।"

डाक्टर जरा हंस पड़े। इसके बाद जेब से टेलीग्राम के कई कागज निकालकर सुमित्रा के हाथ नें देकर बोले, "इन्हें पढ़कर देखना। हीरा सिंह कल रात दे गया था।"

अय्यर झुक पड़ा। भारती ने मोमबत्ती उठा ली। तार बहुत लम्बा था। उसकी भाषा अंग्रेजी थी। अर्थ भी स्पष्ट था। लेकिन सुमित्रा का चेहरा गम्भीर हो उठा। दो-तीन मिनट के बाद उसने मुंह ऊपर उठाकर

कहा, "कोड की सभी बातें मुझे याद नहीं हैं। हम लोगों के शंघाई के जैमेका क्लब और क्रूगर ने तार भेजा है। इसके सिवा मैं और कुछ नहीं समझ सकी।"

डाक्टर बोले, "क्रूगर ने तार भेजा है केन्टन से। पुलिस वालों ने बड़े तड़के शंघाई के जैमेका क्लब को घेर लिया था। पुलिस के तीन आदमी और अपना विनोद मारे गए है। दोनों भाई महताब और सूर्य सिंह गिरफ्तार हो गए है। अयोध्या हांगकांग में है। दुर्गा और सुरेश पेनांग में है। सिंगापुर के जैमेका क्लब के लिए पुलिस सारे शहर में तूफान मचाती हुई घूम रही है। कुल समाचार यही है।"

समाचार सुनकर कृष्ण अय्यर का चेहरा पीला पड़ गया।

डाक्टर बोले, "वे दोनों भाई रेजिमेन्ट छोड़कर कब और क्यों शंघाई चले गए—मैं नहीं जानता। सुमित्रा, वास्तव में ब्रजेन्द्र कहां है, जानती हो?"

प्रश्न सुनकर सुमित्रा अवाक हो गई।

"जानती हो?"

पहले तो सुमित्रा के गले से किसी भी तरह की कोई आवाज नहीं निकली, फिर गर्दन हिलाकर बोली, "नहीं।"

कृष्ण अय्यर ने कहा, "वह यह काम कर सकता है—मुझे विश्वास नहीं होता।"

डाक्टर ने 'हां' 'नां' कुछ भी नहीं कहा। चुपचाप बैठे रहे।

मुंह से कोई शब्द नहीं, वाक्य नहीं—सभी मूर्ति के समान चुप बैठे रहे। सामने तार के वे सब कागज पड़े थे। मोमबत्ती जलकर समाप्त हो रही थी। शशि ने दूसरी मोमबत्ती जलाकर फर्श पर रख दी। दस मिनट इसी तरह बीत जाने के बाद पहले अय्यर के शरीर में चेतना के लक्षण दिखाई दिए। उसने अपनी जेब में से सिगरेट निकालकर मोमबत्ती की लौ से सुलगाकर धुएं के साथ लम्बी सांस छोड़ते हुए कहा, "नाउ फिनिश्ड।"

फिर बोला, "वर्स्टलय—वी मस्ट स्टाप।"

शशि बोले "मैं जानता था—कुछ नहीं होगा। केवल···

डाक्टर सुमित्रा की ओर देखकर पूछा, "तुम बुध को जा रही हो?"

सुमित्रा बोली, "हां।"

शशि बोले, "इतनी बड़ी विश्व व्यापी शक्ति के विरुद्ध विप्लव की चेष्टा निष्फल ही नहीं पागलपन है। मैं तो हमेशा से यही कहता आ रहा हूं डाक्टर।"

अय्यर सिर हिलाकर बोला, "ट्रू।"

डाक्टर सहसा सचेत होकर बोले, "आज की हमारी सभा अब समाप्त होती है।"

सभी उठ खड़े हुए। सभी ने अपनी-अपनी राय प्रकट की। केवल भारती चुप रही। वह चुपचाप डाक्टर के पास आकर खड़ी हो गई। फिर उनका दायां हाथ खींचकर वह धीरे-धीरे बोली, "भैया, मुझे बिना बताए कहीं चले तो नहीं जाओगे ?"

डाक्टर चुप रहे। केवल अपनी वज्र जैसी कठोर मुट्ठी में जिस छोटे कोमल हाथ को पकड़ रखा था, उसी को थोड़ा-सा दबाकर बाहर निकल पड़े।

तीस

दूसरे दिन सवेरे ही आकाश में धीरे-धीरे बादल इकट्ठे हो रहे थे। रात को कुछ बूंदा-बांदी भी हुई थी। लेकिन आज दोपहर से वर्षा और हवा का वेग बढ़ गया था।

भारती के कमरे में बैठक हो रही थी। सुमित्रा आराम कुर्सी पर चादर ओढ़े लेटी हुई है। शशि खाट पर झुककर बैठा है। अपूर्व नीचे कम्बल बिछा कर लेटा है। उसी के जलपान की तैयारी में भारती फर्श पर बैठी फल काट रही है।

अपूर्व ने कहा है, संसार में अब उसकी रुचि नहीं है। अब उसके लिए संन्यास ले लेना ही एकमात्र श्रेयस्कर उपाय है। शशि इस प्रस्ताव का अनुमोदन नहीं कर सका। वह युक्तियों से खंडन करते हुए समझा रहा था कि ऐसी बात सोचना उचित नही है। क्योंकि संन्यास में अब कोई मजा नहीं रहा है। बल्कि बारीसाल कालेज में प्रोफेसरी के लिए जो आवेदन पत्र भेजा है, अगर वह स्वीकृत हो जाए तो उसे स्वीकार कर लेना चाहिए।

अपूर्व दुखी हुआ, लेकिन कुछ बोला नहीं। भारती सब कुछ जानती थी। इसलिए उसी ने उत्तर देते हुए कहा, "जीवन में आनन्द करते हुए घूमते रहने के अतिरिक्त क्या मनुष्य के लिए और कोई उद्देश्य नहीं

हो सकता ? शशिबाबू, संसार में सभी की आंखों की दृष्टि एक समान नहीं होती।"

उसके बातचीत करने के ढंग से शशि उदास हो गया।

भारती ने फिर कहा, "उनकी मानसिक स्थिति इस समय अच्छी नहीं है। इस समय उनके भविष्य के कर्त्तव्य पर सोच-विचार करना केवल निष्फल ही नहीं अनुचित भी है। बल्कि इससे तो यही अच्छा होगा कि हम लोग अपनी—!"

"मुझे इसकी याद न थी भारती।"

शशि को याद न रहना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इस बीच अपूर्व के साथ एक घटना और हुई है जिसे भारती के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता था। सांसारिक दृष्टि से उसका फल और परिणाम, मातृ वियोग से विशेष कम नहीं है। मां की मृत्यु का समाचार पाकर अपूर्व के बड़े भाई विनोद बाबू ने तार द्वारा दुख प्रकट किया है। इसके अलावा तार में और कोई भी बात नहीं है। मां ने नाराज होकर सम्भवत: अत्यन्त अपमानित होकर ही अन्त में गंगाविहीन मलेच्छ देश बर्मा में स्वयं को निर्वासित किया था। इस बात को समझकर अपूर्व दुख और क्षोभ से पागल सा हो गया था। उसने जो दो दिन कलकत्ते में बिताए थे उनमें अपने घर पर न तो भोजन किया था और न वहां सोया ही था। और वापस लौटते समय अच्छी तरह झगड़ा करके ही आया था। फिर भी इतनी बड़ी भयंकर दुखद घटना में सबसे छोटा भाई होने के कारण उसे पूरा-पूरा भरोसा था कि उसे ले जाने के लिए घर से कोई न कोई ज़रूर आयेगा। तिवारी घर पर रहता तो क्या होता, कहा नहीं जा सकता। लेकिन वह भी नहीं है। छुट्टी लेकर अपने देश गया है।

सवेरे ही अपूर्व ने भारती से कहा, "बंगाली पुरोहित यहां भी हैं। मैं कलकत्ता नहीं जाऊंगा। जैसे भी होगा मां का श्राद्ध यहीं करूंगा।"

मां के अचानक घर छोड़कर चले आने का कारण लड़कों के प्रति उनका अजेय मान-अभिमान था। यह बात अपूर्व मालूम करके आया था। केवल ईसाई कन्या भारती की कहानी का उसमें कितना अंश सम्मिलित था यह वह नहीं जान पाया था। सांघातिक पीड़ित, लगभग अचेत मां से कुछ कहने का अवसर ही नहीं मिला और विनोद बाबू ने नाराजी के कारण कुछ बताया नहीं।

सहसा सुमित्रा हड़बड़ाकर बोली, "किसी ने नीचे का दरवाज़ा खोला है।"

हवा और वर्षा के लगातार झरझर शब्दों के बीच और कुछ सुनाई

पड़ना कठिन था। आशंका से सभी चौंक पड़े। भारती ने पल भर कान खड़े करके कहा, "नहीं कोई नहीं है।" लेकिन दूसरे ही पल नीचे की सीढ़ी पर पैरों की परिचित आवाज़ सुनकर हर्ष भरे स्वर में चिल्ला उठी। "अरे यह तो भैया हैं। एक हजार दस हजार, बीस हजार, एक लाख वेलकम।" फिर हाथ से फल और हंसिया छोड़कर दौड़ती हुई सीढ़ी के पास जाकर बोली, "एक करोड़, दस करोड़, बीस करोड़, हजार हजार करोड़ गुड ईवनिंग।—भैया, जल्दी आओ—।"

सव्यसाची ने कमरे में प्रवेश करके पीठ का भारी बक्स उतारते हुए हंसकर कहा, "गुड ईवनिंग, गुड ईवनिंग, गुड ईवनिंग।

सव्यसाची के बक्स पर भारती की दृष्टि पड़ी। उद्विग्न शंका से त्रस्त होकर वह बोल उठी, "अच्छा, इस आंधी-पानी में अपने इस सहचर को साथ क्यों लाए हो। बताओ तो? कहीं जा तो नहीं रहे हो। झूठ बोलकर मुझे धोखा न दे सकोगे—यह मैं बता देती हूं भैया।"

डाक्टर ने हंसने की चेष्टा की। लेकिन उसके अपने चेहरे पर हंसी नहीं आई। फिर भी मज़ाक के ढंग से अपनी बात को कुछ हल्की करके कहा, "जाऊं नहीं तो क्या रामदास की तरह गिरफ्तार हो जाऊं?"

शशि बोला, "बात तो ठीक यही है।"

भारती ने क्रुद्ध होकर कहा, "ठीक यही है। आप क्या जानते हैं शशि बाबू—जो अपनी राय प्रकट कर रहे हैं?"

"वाह, मैं क्या नहीं जानता?"

"कुछ भी नहीं।"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "झगड़ा करने से खिचड़ी बिगड़ जाएगी। कल के जहाज से न जाने से तो आप ठीक समय पर न पहुंच सकेंगे अपूर्व बाबू।"

अपूर्व बोला, "मां का श्राद्ध मैं यहीं करूंगा डाक्टर।"

"यहां? इसका कारण?"

अपूर्व मौन रहा, भारती ने भी उत्तर नहीं दिया।

डाक्टर मन-ही मन समझ गए कि कोई घटना ऐसी हो गई है जो खोलकर कही नहीं जा सकती। बोले, "तो इस हालत में वहां लौट जाने की क्या जरूरत है? नौकरी आपकी है न?"

अपूर्व चुप रहा।

शशि बोला, "अपूर्व बाबू संन्यास लेंगे।"

डाक्टर ज़रा हंस कर बोले, "संन्यास! यह कैसी बात है?"

उनकी हंसी से अपूर्व क्षुब्ध हो गया, बोला, "संसार में जिसकी रुचि

नहीं है, जिसका जीवन स्वादहीन हो गया है।—इसके अतिरिक्त उसके लिए और कौन रास्ता है डाक्टर ?"

डाक्टर ने कहा, "ये सब बड़े आध्यात्मिक विषय हैं अपूर्व बाबू। इनमें अनधिकार चर्चा करने के लिए मुझे अब प्रलोभन मत दीजिए। इससे तो अच्छा है कि शशि की राय लीजिए। यह सब कुछ जानता है। स्कूल में फेल होकर यह एक वर्ष तक एक साधू बाबा का चेला रह चुका है।"

शशि इसमें संशोधन करके बोला, "लगभग दो वर्ष।"

सुमित्रा और भारती हंसने लगीं। अपूर्व की गम्भीरता इससे विचलित नहीं हुई। उसने कहा, "मां की मृत्यु के लिए मैं स्वयं को दोषी समझ रहा रहा हूं। डाक्टर, गृहस्थाश्रम में रहने की मुझे आवश्यकता नहीं है। यह मेरे लिए कड़वा फल हो गया है।"

डाक्टर ने पल भर उसके चेहरे की ओर देखकर शायद उसके मन की सच्ची पीड़ा का अनुभव कर लिया। स्नेह भरे कोमल स्वर में बोला, "मनुष्य की इस दशा के बारे में मुझे सोच-विचार करने की कभी आवश्यकता ही नहां पड़ी अपूर्व बाबू। लेकिन सहज बुद्धि से मालूम होता है कि शायद यह भूल होगी। कड़वाहट के बीच ससार छोड़ देने से केवल भाग्य हीन, श्री भ्रष्ट जीवन ही बिताया जा सकता है, लेकिन वैराग्य साधन नहीं होता। करुणा और आनन्द पूर्वक नहीं जीने पर क्या होता है—मैं तो नहीं जानता।"

भारती बोल उठी, "तुम ठीक कहते हो भैया। तुम्हारे मुंह से कभी गलत बात नहीं निकलती। यही सत्य है।"

डाक्टर बोले, "मालूम तो यही होता है। मां मर गईं। वे क्यों आई थीं ? किस कारण आप जाना नहीं चाहते, यह मैं कुछ भी नहीं जानता। लेकिन किसी के आचरण से अगर आपको कटुता मिली हो तो क्या भविष्य में जीवन का एक वही सत्य हो गया और कहीं से अगर अमृत मिला हो तो जीवन में क्या उसका मूल्य ही नहीं देंगे ?"

अपूर्व कहने लगा, "अगर भैया मैं—!"

डाक्टर बोले, "संसार में क्या अपूर्व के भैया विनोद बाबू ही हैं ? भारती के भैया क्या सव्यसाची नहीं है ? उस घर में अगर आपके लिए स्थान न भी हो तो कलकत्ते का वह छोटा-सा मकान ही क्या वामन के विश्वव्यापी पैर नीचे की पृथ्वी है ? संसार में और कहीं क्या आपके लिए स्थान नहीं है ? अपूर्व बाबू, हृदय का आवेग अमूल्य वस्तु है। लेकिन उससे अगर चैतन्य को ढक कर रखा जाए तो उससे बड़ा शत्रु मनुष्य के लिए दूसरा कुछ भी नहीं है।"

अपूर्व बोला, "धर्म की साधना या आत्मा की मुक्ति कामना से तो

मैं संसार छोड़ना नहीं चाहता डाक्टर। अगर छोड़ूंगा तो दूसरों के ही लिए छोड़ूंगा। मुझ पर विश्वास करना आप लोगों के लिए कठिन है। न कभी करें तो दोष देने की कोई बात नहीं है। लेकिन एक दिन जिस अपूर्व को आप लोग जानते थे मां की मृत्यु के बाद अब वह अपूर्व नहीं रहा।"

डाक्टर ने उसका शरीर छूकर कहा, "तुम्हारी बात सच हो।"

अपूर्व ने दृढ़ता भरे स्वर में कहा, "अब से मैं देश के काम में दस आदमियों के काम में, दीन दुखियों के काम में जीवन लगाऊंगा। कलकत्ते में मेरा घर है। शहर में इतना बड़ा हुआ हूं। लेकिन शहर के साथ अब मेरा कुछ नहीं रहा। अब से ग्राम-सेवा ही मेरा एकमात्र व्रत होगा। किसी दिन कृषि प्रधान भारत के गांव ही प्राण थे। आज उनका ध्वंस होता चला जा रहा है। भद्र जाति के लोग उनको छोड़कर शहरों में चले गए हैं। वहीं से वे उन पर दिन रात शासन करते हैं और शोषण करते हैं। इसके सिवा गांवों से उन लोगों ने कोई सम्बन्ध नहीं रखा है। न रखें। लेकिन चिर-काल से जो लोग इस देश के मुख का अन्न और शरीर ढकने के वस्त्र जुटाते आ रहे हैं वे किसान ही आज अन्नहीन, विद्याहीन और निरुपाय होकर मृत्यु पथ पर तेजी से बढ़ते जा रहे हैं। अब से मैं उन्हीं की सेवा में अपना जीवन दूंगा और भारती ने भी जी-जान से हमें सहायता देने का वचन दिया है। गांव-गांव में पाठशालाएं खोलकर उनके बच्चे-बच्चियों को शिक्षित बनाने का भार वे अपने ऊपर लेंगी। मेरा संन्यास देश के लिए है डाक्टर, अपने लिए नहीं।"

डाक्टर ने कहा, "अच्छा प्रस्ताव है।"

उनके मुंह से केवल इन्हीं दो शब्दों के निकलने की आशा किसी ने नहीं की थी। भारती ने उदास होकर कहा, "और एक तरह से सोचा जाए तो यह काम तुम्हारा ही है भैया। इस कृषि प्रधान देश में जब तक किसान बड़े नहीं होते तब तक कुछ भी नहीं हो सकता।"

डाक्टर ने कहा, "मैंने प्रतिवाद तो नहीं किया भारती।"

"तुमने उत्साह भी तो प्रदर्शित नहीं किया भैया।"

डाक्टर ने कहा, "दरिद्र किसानों की भलाई करना चाहो तो करो, मैं तुम लोगों को आशीर्वाद देता हूं। लेकिन यह समझना व्यर्थ है कि तुम हमारे कामों में सहायता कर रहे हो। किसान लोग राजा हो जायें। धन सम्पन्न और श्रीमान हो जायें लेकिन मैं उनसे सहायता की आशा नहीं करता।" —फिर अपूर्व की ओर देखकर उन्होंने कहा, "किसी की भलाई करने के लिए किसी दूसरे पर स्याही डाल ही देनी पड़ेगी। इसका कोई

अर्थ नहीं है। इनके दुख-दैन्य की जड़ में शिक्षित भद्र जाति के लोग नहीं हैं। उसकी जड़ का पता लगाने के लिए तुम्हें किसी दूसरी ओर खोजकर देखना होगा।"

अपूर्व बोला, "आज क्या सभी लोग यही बात नहीं कह रहे हैं?"

"कहने दो! जो गलत है वह तैंतीस करोड़ आदमी मिलकर कहें तो भी गलत ही है। वरना इस शिक्षित भद्र जाति से बढ़कर लांछित, अपमानित, दुर्दशाग्रस्त समाज बंग देश में दूसरा नहीं है। उस पर मिथ्या कलंक का और बोझ लादकर उसे क्यों डुबो देना चाहते हो? क्यों सोचते हो कि विदेशों की सभी युक्तियां और सभी समस्याएं अपने देश में भी लागू हो सकती हैं? बाहर का अनाचार ही जब पल-पल में सर्वनाश लाता चला जा रहा है तब फिर अन्त:विद्रोह की सृष्टि किस लिए करना चाहते हो? देश असन्तोष से भर गया है। स्नेह और श्रद्धा के बन्धन क्यों चूर-चूर हो गए हैं—जानते हो? तुम्हीं दस आदमियों के दोष से, शिक्षितों के विरुद्ध शिक्षितों के आक्रमण से। शशि, एक दिन तुमको भी मैंने यह काम करने का निषेध किया था, याद है? अपने विरुद्ध होने, अपना दुर्नाम घोषित करने में एक निरपेक्ष स्पष्टवादिता का दम्भ है। एक तरह की सस्ती ख्याति भी एक मुंह से दूसरे मुंह तक फैलती चली जाती है। लेकिन यह केवल गलत बात नहीं, झूठ भी है। उन लोगों को हित करना चाहते हो तो जाकर करो। लेकिन एक के विरुद्ध दूसरे को उत्तेजित करके नहीं। दूसरों पर कलंक लगाकर नहीं। विश्व के सामने उसको हास्यास्पद बनाकर नहीं। हो सकता है—वह दिन आ पहुंचे। लेकिन अभी तो उसमें देर है।"

सभी चुप रहे।

भारती ने धीरे-धीरे कहा, "तुम खयाल मत करना भैया। मैं हमेशा से देख रही हूं गांव के प्रति तुम्हारी सहानुभूति कम है। तुम्हारी नज़र केवल शहरों पर ही टिकी रहती है। किसान के प्रति तुम सहृदय नहीं हो। तुम्हारी आंखें केवल कारखानों के मजदूरों पर लगी रहती हैं। इसीलिए तुमने पथ के दावेदार की इन्हीं लोगों के बीच स्थापना की थी। वे ही लोग तुम्हारी आशा हैं, वे ही तुम्हारे अपने हैं। झूठी बात तो नहीं है?"

डाक्टर ने कहा, "झूठ नहीं है बहिन, बिल्कुल सच है। कई बार तो मैं तुमसे कह चुका हूं 'पथ के दावेदार' किसानों की हितकारिणी संस्था नहीं है। वह मेरी स्वाधीनता प्राप्त करने का अस्त्र है। मजदूर और किसान एक नहीं है भारती। इसीलिए तुम मुझे मजदूरों के बीच, कारखानों की बैरेक में पाओगी। लेकिन मुझे गांवों में किसानों की झोंपड़ी में नहीं पाओगी—लेकिन बातों ही बातों में पड़ी रहकर अपना श्रेष्ठ कर्त्तव्य मत

भूल जाना वहिन ! —" फिर स्टोव की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए बोले, "देशोद्धार तो दो दिन बाद होने पर सह लिया जाएगा। लेकिन तैयार खिचड़ी जल गई तो यह दुख सहन नहीं होगा।"

भारती झटपट दौड़ती हुई गई और हांडी का ढक्कन हटा कर देख लेने के बाद हंसती हुई बोली, "डरने की बात नहीं है भैया। आज रात का तुम्हारा खिचड़ी भोग मारा नहीं जाएगा।"

"लेकिन देर कितनी है ?"

"बस पन्द्रह-बीस मिनट—लेकिन इतनी जल्दी क्यों ?"

डाक्टर ने हंसकर कहा, "आज तुम लोगों से विदा लेने आया हूं। बात चाहे जैसी ही क्यों न हो ?"

उनके हंसते हुए चेहरे को देखकर किसी को विश्वास नहीं हुआ। बाहर आंधी-पानी का ठिकाना नहीं था। भारती ने पलभर के लिए खिड़की खोलकर निरीक्षण करने के बाद लौटकर कहा, "बाप-रे-बाप ! आज तो शायद पृथ्वी पलट जाएगी। विदा लेने का समय तो अच्छा है भैया"···तभी उसे दूसरी बात याद आ गई। बोली, "लेकिन आज तुम्हें उसी छोटे कमरे में सोना पड़ेगा। अपने हाथ से बहुत ही सुन्दर ढग से बिछौना बिछा दूंगी।—क्या कहते हो ?" यह कहकर वह अंतर के प्रगाढ़ आनन्द से झूमती रसोई के काम में लग गई।

भोजन तैयार होने पर डाक्टर ने कहा, "भारती, आज हम लोग सभी एक साथ भोजन करेंगे।"

भारती बोली, "ऐसा ही होगा भैया, हम सब एक साथ ही खाएंगे।"

डाक्टर ने कहा, "लेकिन मुझे अपूर्व बाबू नजर लगाकर कहीं हमारे हाज़मे में गड़बड़ी पैदा न कर दें। यह भी उससे कह दो।"

अपूर्व हंस पड़ा। भारती हंसने लगी। बोली, "इसका भय हम लोगों को तो हो सकता है लेकिन तुम्हारे हाज़मे में गड़बड़ी कौन कर सकता है भैया ? उस आग में पहाड़ भी पीसकर डाल दिए जाएं तो भस्म हो जाएंगे। जैसा खाना खाते मैंने देखा है," यह कहकर उस दिन का उनका भोजन याद करके मन-ही-मन सिहर उठी।

खाना आरम्भ हो गया। अन्न-व्यंजन की प्रशंसा और हंसी-मजाक से कमरे का वातावरण पलभर में बदल गया।

जब खाना-पीना बहुत अच्छे वातावरण में चल रहा था, सहसा अपूर्व ने रस भंग कर डाला। "उसने कहा, दो दिन पहले समाचार पत्र में एक शुभ समाचार पढ़ा था डाक्टर ! अगर वह सत्य हो तो आपका विप्लव का प्रयास व्यर्थ हो जाएगा। भारत सरकार ने अपने शासन तन्त्र में अमूल्य

सुधार करने का वचन दिया है।"

शशि ने तुरन्त उत्तर दिया, "झूठी बात है, धोखा है।"

भारती को इस बात पर सही ढंग से विश्वास हो गया हो, ऐसी बात नहीं थीं। लेकिन उसने उद्वेग के साथ कहा, "नहीं, इसमें छल नहीं हो सकता। शशि बाबू, जो लोग लगभग आधी शताब्दी से···नहीं भैया, तुम हंस न सकोगे, यह मैं कहे देती हूं, उनके अथक आन्दोलन का क्या कोई फल नहीं होगा—यही सोचते हो ? विदेशी शासक होने पर भी तो वे लोग आदमी ही हैं। धर्म, ज्ञान और नैतिक बुद्धि उनमें लौट आना असम्भव तो है नहीं।"

शशि ने कहा, "सम्भव है झूठी बात नहीं है।"

अपूर्व बोला, "बहुत से लोगों का यही सन्देह है।"

भारती बोली, "उनका सन्देह झूठा है। भगवान क्या नहीं है ? और शासन पद्धति का परिवर्तन तथा अत्याचार का सुधार—यह सब अगर सचमुच हो जाए तो क्रान्ति का आयोजन और विद्रोह की सृष्टि—ये सभी एक दिन अर्थहीन हो जाएंगे भैया।"

शशि ने कहा, "अवश्य।"

अपूर्व बोला, "निस्संदेह।"

भारती ने डाक्टर के चेहरे की ओर देखकर कहा, "भैया तब तुम अपनी वह भयंकर मूर्ति छोड़कर फिर शान्त मूर्ति धारण कर लोगे न ?—बताओ.?"

डाक्टर घड़ी की ओर देखकर मन ही मन हिसाब लगाकर जैसे अपने आपसे बोले, "अब अधिक देर नहीं है।" इसके बाद भारती को सम्बोधित करके अत्यन्त स्निग्ध स्वर में बोलें, "भारती, मेरी यह भयंकर मूर्ति है यह तो मैं स्वयं ही नहीं जानता। सिर्फ यही जानता हूं कि इस जीवन में मेरे इस रूप में अब परिवर्तन नहीं होगा। और तुम्हारे आदरणीय नेताओं को भय नहीं है बहिन, आज उनको लेकर मजाक करके मन बहलाने का मेरे पास समय नहीं है। और न मन की अवस्था ही इसके अनुकूल है। विदेशी शासन का सुधार क्या है, जी-जान से किए गए आन्दोलनों का वे क्या फल देना चाहते हैं — उसमें कितना असली और कितना नकली है — कितना मिल जाने के बाद शशि की समझ के अनुसार धोखेबाजी नहीं होगी और सम्माननीय नेताओं का रोना बन्द हो जाएगा।—यह सब कुछ भी मैं नहीं जानता। विदेशी सरकार के विरुद्ध आंखें लाल करके जब वे उच्च स्वर से प्रचार करके कहते हैं—हम लोग अब सोए हुए नहीं हैं। जाग गए हैं। हमारे आत्म सम्मान को भारी धक्का लगा है। या तो हमारी बात सुनो

नहीं तो हम वन्दे मातरम् की सौगन्ध खाकर कहते हैं कि तुम लोगों की अधीनता में हम लोग स्वाधीन होंगे।—अवश्य होंगे। देखें किसमें शक्ति है कि इसमें रुकावट डाले?—यह कैसी प्रार्थना है और इसका स्वरूप क्या है, यह बात समझ पाना मेरी बुद्धि के बाहर की बात है। मैं केवल इतना ही जानता हूं कि उनके इस मांगने और पाने के साथ मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है।"

कुछ देर रुककर बोले, "सुधार का अर्थ मरम्मत है परिवर्तन नहीं। भारी बोझ के कारण जो अपराध आज मनुष्य के लिए असहनीय हो उठा है उसे ही सहनीय बना देना। जो यन्त्र बिगड़ रहा है मरम्मत करके उसे अच्छी तरह चालू कर देने का जो कौशल है शायद उसी का नाम शासन सुधार है। एक दिन के लिए भी मैंने इस धोखेबाजी की इच्छा नहीं की। एक दिन के लिए भी मैंने यह नहीं कहा—कि कारागार की चौड़ाई कुछ और बड़ी करके हमें कृतार्थ करो। भारती, मेरी कामना में स्वयं को छलने के लिए अवसर नहीं है। हमारी समस्या की सिद्धि के लिए दो ही मार्ग खुले हैं। एक मृत्यु और दूसरी भारत की स्वाधीनता।

उनकी बातों में नई बात कुछ भी नहीं थी फिर भी मृत्यु और इस भयंकर संकल्प का पुन: उल्लेख होने से भारती के हृदय में आंसू उमड़ के आंखों में छलक उठे। बोली, "लेकिन अकेले क्या करोगे भैया? सभी तो तुम्हें छोड़कर दूर हटते जा रहे हैं?"

डाक्टर बोले, "जाने दो। मेरे देवता तो धोखा नहीं सह सकते।"

भारती के मुंह पर यह बात आ गई कि संसार में सभी धोखेबाज नहीं होता भैया। हृदय पत्थर न हो गया होता तो तुम इस बात को समझ जाते। लेकिन उसने यह बात कही नहीं।

भोजन समाप्त कर, हाथ-मुंह धोकर डाक्टर कुर्सी पर जा बैठे। किसी ने नहीं देखा कि उनकी आंखों की दृष्टि किसी की बड़ी उत्कंठा से प्रतीक्षा करते-करते धीरे-धीरे विक्षुब्ध होती जा रही है और उनका एक कान बहुत देर से सदर दरवाजे पर सतर्क होकर लगा हुआ है। यह कोई भी नहीं जानता था। सड़क के किनारे किसी तरह की आवाज़ सुनाई दी। लेकिन उसकी किसी ने परवाह नहीं की। लेकिन डाक्टर चौंककर उठ खड़े हुए। उन्होंने पूछा, "नीचे अपूर्व का नौकर है न? वह जाग रहा है? ऐ हनुमन्त, ज़रा दरवाज़ा खोल दे।"

कहां, किसके लिए कैसा बिछौना बिछाया जाएगा, भारती सुमित्रा से यही पूछ रही थी। उसने आश्चर्य से मुंह फेरकर पूछा, "किसके लिए भैया? कौन आए हैं?"

डाक्टर ने कहा, "हीरासिंह है। तभी से उसी की बाट देख रहा हूं। बताओ कवि, कुछ अंशों में काव्य-सा सुनाई दिया न ?" कहकर वे हंस पड़े।

भारती बोली, "इस दुर्दिन में अकेले तुम्हारे काव्य की ज्वाला से ही हम लोग संत्रस्त हो रहे हैं। फिर यह भग्नदूत किसलिए ?"

शशि ने कहा, "भग्न दूत तुच्छ नहीं है भारती। वह न होता तो इतने बड़े मेघनाद-वध काव्य की रचना ही नहीं होती।"

"देखूं, ये किस काव्य की रचना करते हैं," यह कहकर भारती ने झांककर देखा। अपूर्व के नौकर के द्वार खोल देने पर जिस व्यक्ति ने प्रवेश किया वह सचमुच ही हीरासिंह है। पलभर बाद उसने ऊपर आकर सबका अभिवादन किया और हाथ जोड़कर सव्यसाची को प्रणाम किया। वह वही सुपरिचित सरकारी वर्दी पहने हुए था। सरकारी चपरास, सरकारी साफा, कमर में तार प्यून वाला चमड़े का बैग—ये सभी भीगकर भारी हो गए थे। उसकी भारी दाढ़ी-मूछों से पानी झर रहा था। बाएं हाथ से उसे निचोड़कर, अपने को हलका करके बोला, "रेडी।"

डाक्टर बोले, "थैंक्यू सरदार जी ! कब आए ?"

"जस्ट नाउ", कहकर एक बार फिर सबका अभिवादन करके नीचे जा ही रहा था कि सभी एक साथ पूछ बैठे, "क्या हुआ सरदार जी, जस्ट नाउ क्या?"

लेकिन अपना कर्तव्य पालन करके हीरासिंह चुपचाप बाहर चला गया। इन लोगों का कौतूहल मिटाने के लिए डाक्टर ने जो कुछ कहा वह संक्षेप में इस प्रकार है—

"हानि और अनिष्ट कितना हुआ है इससे इसका अनुमान लगा पाना कठिन है। शायद काफी हुआ है। लेकिन कितना ही क्यों न हो, दो काम उनको करने ही पड़ेंगे। उनके जैमेका क्लब का जो अंश सिंगापुर में है उसे बचाना ही पड़ेगा। और जहां भी हो, जिस प्रकार भी हो, ब्रजेन्द्र को खोज निकालना पड़ेगा। नदी के दक्षिण में सीरियम के पास एक चीनी जहाज माल लादकर अपने देश को जा रहा है। कल तड़के ही रवाना होगा। उसी में किसी प्रकार एक स्थान मिल गया है। हीरासिंह यही समाचार दे गया है।

यह सुनकर सुमित्रा का चेहरा फीका पड़ गया। सम्भव है ब्रजेन्द्र इस समय सिंगापुर में हो। और जो व्यक्ति उसका पता लगाने गया है उससे उसे परित्राण नहीं मिल सकता। उस समय विश्वासघात पर अन्तिम विचार करने का समय आएगा। इसका दंड क्या होगा—यह बात दल के

किसी भी व्यक्ति से छिपी नहीं है। सुमित्रा भी जानती है। ब्रजेन्द्र उसका कोई भी नहीं है और अगर उसने अपराध कर ही डाला है तो उसे सजा मिलनी ही चाहिए। लेकिन जिस कारण से सुमित्रा ऐसी हो गई वह ब्रजेन्द्र के दंड की बात याद करके नहीं, बल्कि यह कि ब्रजेन्द्र कीड़ा-पतंगा नहीं है। यह आत्म रक्षा करना जानता है। उसकी जेब में केवल पिस्तौल ही छिपी नहीं रहती, उसके समान धूर्त, युक्ति और उपाय से चलने वाला अत्यन्त सावधान व्यक्ति इस संसार में कोई नहीं है। उससे भारी गलती यह हो गई कि वह जाने से पहले इस बात पर निश्चिन्त रूप से विश्वास करके गया है कि डाक्टर पैदल के रास्ते बर्मा छोड़ कर चले गए हैं। अब किसी प्रकार अगर उसे डाक्टर का पता मालूम हो गया तो उसके तूणीर में हत्या करने के जितने भी अस्त्र होंगे उनका प्रयोग करने में वह पलभर के लिए भी नहीं हिचकेगा।

हीरासिंह के शान्त और मृदु दो शब्द—'नाउ' और 'रेडी' उन सबके कानों में हज़ार गुना भीषण होकर हज़ारों ओर से आघात-प्रतिघात करने लगे। भारती को लगा—हीरासिंह मृत्यु दूत की तरह आकर एक पल में ही सब कुछ नष्ट करके चला गया।

शशि बोला, "सब कुछ खाली-सा होता जा रहा है डाक्टर।"

बात सीधी-सी थी। लेकिन सभी की छाती पर उसने चोट की।

शशि बोला, "हंसिए या चाहे जो भी कीजिए, यह बात सच्ची है। आप पास नहीं हैं, इसका ध्यान आते ही लगता है जैसे सब खाली हो गया। लेकिन मैं आपके आदेश के अनुसार ही चलूंगा।"

"जैसे ?"

"जैसे शराब नहीं पीऊंगा—राजनीति में नहीं पड़ूंगा—भारती के पास रहूंगा और कविताएं लिखूंगा।"

डाक्टर ने भारती की ओर एक बार देखा, लेकिन देख न सके। मजाक में पूछा, "किसानों के लिए कविता नहीं लिखोगे कवि ?"

शशि बोला, "नहीं। अपनी कविता वे स्वयं लिख सकें तो लिखें। मैं नहीं लिखूंगा। आपकी इस बात पर मैंने बहुत विचार किया है और वह उपदेश भी कभी नहीं भूलुंगा कि आदर्श के लिए सर्वस्व न्योछावर किया जा सकता है। केवल भद्र सन्तान, अशिक्षित कृषक यह नहीं कर सकते। मैं उन्हीं लोगों का कवि बनूंगा।"

डाक्टर बोले, "वही बन जाना लेकिन यह अन्तिम बात नहीं है कवि। मानव की गति यहीं पर निश्चल नहीं रह जाएगी। किसानों के दिन भी एक दिन लौटेंगे। तब उन्हीं लोगों के हाथों में राष्ट्र के कल्याण-अकल्याण

का भार सौंप देना पड़ेगा।"

शशि बोले, "आ जाएं वे दिन। तब स्वछन्द शान्त चित्त से सारा उत्तरदायित्व उन्हीं के हाथों में सौंपकर हम लोग छुट्टी ले लेंगे। लेकिन आज नहीं। आज आत्म-बलिदान का भारी बोझ वे लोग ढो नहीं पाएंगे।"

डाक्टर उठकर आए और उसके कंधे पर दायां हाथ रख कर चुप खड़े हो गए।

इतनी देर तक अपूर्व चुपचाप बैठा सुन रहा था। इन लोगों की बात-चीत में उसने एक भी बात नहीं कही थी। लेकिन शशि के अन्तिम शब्द उसे बुरे लगे। जिन किसानों के हित के लिए उसने अपना जीवन समर्पित करने का निश्चय किया था उनके विरुद्ध ये सब बातें सुनकर वह क्षुब्ध और असन्तुष्ट हो उठा। और कहने लगा, "शराब पीना बुरा है। बहुत अच्छा हो अगर ये उसे छोड़ दें। काव्य-चर्चा अच्छी है उसे ही करें। लेकिन कृषि-प्रधान भारतवर्ष का कृषक समुदाय इतना तुच्छ और इतनी अवहेलना की वस्तु है क्या? और वे लोग ही अगर खड़े न हो सके तो आपका विप्लव ही कौन करेगा? और करेगा भी क्यों? और पालिटिक्स? मैं ठीक ही कह रहा हूं। डाक्टर किसानों के कल्याण के लिए मैं संन्यास व्रत धारण न करता तो आज स्वदेश की राजनीति ही मेरे जीवन का एक मात्र कर्तव्य हो जाता।"

डाक्टर थोड़ी देर तक उसके मुंह की ओर ताकते रहे। सहसा प्रसन्न हास्य से उनका चेहरा चमक उठा। बोले, "तन और मन से प्रार्थना करता हूं कि तुम्हारा सद-उद्देश्य सफल हो। राजनीतिक क्षेत्र भी उपेक्षा की वस्तु नहीं है। देश और दस आदमियों के कल्याण के लिए ही अगर तुमने वैराग्य ग्रहण किया है तो तुम्हारा किसी से विरोध नहीं होगा। लेकिन सभी लोग सभी कार्यों के योग्य नहीं होते।"

अपूर्व ने स्वीकार करके कहा, "मुझसे अधिक यह शिक्षा और किसे मिली है डाक्टर? आप दया न करते तो बहुत दिन पहले ही इस भ्रम का चरम दंड मुझे मिल गया होता।" यह कहकर पुरानी याद के आघात से ही उसके सारे शरीर के रोंगटे खड़े हो गए।

शशि इस घटना को नहीं जानता था। उसे बताने की आवश्यकता भी किसी ने अनुभव नहीं की। अपूर्व की बात को उसने विचलित विनय और श्रद्धा-भक्ति के प्रदर्शन के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझा। बोला, "भ्रम तो बहुतेरे ही करते हैं लेकिन उनका दंड भोगा करती है अपनी जन्मभूमि। मैं सोचता हू डाक्टर कि आपसे अधिक योग्य व्यक्ति और कौन होगा? किसमें इतना ज्ञान है? जाति और देश कोई भी विषय हो।

राजनीति की समझ किसे है इतनी ? किसको इतनी व्यथा है ? फिर भी यह किसी काम नहीं आया। चीन का आयोजन नष्ट हो गया। पेनांग का चला ही गया। वर्मा का कुछ भी नहीं रहा। सिंगापुर का भी चला जायगा—निश्चय ही है।" सारांश यह है कि आपके इतने दिनों के सभी प्रयास नष्ट हो जाने वाले हैं। केवल प्राण ही शेष हैं वे भी किसी दिन चले जायेंगे। इसका ठिकाना नहीं।"

डाक्टर मुस्कराकर हंस पड़े। शशि ने कहा, "हंसिए या चाहे जो भी कीजिए। यह मैं दिव्य दृष्टि से देख रहा हूं।"

डाक्टर ने पूछा, "दिव्य दृष्टि से तुम कुछ और नहीं देख पाते कवि ?"

शशि ने कहा, "वह भी देख पाता हूं। इसीलिए तो आपको देखते ही तत्काल मालूम हो जाता है कि बिना उपद्रव शान्तिपूर्ण पथ में अगर हम लोगों के जीवन पथ का दरवाजा सुई की नोक भर भी खुला रहता।"

अपूर्व बोल उठा, "वाह, एक ही साथ दो परस्पर विरोधी बातें ?"

सुमित्रा ने हंसी छिपाने के लिए अपना मुंह फेर लिया।

डाक्टर ने हंसते हुए कहा, "इसका कारण यह है अपूर्व बाबू कि इसमें दो सत्ताएं मौजूद हैं। एक शशि की और दूसरी कवि की। इसीलिए सबके मुंह की बात दूसरे के मन की बात को धक्का मारकर ऐसा बेसुरा राग अलापने लगती हैं।" कुछ रुककर बोले, "बहुत से मनुष्यों में इसी प्रकार दूसरी सत्ता छिपी रहती है। उसे सहज ही नहीं पकड़ा जा सकता। इसी लिए मनुष्य की बात और उसके काम में सामंजस्य का अभाव देखते ही उसका कठोर निर्णय कर डालने से उसमें अन्याय की सम्भावना कम नहीं रहती, अधिक रहती है। अपूर्व बाबू, मैंने तुमको पहचान लिया था लेकिन सुमित्रा नहीं पहचान सकी थी। भारती, जीवन यात्रा के बीच अगर तुम ऐसी ही कोई चोट खाओ तो अपने इस परलोक गत भाई की बात मत भूल जाना। लेकिन अब मैं जा रहा हूं। मेरी नाव घाट पर बंधी हुई है। भाटे के समय न चल पड़ने पर मैं सवेरे जहाज नहीं पकड़ पाऊंगा।"

भारती आशंका से व्याकुल हो उठी, "इस भयंकर नदी में ? इस भीषण तूफानी रात में ?"

उसके व्याकुल कंठ स्वर से सुमित्रा के आत्मसंयम का सुदृढ़ बांध टूट गया। उसने फीके चेहरे से पूछा, "क्या तुम सचमुच ही सिंगापुर जा रहे हो ? यह काम तुम कभी मत करना डाक्टर। वहां की पुलिस तुम्हें अच्छी तरह पहचानती है। इस बार उसके हाथ से तुम किसी प्रकार भी—"

बात समाप्त नहीं हुई थी कि तभी उत्तर मिला, "पुलिस वाले क्या

मुझे यहां नहीं पहचानते सुमित्रा ?"

सुमित्रा चुप हो गई। जिस बात के बाहर निकल पड़ने की व्याकुलता के कारण, इतने दिनों से वह सिर धुनकर मर रही थी यही बात उसके मुंह से अन्धे आवेश में निकल पड़ी, "केवल एक बार—डाक्टर—इसी एक बार के लिए तुम मेरे ऊपर निर्भर होकर देखो कि मैं तुमको सुरवाया ले जा सकती हू या नहीं ? इसके सिवा रुपए से क्या नहीं होता, बताओ ?"

डाक्टर जूते का फीता बांध रहे थे। बांध चुकने पर मुंह उठा कर बोले, "रुपए से बहुत काम होते हैं सुमित्रा। उन्हें फिजूल खर्च नहीं करना चाहिए।"

सभी जान गए कि यह बातचीत व्यर्थ है। उपायहीन वेदना से अपना हृदय भरकर सुमित्रा आंसू भरी आंखों के साथ दूसरी ओर मुंह फेरकर रह गई।

भारती बोली, "मुझे अथाह सागर में बहाकर तुम जा रहे हो भैया। फिर भी बार-बार तुम मुझसे कहते थे—केवल मुझ पर ही नहीं मेरी उम्र की जितनी भी लड़कियां यहां हैं उन पर तुम्हारा बड़ा लोभ है, सभी को तुम अत्यन्त प्यार करते हो। वह क्या यही प्यार है ?"

डाक्टर ने समर्थन करते हुए कहा, "सचमुच ही प्यार करता हूं भारती। लड़कियों पर मेरा कितना लोभ है ? कितना भरोसा है—यह तुम लोगों को बताने का मुझे कभी अवसर ही नहीं मिला। लेकिन अगर मुझ से वह न हो सका तो अपने इस भैया की ओर से यह सब उनको बता देना बहिन।"

भारती एकाएक रोने लगी और बोली, "यह बताऊंगी कि तुम केवल हम लोगों की बलि देना चाहते हो।"

डाक्टर ने पल भर उसके चेहरे की ओर देखकर कहा, "अच्छा यही बात कह देना। बंगलादेश की एक भी लड़की अगर इसका अर्थ समझ जाए तो मैं उसी से धन्य हो जाऊँगा।" यह कहकर उन्होंने अपना भारी बक्स कन्धे पर उठा लिया। उनके पीछे-पीछे सभी लोग नीचे उतर आए। भारती ने अन्तिम चेष्टा करके कहा, "जिसका देश का आयोजन विफल हो जाता है भैया, विदेश के आयोजन से उनका क्या होता है ? जो लोग अन्तरंग सुहृद थे वे एक-एक करके छोड़कर चले गए तो क्या तुम एकदम निस्संग—एकदम अकेले हो ?"

डाक्टर ने स्वीकार करके कहा, "ठीक यही बात है। लेकिन आरम्भ भी तो अकेले ही किया था भारती। और विदेश में। लेकिन भगवान ने

इतनी कृपा की कि मनुष्य को—अपनी इच्छानुसार छोटी-बड़ी दीवारें बनाकर, अपनी पृथ्वी को हजारों कारागारों में परिवर्तित कर डालने का कोई उपाय नहीं रखा है। उत्तर से दक्षिण और पूरब से पश्चिम—जितनी दूर तक दृष्टि जाती है विधाता का राजमार्ग एकदम खुला हुआ है। उसको अवरुद्ध कर रखने का षड्यन्त्र मनुष्य की पहुंच के बाहर की बात हो गई है। अब तो एक छोर का अग्निकांड दूसरे छोर तकसीचनगारियां उड़ा ही ले आयेगा। भारती—वह तांडव देश-विदेश की सीमा नहीं मानेगा।"

लेकिन इधर रुद्र के सच्चे तांडव ने कमरे के बाहर उस समय कैसी भयंकर मूर्ति धारण कर ली थी—अन्दर रहकर इसका किसी को खयाल ही नहीं था। बिजली की चमक, मूसालधार वर्षा, तूफानी हवा और वज्रपात—मानो एकदम प्रबल रूप में आरम्भ हो गया था।

डाक्टर ने किवाड़ की चटकनी ज्यों ही खोली एकाएक वर्षा की तेज बौछार भीतर आ घुसी जिससे सभी भीग गए। बत्ती बुझ गई। सभी चीजें उलट-पुलट गई और पलक झपकते घर और बाहर सब कुछ अंधकार से एकाकार हो गया।

डाक्टर ने पुकारा, "सरदार जी।"

बाहर से आवाज आई, "येस डाक्टर, रेडी।"

सभी चौंक पड़े। इस असहनीय हवा और मूसलाधार वर्षा को माथे पर रोककर कोई भी मनुष्य इस सूची भेद्य, घोर अन्धकार में बाहर खड़े रहकर निश्चल, निःशब्द भाव से पहरे पर तैनात रह सकता है—इस बात की अचानक कोई कल्पना भी नहीं कर सका।

डाक्टर रहस्यपूर्ण स्वर में बोले, "तो अब मैं जाता हूं।" यह कहकर डाक्टर ने ज्यों ही बाहर की ओर कदम बढ़ाया त्यों ही अपूर्व व्यग्र-व्याकुल कंठ से बोल उठा, "एक दिन मुझे आपसे जो जीवन दान मिला था, यह बात मैं हमेशा याद रखूंगा डाक्टर।"

अंधेरे में उत्तर आया, "जीवनदान मिल जाने को ही तुमने बड़ा बना देखा अपूर्व बाबू ? जिससे वह मिला था उसे तो तुमने याद ही नहीं रखा।"

अपूर्व ने चिल्लाकर कहा, "क्यों ? इस जीवन में मैं उसे भी नहीं भूलूंगा। इस ऋण को मैं मरते दम तक—!"

दूर अंधेरे में से उत्तर आया," ऐसा ही हो। भगवान से प्रार्थना करता हूं कि तुम एक दिन अपने सच्चे प्राणदाता को पहचान सको अपूर्व बाबू।

उस दिन यह सव्यसाची का ऋण—!"

इस बात का अन्तिम अंश सुनाई नहीं पड़ा। अस्फुट ध्वनि—हवा के झोंके से आकाश में उड़ गई। उसके बाद थोड़ी देर के लिए मानो किसी को कुछ होश नहीं रहा। अचेत, जड़ मूर्ति की तरह कुछ पल तक निश्चल रहकर भारती सहसा चौंक उठी और तेजी से ऊपर जाने लगी। उसके पीछे-पीछे और सब लोग दौड़ते हुए चले गए।

उसने खिड़की खोली और जितनी भी दूर तक निगाह जा सकती थी अंधेरे में अपनी अपलक आंखों से टकटकी लगाए देखती रही। इसी तरह काफी देर बीत गई।

सहसा भीषण कड़कड़ाहट के साथ ही शायद कहीं पास ही बिजली गिरी और उसकी ही चमचमाती हुई विद्युत शिखा में केवल पलभर के लिए आकाश और धरातल को उद्भासित करके एक बार डाक्टर के अन्तिम दर्शन करा दिए।

इस भयानक समय में मकान से बाहर निकलकर इन लोगों की गति-विधि पर नजर रखने का पागलपन शायद किसी भी पुलिस कर्मचारी में नहीं था। फिर भी बड़ी सड़क को छोड़कर मैदान के दक्षिणी छोर से घूमकर दोनों धीरे-धीरे चलने लगे। बीच-बीच से झाड़-झंखाड़ और कंटीले पौधों का बना टेढ़ा मार्ग मिलता गया। इस सूची भेद्य अंधकार में कीचड़ भरे पथहीन पथ से एक पथिक भारी बोझ अपने ऊपर लाद लेने के कारण कुछ झुककर सावधानी से बढ़ता चला जा रहा है। और दूसरा—अपनी पगड़ी पर वर्षा के प्रचंड वेग को सहता हुआ यथासम्भव अपने सिर को बचाकर उसका अनुसरण कर रहा है।

पलभर बाद सब लुप्त था। केवल घोर अंधकार ही शेष रह गया।

अचानक एक गहरी सांस लेकर शशि ने कहा, "दुर्दिन के मित्र सरदार जी तुम्हें नमस्कार।"

उसी समय सहसा अपूर्व ने भी अपने दोनों उठाकर सरदार को लक्ष्य करके नमस्कार किया। लगा जैसे उसके हृदय का एक बोझ उतर गया हो।

भारती उसी प्रकार पत्थर की मूर्ति के समान अंधेरे में ताकती हुई खड़ी रह गई। शशि की बात भी जैसे उसके कानों में नहीं पहुंची। वैसे ही वह यह भी नहीं समझ सकी कि ठीक उसी की तरह एक नारी की आंखों से भी आंसुओं की धारा प्रवाहित हो रही है।

डा० डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय
5952

C39.833
329